साहित्य अमृत

वैशाख-ज्येष्ठ, संवत्-२०८१ ❖ मई २०२४ **मासिक**

वर्ष-२९ ❖ अंक-१० ❖ पृष्ठ ८४ यू.जी.सी.-केयर लिस्ट में उल्लिखित RNI No. 62112/95 ISSN 2455-1171

संस्थापक संपादक

पं. विद्यानिवास मिश्र

निवर्तमान संपादक

डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

श्री त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

संस्थापक संपादक (प्रबंध)

श्री श्यामसुंदर

प्रबंध संपादक

पीयूष कुमार

संपादक

लक्ष्मी शंकर वाजपेयी

संयुक्त संपादक

डॉ. हेमंत कुकरेती

उप संपादक

उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी'

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-०२

फोन : ०११-२३२८९७७७

०८४४८६१२२६९

इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

शुल्क

एक अंक—₹ ३०

वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००

वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००

विदेश में

एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)

वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

साहित्य अमृत के बैंक खाते का विवरण

बैंक ऑफ इंडिया

खाता सं. : **600120110001052**

IFSC : **BKID0006001**

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी पीयूष कुमार द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं न्यू प्रिंट इंडिया प्रा.लि., ८/४-बी, साहिबाबाद इंडस्ट्रियल एरिया, साइट-IV, गाजियाबाद-२०१०१० द्वारा मुद्रित।

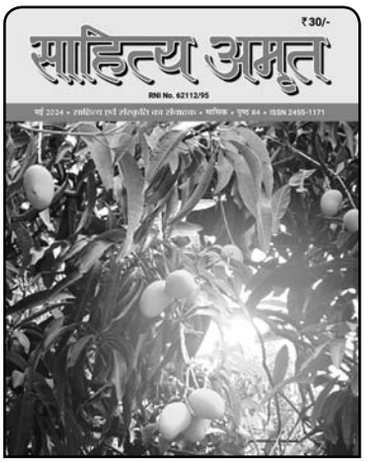

इस अंक में

✍ **संपादकीय**

मानव जीवन से बढ़कर क्या? ४

✍ **प्रतिस्मृति**

यही मेरा वतन/ *प्रेमचंद* ६

✍ **कहानी**

कायाकल्प/ *भगवान अटलानी* ९

गांधारी का प्रायश्चित्त/ *विनोद बब्बर* १६

थपेड़े-दर-थपेड़े/ *विष्णु भट्ट* ३०

ज्योतिर्मयी/ *संजय कुमार मालवीय* ६०

धार्मिकता की शिकार/ *रामेश्वर महादेव वाढेकर* ७६

✍ **लघुकथा**

सत्य शुचि ५६

✍ **आलेख**

लोकसंस्कृति में तीर्थयात्रा की परंपरा/ *सुमन चौरे* १२

राम और रामराज्य की प्रासंगिकता/ *रसाल सिंह* १९

कोलकाता : पत्रकारिता की गंगोत्तरी/ *ऊषा निगम* ३६

हिंदी कहानियों में वर्णित वृद्ध जीवन/ *राहिला रईस* ४८

आदिवासी भील जनजाति के लोगों की आस्था एवं विश्वास/ *छत्रसिंग काल्या तडवी* ६६

✍ **कविता**

समय जीता है हमेशा/ *अमृता पांडे* ८

सूखी नदी के प्यासे ओठ/ *बी.एल. आच्छा* १८

मरघट के मैदान में/ *श्रीराम मीना* २९

गजल सरा/ *भरत दीप माथुर* ४१

दूब और गेहूँ का मामा/ *सूर्य प्रकाश मिश्र* ६३

दोहे/ *सुबोध श्रीवास्तव* ६९

जिंदगी का कायदा/ *नवीन माथुर पंचोली* ७३

✍ **रम्य रचना**

सात के सप्त रंग/ *उमाशंकर चतुर्वेदी* २२

✍ **लोक-साहित्य**

भोजपुरी लोकगीतों में मानवीय संवेदना/ *ऋता शुक्ल* २६

✍ **राम झरोखे बैठ के**

वर्तमान में उल्लू का महत्त्व/ *गोपाल चतुर्वेदी* ३८

✍ **ललित-निबंध**

परिक्रमा : आत्मनिवेदन की यात्रा/ *श्रीराम परिहार* ४२

✍ **स्मरण**

लेखनी के तपस्वी साधक : आनंद मिश्र 'अभय'/ *विजय कुमार* ४७

✍ **साहित्य का भारतीय परिपार्श्व**

काली टोपी/ *पोनकुन्नम वर्की* ५३

✍ **व्यंग्य**

प्यादों की शहादत/ *शशिकांत सिंह 'शशि'* ५८

✍ **साहित्य का विश्व परिपार्श्व**

संगीतकार के रूप में बूढ़े एंड्रे का अनुभव/ *थॉमस हार्डी* ६४

✍ **यात्रा-वृत्तांत**

लेह-लद्दाख : बौद्ध संस्कृति का सुरम्य देस/ *अंजूषा सिंह* ७०

✍ **बाल-संसार**

एक अच्छा सबक/ *दिनेश प्रताप सिंह 'चित्रेश'* ७४

✍ **वर्ग-पहेली** ७९

✍ **पाठकों की प्रतिक्रियाएँ** ८०

✍ **साहित्यिक गतिविधियाँ** ८१

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

मानव जीवन से बढ़कर क्या?

हर आम चुनाव में राजनीतिक दल एक घोषणा-पत्र जारी करते हैं। इस घोषणा-पत्र को अलग-अलग नाम दिए जाते हैं, जिसमें एक राजनीतिक दल यह घोषित करता है कि यदि उसकी सरकार बनी तो वह क्या-क्या कार्य करेगी, कैसी-कैसी योजनाएँ लाएगी, कैसे विविध समस्याओं का समाधान करेगी आदि-आदि। इन घोषणा-पत्रों में आमतौर पर हर क्षेत्र के संबंध में कुछ-न-कुछ दावे या वादे अवश्य किए जाते हैं। स्वाभाविक है कि ये घोषणा-पत्र बहुत आकर्षक प्रतिज्ञाएँ करते हैं कि इन पर चर्चा हो तथा मतदाता घोषणा-पत्र में किए गए वादों से प्रभावित होकर उस दल विशेष के पक्ष में मतदान करें। इन घोषणा-पत्रों में जितनी प्रतिज्ञाएँ होती हैं, आश्वासन दिए जाते हैं, सब्जबाग दिखाए जाते हैं, सरकार बनने के बाद उनका कितना क्रियान्वयन हो पाता है, वह एक अलग चर्चा का विषय है। इतना अवश्य है कि कुछ ऐसी चुनौतियाँ, ऐसी समस्याएँ हैं, ऐसे गंभीर प्रश्न हैं, जिन पर राजनीतिक दलों का ध्यान बहुत कम जाता है या वे प्राथमिकता की परिधि में नहीं आ पाते। ऐसा ही एक अत्यंत गंभीर विषय है—'मानव जीवन की रक्षा।' तुलसीदासजी की चौपाई का स्मरण संत या कथावाचक बार-बार करते हैं 'बड़े भाग मानुष तन पावा,' ताकि कथा सुनने वाले अच्छे मनुष्य बनें। यह भी कहा जाता है कि चौरासी लाख योनियों के बाद मनुष्य जन्म मिलता है। सड़कों पर 'मानव जीवन अनमोल है' के बड़े-बड़े साइनबोर्ड भी आपने देखे होंगे; किंतु इससे बड़ी विडंबना क्या होगी कि मात्र सड़क दुर्घटनाओं में सन् २०२२ में एक लाख नब्बे हजार से अधिक लोग मारे गए। इनमें बच्चे, बूढ़े, युवा—सभी थे। घायल होने के बाद अपाहिज होने वालों की संख्या मृतकों की संख्या से कम भयावह नहीं होती।

पिछले दिनों हरियाणा में स्कूल बस के पलटने से कई बच्चे काल-कवलित हो गए। लोगों ने दु:ख व्यक्त कर दिया, कविताएँ सोशल मीडिया पर पोस्ट कर दीं, लेकिन उन परिवारों की व्यथा पर विचार करिए, जिनके आँगन जरा सी लापरवाही से सूने हो गए। इन सड़क दुर्घटनाओं में देश की जानी-मानी हस्तियाँ भी जान गँवा चुकी हैं। प्रतिवर्ष जितने लोग सड़क दुर्घटनाओं में मारे जाते हैं, उतने पाँच युद्धों में भी नहीं मारे गए। एक लाख नब्बे हजार की संख्या पर गहराई से विचार करें तो छोटे-छोटे देशों, जैसे नौरू की आबादी लगभग १३ हजार है, या सैन मरीनो की २४ हजार है, तो कुछ देशों की कुल जनसंख्या के बराबर लोग तो भारत में एक वर्ष में सड़कों पर ही दम तोड़ देते हैं। यह भी दु:खद है कि बरसों पहले आकाशवाणी के राष्ट्रीय कार्यक्रम में प्रसारित एक डॉक्यूमेंट्री के अतिरिक्त इस विषय पर कभी मीडिया का ध्यान नहीं गया, कुछ अपवाद हों तो हों। सर्वाधिक दु:खद पहलू यह है कि इन सड़क दुर्घटनाओं को समुचित व्यवस्थाओं से रोका जा सकता है, कम किया जा सकता है। एक उदाहरण से समझें तो मेट्रो रेल में जो व्यवस्था है, उसके कारण बिना टिकट यात्रा करना संभव नहीं है। हम प्रतिवर्ष 'यातायात सप्ताह' मनाकर ही संतुष्ट हो जाते हैं, जबकि सड़क दुर्घटनाओं में होने वाली मौतें रोकने के लिए एक व्यापक परिवर्तन की आवश्यकता होगी। इन व्यवस्थाओं में ड्राइविंग लाइसेंस जारी करने से लेकर सड़कों की संरचना, पुलों की संरचना, यातायात नियंत्रण, नशे में गाड़ी चलाना या तेज रफ्तार में गाड़ी चलाने पर नियंत्रण से लेकर अनेकानेक उपाय करने होंगे। भारत की राजधानी में 'रेड लाइन' नाम की बस सेवा के कारण ही पाँच सौ से अधिक लोग मारे गए; कारण थे—बसों की बनावट (चढ़ने-उतरने की सीढ़ियाँ) से लेकर अधिक मुनाफे के लिए बसों की आपसी होड़ आदि। गत वर्ष कितने लोग रेलवे फाटकों के न होने से मारे गए। मुंबई की लोकल ट्रेनों में बाहर लटककर यात्रा करने वाले कितने ही यात्री काल के गाल में समा गए। यहाँ उल्लेखनीय है कि एक यूरोपीय देश ने सन् २००० तक सड़क दुर्घटनाओं को लगभग शून्य के स्तर पर लाने का संकल्प लिया तथा हर स्तर पर आवश्यक सुधार किए, नई व्यवस्थाएँ लागू कीं और सन् २००० तक अपने लक्ष्य को प्राप्त भी कर लिया। अब वहाँ सड़क दुर्घटनाएँ अपवाद हो गई हैं। भारत में भी सरकारें संकल्प करके हर स्तर पर आवश्यक सुधार करें एवं नई व्यवस्थाएँ लागू करें तो निश्चय ही अनमोल जीवन बचाए जा सकेंगे। साथ ही इन सड़क दुर्घटनाओं के कारण देश को हजारों करोड़ रुपयों की जो क्षति होती है, वह भी बचेगी तथा विकास कार्यों में लगेगी।

सड़क दुर्घटनाओं के अलावा भी भारत में अकाल मौतों के अनेक कारण हैं। इनमें घातक बीमारियों में समुचित इलाज न मिल पाने से लेकर ऐसे-ऐसे कारण भी हैं, जिनके संबंध में एक देश और सभ्य समाज के नाते हमें लज्जित होना चाहिए। भारत की राजधानी में एक पिता अपने पुत्र को विद्यालय लेकर जा रहा है···अचानक एक आवारा पशु सड़क पर पिता के ऊपर आक्रमण कर देता है और वह वहीं दम तोड़ देता है। बेचारा बेटा प्रयास अवश्य करता है, किंतु जीवन भर के

लिए इस त्रासदी की भयावह स्मृतियों के साथ जीने को अभिशप्त हो जाता है। दूसरे दृश्य में, एक नगर में नगरपालिका वाले या वन विभाग वाले एक बहुत ऊँचा पेड़ गिरा रहे हैं, पर आसपास के घरों को कोई चेतावनी नहीं दी गई; पेड़ गलत दिशा में गिर जाता है और घर के बाहर बेटे के स्कूल से लौटने की प्रतीक्षा कर रहे माता-पिता वहीं दम तोड़ देते हैं, घर भी क्षतिग्रस्त हो जाता है। इंटरनेट युग में ऐसी घटनाओं के वीडियो भारत का सम्मान नहीं बढ़ाते। ऐसी घटनाएँ अपवाद भी नहीं हैं; हर दिन ऐसी अनेक घटनाएँ घटती हैं, जिनमें प्रशासन की लापरवाही मुख्य कारण होती है। कितने सफाई कर्मचारियों ने सीवर की सफाई के समय जहरीली गैस से दम तोड़ दिया। कितने लोग मैनहोल का ढक्कन न होने से या खुला गड्ढा छोड़ देने से मारे जाते हैं। बिजली के टूटे तार से लेकर इतनी लापरवाहियाँ हैं कि गिना पाना कठिन है। इस तरह की लापरवाहियों के शिकार हुए परिवारों ने भले ही इसे 'होनी को कौन टाल सकता है' मान कर संतोष कर लिया हो, किंतु इस तरह की मौतें बहुत आसानी से रोकी जा सकती हैं।

अनमोल जीवन की रक्षा के संदर्भ में एक और दु:खद पहलू आत्महत्याओं का है। सरकारी आँकड़ों के अनुसार, वर्ष २०२२ में एक लाख इकहत्तर हजार लोगों ने आत्महत्या की—फिर वही ५-६ छोटे देशों की कुल जनसंख्या से अधिक। इन आत्महत्याओं का सबसे दु:खद पहलू है आर्थिक तंगी के कारण पूरे परिवार द्वारा सामूहिक आत्महत्या। उन माँ-बाप की विवशता सोचिए, जो अपने हाथों से अपने ही बच्चों को विष पिलाते हैं, फिर स्वयं आत्महत्या करते हैं। कितना हृदयविदारक है यह! साथ ही किसी छात्र या छात्रा का कम अंकों के कारण या बेरोजगार युवक का आत्महत्या करना कितना पीड़ादायक है! भयावह प्रतिद्वंद्विता के कारण कोटा नगर से लगभग हर माह मिलती आत्महत्याओं की खबरें दिल दहला देती हैं। आत्महत्या स्वयं में ही ईश्वर के सौंपे मानवजीवन रूपी वरदान का अपमान है। आत्महत्याओं के संदर्भ में भारत में पहले से बनी-बनाई सारी धारणाएँ ध्वस्त हो चुकी हैं। अब हर उम्र के, हर आर्थिक स्तर के लोग आत्महत्याएँ कर रहे हैं। आत्महत्याओं के कुछ कारण तो ऐसे हैं, जो भारत के अलावा दुनिया के किसी देश में नहीं हो सकते। उदाहरण के लिए, जबलपुर इंजीनियरिंग कॉलेज का अपने माता-पिता का इकलौता बेटा अच्छी अंग्रेजी न आने के कारण आत्महत्या कर लेता है। इसी प्रकार इंदौर की एक छात्रा अंग्रेजी का परचा बिगड़ जाने के कारण कम नंबरों की आशंका के चलते आत्महत्या कर लेती है। परंतु परीक्षाफल आने पर अंक आते हैं बयासी। क्या फ्रांस के किसी छात्र ने आत्महत्या की कि उसे जर्मन भाषा अच्छी नहीं आती?

आत्महत्याओं के संदर्भ में एक चौंकाने वाला तथ्य यह है कि पंचानबे प्रतिशत आत्महत्याओं को रोका जा सकता है, यदि वह 'क्षण' जब व्यक्ति अपनी जान लेने पर उतारू हो, टाला जा सके। सिर्फ सौ में से पाँच ही ऐसे केस संभव हैं, जिनमें बचना कठिन हो।

विशेषज्ञों की यह मान्यता पूरी तरह सही है, जो मात्र इन दो उदाहरणों से स्पष्ट हो जाएगी—एक बच्चा अपने खाने-पीने की विचित्र आदतों के कारण आए दिन डाँट खाता था तथा पीटा भी जाता था। वह काँच के टुकड़े खा लेता, आलपिन या कील खाता···या इसी तरह की अन्य चीजें···। मारपीट के बावजूद उसकी आदतें नहीं सुधरीं तथा किशोरावस्था आने पर एक दिन मारपीट से तंग आकर उसने आत्महत्या का इरादा कर लिया और रेल की पटरी पर जाकर लेट गया।

गाड़ी आने में देर थी, सो कुछ देर बाद उसका ध्यान पटरी पर लगे नट-बोल्ट पर गया और वह उन्हें खाने के इरादे से खोलने का प्रयास करने लगा। गनीमत है कि परिवार वाले उसे खोजते हुए वहाँ पहुँच गए और वह सकुशल घर लौट आया। मारपीट का सिलसिला थम गया। आगे चलकर यही किशोर जगह-जगह आलपिन खाने, ट्यूबलाइट खाने आदि का प्रदर्शन करने लगा और भारत के विभिन्न नगरों के अलावा कई देशों में गया और एक बहुत बड़ी शख्सियत बन गया। इसी प्रकार गाँव का एक व्यक्ति बेहद निराशा के पलों में रेलगाड़ी की पटरियों पर आत्महत्या के इरादे से जाकर लेट गया। दूर कहीं से रेडियो से गाना बज रहा था—

गाड़ी का नाम, मत कर बदनाम
पटरी पे रख के सर को
हिम्मत न हार, कर इंतजार
आ लौट जाएँ घर को··
वो रात जा रही है
वो सुबह आ रही है।

वह व्यक्ति पटरी से उठ गया, कुछ देर में रेलगाड़ी सामने से गुजरकर चली गई। वह घर लौट आया और आगे चलकर सफल किसान बना। यहीं सवाल उठता है कि क्या कृषि-प्रधान देश में आजादी के बाद लाखों किसानों की आत्महत्याएँ रोकी नहीं जा सकतीं? सामाजिक सुरक्षा योजनाओं तथा अन्य व्यवस्थाओं से तथा समुचित सरकारी हस्तक्षेप से आत्महत्याओं की विशाल संख्या को काफी कम किया जा सकता है। यदि हर प्रकार से होने वाली अकाल मौतों को जोड़ा जाए तो यह आँकड़ा बेहद दर्दनाक बन जाता है। क्या यह प्रश्न अनुचित है कि नदियों, पेड़ों, मूर्तियों को पूजने वाले भारत में मानवजीवन के प्रति इतनी उपेक्षा का भाव क्यों? क्या राजनीतिक दल तथा सरकारें अकाल मौतों की रोकथाम को प्राथमिकता देंगी? यदि मानवजीवन अनमोल है तो फिर उसकी अकारण होने वाली क्षति रोकी जानी चाहिए।

(लक्ष्मी शंकर वाजपेयी)

यही मेरा वतन

● प्रेमचंद

आज पूरे साठ बरस के बाद मुझे अपने वतन, प्यारे वतन का दर्शन फिर नसीब हुआ। जिस वक्त मैं अपने प्यारे देश से विदा हुआ और किस्मत मुझे पश्चिम की तरफ ले चली, मेरी उठती जवानी थी। मेरी रगों में ताजा खून दौड़ता था और सीना उमंगों और बड़े-बड़े इरादों से भरा हुआ था। मुझे प्यारे हिंदुस्तान से किसी जालिम की सख्तियों और इनसाफ के जबरदस्त हाथों ने अलग नहीं किया था। नहीं, जालिम का जुल्म और कानून की सख्तियाँ मुझसे जो चाहें करा सकती हैं, मगर मेरा वतन मुझसे नहीं छुड़ा सकतीं। यह मेरे बुलंद इरादे और बड़े-बड़े मंसूबे थे, जिन्होंने मुझे देश निकाला दिया। मैंने अमरीका में खूब व्यापार किया, खूब दौलत कमाई और खूब ऐश किए। भाग्य से बीवी भी ऐसी पाई, जो अपने रूप में बेजोड़ थी, जिसकी खूबसूरती की चर्चा सारे अमरीका में फैली हुई थी और जिसके दिल में किसी ऐसे खयाल की गुंजाइश भी न थी, जिसका मुझसे संबंध न हो। मैं उस पर दिलोजान से न्योछावर था और वह मेरे लिए सबकुछ थी। मेरे पाँच बेटे हुए, सुंदर, हृष्ट-पुष्ट और नेक, जिन्होंने व्यापार को और भी चमकाया और जिनके भोले, नन्हे बच्चे उस वक्त मेरी गोद में बैठे हुए थे, जब मैंने प्यारी मातृभूमि का अंतिम दर्शन करने के लिए कदम उठाया। मैंने बेशुमार दौलत, वफादार बीवी, सपूत बेटे और प्यारे-प्यारे जिगर के टुकड़े, ऐसी-ऐसी अनमोल नेमतें छोड़ दीं। इसलिए कि प्यारी भारतमाता का अंतिम दर्शन कर लूँ। मैं बहुत बुड्ढा हो गया था। दस और हों तो पूरे सौ बरस का हो जाऊँ और अब अगर मेरे दिल में कोई आरजू बाकी है तो यही कि अपने देश की खाक में मिल जाऊँ। यह आरजू कुछ आज ही मेरे मन में पैदा नहीं हुई है, उस वक्त भी थी, जब कि मेरी बीवी अपनी मीठी बातों और नाजुक अदाओं से मेरा दिल खुश किया करती थी। जबकि मेरे नौजवान बेटे सवेरे आकर अपने बूढ़े बाप को अदब से सलाम करते थे, उस वक्त भी मेरे जिगर में एक काँटा-सा खटकता था और वह काँटा यह था कि मैं यहाँ अपने देश से निर्वासित हूँ। यह देश मेरा नहीं है, मैं इस देश का नहीं हूँ। धन मेरा था, बीवी मेरी थी, लड़के मेरे थे और जायदादें मेरी थीं, मगर जाने क्यों मुझे रह-रहकर अपनी मातृभूमि के टूटे-फूटे झोंपड़े, चार-छह बीघा मौरूसी जमीन और बचपन के लँगोटिया यारों की याद सताया करती थी और अकसर खुशियों की धूमधाम में भी यह खयाल चुटकी लिया करता कि काश अपने देश में होता!

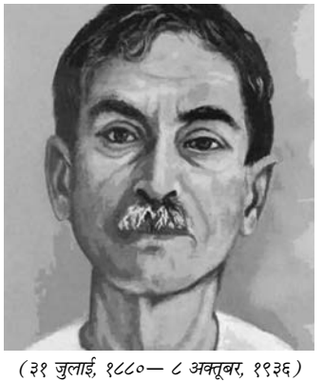

(३१ जुलाई, १८८०— ८ अक्तूबर, १९३६)

मगर जिस वक्त बंबई में जहाज से उतरा और काले कोट-पतलून पहने, टूटी-फूटी अंग्रेजी बोलते मल्लाह देखे, फिर अंग्रेजी दुकानें, ट्रामवे और मोटर-गाड़ियाँ नजर आईं, फिर रबड़वाले पहियों और मुँह में चुरुट दाबे आदमियों से मुठभेड़ हुई, फिर रेल का स्टेशन और रेल पर सवार होकर अपने गाँव को चला, प्यारे गाँव को, जो हरी-भरी पहाड़ियों के बीच में आबाद था, तो मेरी आँखों में आँसू भर आए। मैं खूब रोया, क्योंकि यह मेरा प्यारा देश न था, यह वह देश न था, जिसके दर्शन की लालसा हमेशा मेरे दिल में लहरें लिया करती थी। यह कोई और देश था। यह अमरीका था, इंग्लिस्तान था, मगर प्यारा भारत नहीं।

रेलगाड़ी जंगलों, पहाड़ों, नदियों और मैदानों को पार करके मेरे प्यारे गाँव के पास पहुँची, जो किसी जमाने में फूल-पत्तों की बहुतायत और नदी-नालों की प्रचुरता में स्वर्ग से होड़ करता था। मैं गाड़ी से उतरा तो मेरा दिल बाँसों उछल रहा था—अब अपना प्यारा घर देखूँगा, अपने बचपन के प्यारे साथियों से मिलूँगा। मुझे उस वक्त यह बिल्कुल याद न रहा कि मैं नब्बे बरस का बूढ़ा आदमी हूँ। ज्यों-ज्यों मैं गाँव के पास पहुँचता था, मेरे कदम जल्द-जल्द उठते थे और दिल में एक ऐसी खुशी लहरें मार रही थी, जिसे बयान नहीं किया जा सकता। हर चीज पर आँखें फाड़-फाड़कर निगाह डालता—अहा, यह वो नाला है, जिसमें हम रोज घोड़े नहलाते और खुद गोते लगाते थे, मगर अब इसके दोनों तरफ काँटेदार तारों की चहारदीवारी खिंची हुई थी और सामने एक बँगला था, जिसमें दो-तीन अंग्रेज बंदूकें लिये इधर-उधर ताक रहे थे। नाले में नहाने या नहलाने की सख्त मनाही थी। गाँव में गया और आँखें बचपन के साथियों को ढूँढ़ने लगीं, मगर अफसोस वह सब-के-सब मौत का निवाला बन चुके थे और मेरा टूटा-फूटा झोंपड़ा, जिसकी गोद में बरसों तक खेला था, जहाँ बचपन और बेफिक्रियों के मजे लूटे थे, जिसका नक्शा अभी तक आँखों में फिर रहा है, वह अब मिट्टी का एक ढेर बन गया था। जगह गैर-आबाद न थी। सैकड़ों आदमी चलते-फिरते नजर आए, जो अदालत और कलक्टरी और थाने-पुलिस की बातें कर रहे थे। उनके चेहरे बेजान और फिक्र में डूबे हुए थे और वह सब दुनिया की परेशानियों से टूटे हुए मालूम होते थे। मेरे साथियों के से हृष्ट-पुष्ट, सुंदर, गोरे-चिट्टे नौजवान कहीं न दिखाई दिए। वह अखाड़ा जिसकी मेरे हाथों ने बुनियाद डाली थी, वहाँ अब एक टूटा-फूटा स्कूल था और उसमें गिनती के बीमार शक्ल-सूरत के बच्चे जिनके चेहरों पर भूख लिखी थी, चिथड़े लगाए बैठे ऊँघ रहे थे। नहीं, यह मेरा देश नहीं है। यह

देश देखने के लिए मैं इतनी दूर से नहीं आया। यह कोई और देश है, मेरा प्यारा देश नहीं है।

उस बरगद के पेड़ की तरफ दौड़ा, जिसकी सुहानी छाया में हमने बचपन के मजे लूटे थे, जो हमारे बचपन का हिंडोला और जवानी की आरामगाह था। इस प्यारे बरगद को देखते ही रोना-सा आने लगा और ऐसी हसरतभरी, तड़पानेवाली और दर्दनाक यादें ताजी हो गईं कि घंटों जमीन पर बैठकर रोता रहा। यही प्यारा बरगद है, जिसकी फुनगियों पर हम चढ़ जाते थे, जिसकी जटाएँ हमारा झूला थीं और जिसके फल हमें सारी दुनिया की मिठाइयों से ज्यादा मजेदार और मीठे मालूम होते थे। वह मेरे गले में बाँहें डालकर खेलनेवाले हमजोली जो कभी रूठते थे, कभी मनाते थे, वह कहाँ गए? आह, मैं बेघरबार मुसाफिर क्या अब अकेला हूँ? क्या मेरा कोई साथी नहीं। इस बरगद के पास अब थाना और पेड़ के नीचे एक कुरसी पर कोई लाल पगड़ी बाँधे बैठा हुआ था। उसके आस-पास दस-बीस और लाल पगड़ीवाले हाथ बाँधे खड़े थे और एक अधनंगा अकाल का मारा आदमी, जिस पर अभी-अभी चाबुकों की बौछार हुई थी, पड़ा सिसक रहा था। मुझे खयाल आया, यह मेरा प्यारा देश नहीं है, यह कोई और देश है, यह यूरोप है, अमरीका है, मगर मेरा प्यारा देश नहीं है, हरगिज नहीं।

इधर से निराश होकर मैं उस चौपाल की ओर चला, जहाँ शाम को पिताजी गाँव के और बड़े-बूढ़ों के साथ हुक्का पीते और हँसी-दिल्लगी करते थे। हम भी उस टाट पर कलाबाजियाँ खाया करते। कभी-कभी वहाँ पंचायत भी बैठती थी, जिसके सरपंच हमेशा पिताजी ही होते थे। इसी चौपाल से लगी हुई एक गौशाला थी। जहाँ गाँव भर की गायें रखी जाती थीं और हम यहीं बछड़ों के साथ कुलेलें किया करते थे। अफसोस, अब इस चौपाल का पता न था। वहाँ अब गाँव के टीका लगाने का स्टेशन और एक डाकखाना था। उन दिनों इसी चौपाल से लगा हुआ एक कोल्हाड़ा था, जहाँ जाड़े के दिनों में ऊख पेरी जाती थी और गुड़ की महक से दिमाग तर हो जाता था। हम और हमारे हमजोली घंटों गँडेरियों के इंतजार में बैठे रहते थे और गँडेरियाँ काटनेवाले मजदूरों के हाथों की तेजी पर अचरज करते थे, जहाँ सैकड़ों बार मैंने कच्चा रस और पक्का दूध मिलाकर पिया था। यहाँ आस-पास के घरों से औरतें और बच्चे अपने-अपने घड़े लेकर आते और उन्हें रस से भरवाकर ले जाते। अफसोस, वह कोल्हू अभी ज्यों-के-त्यों गड़े हुए हैं, मगर देखो, कोल्हाड़े की जगह पर अब एक सन् लपेटने वाली मशीन है और उसके सामने एक तंबोली और सिगरेट की दुकान है। इन दिल को छलनी करनेवाले दृश्यों से दुःखी होकर, मैंने एक आदमी से जो सूरत से शरीफ नजर आता था, कहा, "बाबा, मैं परदेशी मुसाफिर हूँ, रातभर पड़े रहने के लिए मुझे जगह दे दो।" इस आदमी ने मुझे सिर से पैर तक घूरकर देखा और बोला, "आगे जाओ, यहाँ जगह नहीं है।" मैं आगे गया और यहाँ से फिर हुक्म मिला, "आगे जाओ।" पाँचवीं बार सवाल करने पर एक साहब ने मुट्ठी भर चने मेरे हाथ पर रख दिए। चने मेरे हाथ से छूटकर गिर पड़े और आँखों से आँसू बहने लगे। हाय, यह मेरा प्यारा देश नहीं है, यह कोई और देश है। यह हमारा मेहमान और मुसाफिर की आवभगत करनेवाला प्यारा देश नहीं, हरगिज नहीं।

उस बरगद के पेड़ की तरफ दौड़ा, जिसकी सुहानी छाया में हमने बचपन के मजे लूटे थे, जो हमारे बचपन का हिंडोला और जवानी की आरामगाह था। इस प्यारे बरगद को देखते ही रोना-सा आने लगा और ऐसी हसरतभरी, तड़पानेवाली और दर्दनाक यादें ताजी हो गईं कि घंटों जमीन पर बैठकर रोता रहा। यही प्यारा बरगद है, जिसकी फुनगियों पर हम चढ़ जाते थे, जिसकी जटाएँ हमारा झूला थीं और जिसके फल हमें सारी दुनिया की मिठाइयों से ज्यादा मजेदार और मीठे मालूम होते थे। वह मेरे गले में बाँहें डालकर खेलनेवाले हमजोली जो कभी रूठते थे, कभी मनाते थे, वह कहाँ गए?

मैंने एक सिगरेट की डिबिया ली और एक सुनसान जगह पर बैठकर बीते दिनों की याद करने लगा कि यकायक मुझे उस धर्मशाला का खयाल आया, जो मेरे परदेश जाते वक्त बन रहा था। मैं उधर की तरफ लपका कि रात किसी तरह वहीं काटूँ, मगर अफसोस, हाय अफसोस, धर्मशाला की इमारत ज्यों-की-त्यों थी, लेकिन उसमें गरीब मुसाफिरों के रहने के लिए जगह न थी। शराब और शराबखोरी, जुआ और बदचलनी का वहाँ अड्डा था। यह हालत देखकर बरबस दिल से एक ठंडी आह निकली, मैं जोर से चीख उठा—नहीं-नहीं और हजार बार नहीं, यह मेरा वतन, मेरा प्यारा देश, मेरा प्यारा भारत नहीं है। यह कोई और देश है। यह यूरोप है, अमरीका है, मगर भारत हरगिज नहीं।

अँधेरी रात थी। गीदड़ और कुत्ते अपने राग अलाप रहे थे। मैं दर्द भरा दिल लिये उसी नाले के किनारे जाकर बैठ गया और सोचने लगा कि अब क्या करूँ? क्या फिर अपने प्यारे बच्चों के पास लौट जाऊँ और अपनी नामुराद मिट्टी अमरीका की खाक में मिलाऊँ? अब तो मेरा कोई वतन न था, पहले मैं वतन से अलग जरूर था, मगर प्यारे वतन की याद दिल में बनी हुई थी। अब बेवतन हूँ, मेरा कोई वतन नहीं। इसी सोच-विचार में बहुत देर तक चुपचाप घुटनों में सिर दिए बैठा रहा। रात आँखों-ही-आँखों में कट गई, घड़ियाल ने तीन बजाए और किसी के गाने की आवाज कानों में आई। दिल ने गुदगुदाया, यह तो वतन का नग्मा है, अपने देश का राग है। मैं झट उठ खड़ा हुआ। क्या देखता हूँ कि पंद्रह-बीस औरतें, बूढ़ी, कमजोर, सफेद धोतियाँ पहने, हाथों में लोटे लिये स्नान को जा रही हैं और गाती जाती हैं—

"प्रभु, मेरे अवगुन चित न धरो"

इस मादक और तड़पा देनेवाले राग से मेरे दिल की जो हालत हुई उसका बयान करना, मुश्किल है। मैंने अमरीका की चंचल-से-चंचल, हँसमुख-से-हँसमुख सुंदरियों की अलाप सुनी थी और उनकी जबानों से मुहब्बत और प्यार के बोल सुने थे, जो मोहक गीतों से भी ज्यादा मीठे थे। मैंने प्यारे बच्चों के अधूरे बोलों और तोतली बानी का आनंद उठाया था। मैंने सुरीली चिड़ियों का चहचहाना सुना था। मगर जो लुत्फ, जो मजा, जो आनंद मुझे इस गीत में आया, वह जिंदगी में कभी और हासिल न हुआ था। मैंने खुद गुनगुनाना शुरू किया—

"प्रभु, मेरे अवगुन चित न धरो"

तन्मय हो रहा था कि फिर मुझे बहुत से आदमियों की बोलचाल सुनाई पड़ी और कुछ लोग हाथों में पीतल के कमंडल लिये शिव-शिव, हर-हर, गंगे-गंगे, नारायण-नारायण कहते हुए दिखाई दिए। मेरे दिल ने, फिर गुद्‌गुदाया, यह तो मेरे देश प्यारे देश की बातें हैं। मारे खुशी के दिल बाग-बाग हो गया। मैं इन आदमियों के साथ हो लिया और एक, दो, तीन, चार, पाँच, छह मील पहाड़ी रास्ता पार करने के बाद हम उस नदी के किनारे पहुँचे, जिसका नाम पवित्र है, जिसकी लहरों में डुबकी लगाना और जिसकी गोद में मरना हर हिंदू सबसे बड़ा पुण्य समझता है। गंगा मेरे प्यारे गाँव से छह-सात मील पर बहती थी और किसी जमाने में सुबह के वक्त घोड़े पर चढ़कर गंगा माता के दर्शन को आया करता था। उनके दर्शन की कामना मेरे दिल में हमेशा थी। यहाँ मैंने हजारों आदमियों को इस सर्द, ठिठुरते हुए पानी में डुबकी लगाते देखा। कुछ लोग बालू पर बैठे गायत्री मंत्र जप रहे थे। कुछ लोग हवन करने में लगे हुए थे। कुछ लोग माथे पर टीके लगा रहे थे। कुछ और लोग वेदमंत्र सस्वर पढ़ रहे थे। मेरे दिल ने फिर गुद्‌गुदाया और मैं जोर से कह उठा—"हाँ-हाँ, यही मेरा देश है, यही मेरा प्यारा वतन है, यही मेरा भारत है। और इसी के दर्शन की, इसी की मिट्‌टी में मिल जाने की आरजू मेरे दिल में थी।"

मैं खुशी में पागल हो रहा था। मैंने अपना पुराना कोट और पतलून उतार फेंका और जाकर गंगा माता की गोद में गिर पड़ा, जैसे कोई नासमझ, भोला-भाला बच्चा दिनभर पराए लोगों के साथ रहने के बाद शाम को अपनी प्यारी माँ की गोद में दौड़कर चला आए, उसकी छाती से चिपट जाए। हाँ, अब अपने देश में हूँ। यह मेरा प्यारा वतन है, यह लोग मेरे भाई, गंगा मेरी माता है।

मैंने ठीक गंगाजी के किनारे एक छोटी सी झोंपड़ी बनवा ली है और अब मुझे सिवाय रामनाम जपने के और कोई काम नहीं। मैं रोज शाम-सवेरे गंगा-स्नान करता हूँ और यह मेरी लालसा है कि इसी जगह मेरा दम निकले और मेरी हड्डियाँ गंगामाता की लहरों की भेंट चढ़ें।

मेरे लड़के और मेरी बीवी मुझे बार-बार बुलाते हैं, मगर अब मैं यह गंगा का किनारा और यह प्यारा देश छोड़कर वहाँ नहीं जा सकता। मैं अपनी मिट्‌टी गंगाजी को सौंपूँगा। अब दुनिया की कोई इच्छा, कोई आकांक्षा मुझे यहाँ से नहीं हटा सकती, क्योंकि यह मेरा प्यारा देश, मेरी प्यारी मातृभूमि है और मेरी लालसा है कि मैं अपने देश में मरूँ।

साअ

समय जीता है हमेशा

कविता

● अमृता पांडे

किस्से किताबों के

कभी-कभी ही क्यों? रोज पढ़ी जाएँ किताबें
थक चुकी हैं ये बंद पड़ी-पड़ी अलमारियों में
कभी दीमक की चोट सहतीं, कभी सीलन की मार
ये भी चाहती हैं खुली हवा में साँस लेना
हाथों में सजना और दिल-दिमाग का दर्पण बनना,

जीने का सामान होती हैं किताबें
खोजी हर एक दिल का अरमान होती है किताबें
ले जाती है पल भर में दूरदराज हमें
कभी हरी-भरी वादियों में, कभी कंक्रीट के जंगलों में
विविधा दिशाओं में चलायमान होती हैं किताबें,

तनहाई में डूबे मन का सुकून हैं ये
ज्ञान का असीम अनछुआ भंडार
मनोरंजन और रचनात्मकता का अबूझ संसार
गीता, रामायण, कुरान, बाइबल
गुरु ग्रंथ साहिब का दरबार होती है किताबें,

कितने-कितने किरदारों को ढोती हैं अपने भीतर
भले-बुरे की पहचान होती हैं
कितने जज्बात, भावनाओं के तार जोड़े रखती हैं
कल से आज और आज से कल तक की
सुंदर तसवीर होती है किताबें,

इनसान से कहीं ज्यादा समझदार होती हैं
आंटी पड़ी रहती हैं दराजों में, पुरानी अलमारियों में
बेनूरी का डर सताता है इन्हें भी रह-रहकर
बेहतरीन होती हैं तो बेशक खुद को पढ़वा लेती हैं
वरना इनसान की बेदिली पर चुपचाप
मुसकराती हैं किताबें।

समय रथ

मैंने रोकना चाहा था
समय का रथ
पर रोक न पाई
उसके पहिए मजबूत थे
कैकेयी का सा साहस
नहीं था मेरी उँगली में
चलते रथ को रोक लेने का
और रुके हुए रथ को गति देने का।
न कृष्ण के जैसा बल था
जिसने थाम लिया था
गोवर्धन पर्वत को
खेल-ही-खेल में अपनी अंगुली में।

मैं कमजोर पड़ गई थी
समय के साथ चलने का
साहस नहीं था मुझमें
मैंने बार-बार समय से
लोहा लेने का प्रयत्न किया
पर हर बार पटखनी खाई।

समय अपनी गति से बढ़ता गया
बिना किसी अतिरेक के
समय जीता है हमेशा
इनसान हारा है।

साअ

जे.के.पुरम्, ई २१
छोटी मुखानी, हल्द्वानी
जिला नैनीताल-२६३१३९ (उत्तराखंड)
दूरभाष : ७९८३९३००५४

कायाकल्प

• भगवान अटलानी

मूर्धन्य लेखक। हिंदी में तेरह, सिंधी में आठ, स्वयं अनूदित तीन, अन्य भाषाई लेखकों द्वारा अनूदित छह, कुल तीस पुस्तकें तथा १२०० से अधिक रचनाएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। २५० से अधिक कार्यक्रम आकाशवाणी से प्रसारित। अकादमियों, सरकारी व गैर-सरकारी संस्थाओं से ३५ पुरस्कार और ५० से अधिक सम्मान प्राप्त।

क्या अंतर्मुखी होना इसी को कहते हैं? उसे कुछ समय से चलने में कठिनाई हो रही है। पिंडलियों और जंघाओं में दर्द होता है चलते समय। चाल और रफ्तार दोनों पहले जैसी नहीं रही हैं। दिनचर्या में इस परेशानी के कारण कोई परिवर्तन क्योंकि नहीं हुआ है, मगर घर में किसी का ध्यान इस ओर नहीं गया और न उसने घर के किसी सदस्य से इसकी चर्चा की है। पत्नी भी इसमें शामिल है।

पार्क में यथापूर्व प्रात: भ्रमण के लिए जाता है। चाल में अंतर होता है, लेकिन वर्षों से देखने और साथ भ्रमण करने वालों में से किसी ने नहीं टोका। उसने भी किसी से बातचीत में इस परेशानी के बारे में कुछ नहीं कहा है। चलते समय लड़खड़ाहट का आभास होता है, कदम सीधे नहीं पड़ते। थोड़ा-बहुत तिरछापन आ जाता है। किसी का ध्यान नहीं गया। बस उसे महसूस होता है, इसलिए थोड़ा सँभलकर चलता है। जिस रफ्तार से घूमता था उससे चलना न संभव रहा है और न जिद करके उसी रफ्तार से चलने की कोशिश करता है। स्वाभाविक है कि कदम जिस तेजी से पड़ते थे, उनमें अंतर आया है। किसी साथ घूमने वाले ने महसूस नहीं किया। वह खामोश रहा है इस विषय पर।

क्या अंतर्मुखी होना इसी को कहते हैं?

जो मिल गया, खा लिया। जितना थाली में रखा गया, खा लिया। कम हो तो माँगा नहीं, ज्यादा हो तो छोड़ा नहीं। नमक अधिक या कम हुआ सब्जी में तो कुछ नहीं कहा। बर्दाश्त से ज्यादा मिर्च डाले गए हों, सीसी भले ही कर ले या आँसू भले ही बहा ले, मगर कहता नहीं है कुछ भी।

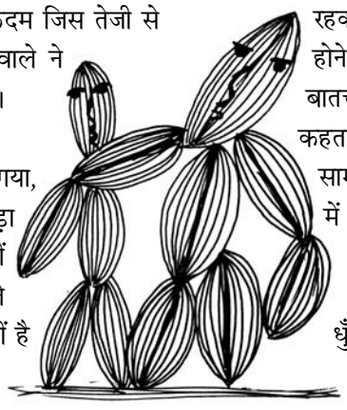

पहले हंगामा करता था। भोजन वहीं छोड़ देता था। रूठकर घर से निकल जाता था। जब तक मनाया नहीं जाता था, भूखा रहता था। भोजन करने से मना करने के कारण घर का वातावरण तनावपूर्ण हो जाता था। उसका योगदान केवल किसी-न-किसी शिकायत को लेकर माहौल बिगाड़ने में होता था। मान-मनौवल के बाद सामान्य भले ही हो जाए, किंतु हँसी-मजाक करके घर का वातावरण खुशनुमा बनाने की दिशा में कुछ नहीं करता था। भले ही कम बोलता है, फिर भी तनाव का कारण नहीं बनता है। अगर कोई मजाक करता है या गुदगुदाने वाली बात करता है तो मुसकरा देता है। बच्चे अठखेलियाँ करते हैं या बालसुलभ अनमेल बातें करते हैं तो मुसकराहट अधिक चौड़ी हो जाती है। विस्मित करने के इरादे से अचानक कुछ करते हैं, घर में और चौंकने का प्रसंग बनता है तो हल्के से हँस देता है। लंबे समय के बाद मनचाहा व्यक्ति मिलता है या घर आता है तो चेहरा खुशी से खिल उठता है। भले ही उसके साथ पहले की तरह खुलकर दु:ख-सुख न बाँटे, मगर उदासीन रहकर उसे कभी अपने बदल जाने का तिलमात्र भी आभास होने नहीं देता है। घुल-मिलकर उसके साथ न बैठता है, न बातचीत करता है। प्रसंग बना या कोई हल्की-फुल्की बात कहता है या चुटकुला सुनाता है तो ठहाका भरकर हँसता है। सामान्यत: अपने आप में गुम रहता है। हाँ का जवाब 'हाँ' में और नहीं का जवाब 'नहीं' में देता है।

क्या अंतर्मुखी होना इसी को कहते हैं?

एक आँख दृष्टिशून्य हो गई है। दूसरी आँख से धुँधला दिखाई देता है। पाँच फुट दूर खड़े आदमी का चेहरा पहचानना भी संभव नहीं रहा है। सीढ़ियाँ उतरते या चढ़ते समय पहली या अंतिम सीढ़ी को पाँव रगड़कर समझना पड़ता है। धूप चुभती है। धूप की चमक रही-सही दृष्टि भी छीन लेती है। काला चश्मा लगाकर धूप में निकलता है तो पहचानने की क्षमता घटकर दो-तीन फुट रह जाती है। इस परेशानी का जिक्र किसी से नहीं करता है। अपने ढंग से जैसा बन पड़ता है, करता है। सामान्यत: टालता है। केवल जरूरत पड़ने पर बाहर निकलता है। अकेला जाना पड़े तो चला जाता है। साथ जाता है, तब भी किसी का सहारा नहीं लेता है। अगर कोई हाथ पकड़ने की सहृदयता दिखाता है तो मुसकराहट के साथ धन्यवाद

देकर इनकार कर देता है। आग्रहपूर्वक परिवार का कोई युवा सदस्य हाथ पकड़ता है या सहारा देता है तो उसकी अवहेलना नहीं करता है। कोशिश जरूर रहती है कि हाथ इस तरह पकड़े कि दर्शक को वह सहारे की जगह सहयोग प्रतीत हो। अच्छा तो लगता है इस तरह अगर कोई हाथ पकड़ता है या सहारा देता है, किंतु उसे या किसी और को कहता नहीं है इस बारे में कुछ। हाँ, धन्यवाद जरूर देता है सारे प्रकरण के अंत में। अपनी जरूरत या कष्ट किसी से बाँटना तो दूर, उसका संकेत भी नहीं देता है। अपने स्तर पर खुद को सँभालने, झेलने या सहने का प्रयास सचेष्ट भाव से करता है। घर के सदस्यों को पता नहीं लगता, क्योंकि उनके सामने रोने-गाने वाली बात आती ही नहीं है, मगर बाहर का कोई जहीन आदमी अगर पहचान लेता है और पूछता है तो टाल जाता है, बताता नहीं है। पीछे पड़ जाए कोई, ऐसा सभ्य समाज में होता नहीं है। अंदर एक मथनी चलती रहती है, शोर-शराबा किए बिना। मुद्रा, चेहरा, हाव-भाव सबकुछ एक शून्य से घिरा होता है, जिसे भेदना या पढ़ना शायद ही संभव हो पाता है किसी के लिए।

क्या अंतर्मुखी होना इसी को कहते हैं?

घर में शादी है। परिवार का हर एक सदस्य नए कपड़े सिलवा रहा है। विवाह नवंबर में है। इसलिए सभी पुरुष गरम सूट सिलवा रहे हैं। अलग-अलग आयोजनों के लिए, ड्रैस कोड के अनुसार जुदा-जुदा वस्त्र सिलवा रहे हैं। पहले से भले ही ढेरों परिधान अलमारियों में हों, मगर घर में विवाह है तो नए ही सिलेंगे कपड़े। उसने इस दिशा में कोई रुचि नहीं ली। पूछा गया तो मना कर दिया। वार्डरोब भरा हुआ है। चार-चार सूट हैं। इस जखीरे का क्या करना है, उसका एक ही जवाब था सबको। कहा जरूर, जिद या आग्रह नहीं किया किसी ने। सहजता से बात मान ली। यदि आग्रह अधिक होता या आदेशनुमा अनुरोध किया जाता तो वह कोई दलील नहीं देता। चुपचाप मान लेता और जो-जैसे कपड़े कहे जाते, सिलवा लेता। किसी की ओर से पुरजोर आग्रह नहीं हुआ तो उसने भी कुछ नहीं किया। सच यह है कि कपड़े नए सिलवाए या नहीं, किसी ने दबाव डाला या नहीं, एक तरह से गौण अनुभव होता था। आग्रह होता तो अच्छा लगता, नहीं हुआ तो खराब लगा, यह मन:स्थिति बिल्कुल नहीं थी। कर लिया ठीक। नहीं किया तब भी ठीक। नए कपड़े सिल जाते तो खुशी महसूस नहीं होती। नहीं बने तो गम का अहसास नहीं हुआ। विवाह के किसी समारोह में उसके पहने कपड़े किसी को खराब लगे हों, मौके के अनुरूप न लगे हों, चुभे हों या अप्रिय लगे हों, ऐसा नहीं हुआ। आजकल सब सामने कहने से बचते हैं। ध्यान से देंखेगे तो उनकी नजरें, उनके हाव-भाव और उनकी देह की भाषा बहुत कुछ कह रही होती हैं। उसमें भी उसके पहने कपड़ों के प्रति कोई टिप्पणी या संकेत नहीं था।

इसके विपरीत दो-एक लोगों ने तो तारीफ की। झूठी तारीफ नहीं कर रहे हैं, उनकी आँखें यह बात साफ तौर पर बोल रही थीं। सरलता और सहजता से अवसरानुकूल पहने गए कपड़ों जैसी टिप्पणी सुनकर उसे वार्डरोब का दम घोंटने से परहेज करने जैसी अपनी मानसिक तटस्थता अच्छी लगी। सुखद लगना अपनी जगह, मगर नए कपड़े आए तो क्या होगा, न आए तो क्या होगा वाली मनोभूमि को क्या कहेंगे? लालच छोड़कर निस्पृहता की स्थिति को कौन सी संज्ञा देंगे? तटस्थता, कामना से विरक्ति और भविष्य के आतंक से मुक्ति क्या अंतर्मुखी व्यक्ति की पहचान के अनिवार्य लक्षण हैं?

क्या अंतर्मुखी होना इसी को कहते हैं।

दोपहर का समय है। बिस्तर पर लेटा हुआ है। चादर को बदन पर डाल लिया है। अधलेटी सी पत्नी डबल बैड के दूसरे पलंग पर लेटी मोबाइल पर कुछ तेज आवाज में सुन रही है। देख रही है, वह सोने की तैयारी में है, मगर उनका मोबाइल बोलता जा रहा है और उनको परवाह नहीं है। पुराना 'वह' होता तो चिल्लाने लगता, बुरी तरह नाराजगी जाहिर करता। अब कुछ नहीं कर रहा है। आँखें बंद करके, करवट लेकर सोने की कोशिश करता है।

रात के ग्यारह बजे हैं। कमरे में बिजली की भरपूर चमक है। पत्नी को पता है, उसे रोशनी में नींद नहीं आती है। मगर उसके बिस्तर पर लेट जाने की परवाह किए बिना वे किताब पढ़ने में तल्लीन हैं। सामान्यत: तुरंत नींद आ जाती है। आज कुछ रोशनी और कुछ अवहेलना का दंश उसकी नींद का चीरहरण कर रहा है। जुबान बंद है। अब विवाद या कलह से डरता है और पहले उलझ जाता था, ऐसा नहीं है। मानसिकता बदल गई है। इसलिए अप्रिय लगने के बावजूद मौन रहता है। पत्नी उसमें आए इस परिवर्तन को समझ चुकी हैं। इसलिए जैसा ठीक लगता है, करती हैं। कभी-कभी सोचता है, क्यों परिवर्तन आया है उसकी मन:स्थिति में? क्यों कुछ कठोर बोलने या अपनी चलाने की इच्छा नहीं होती? यहाँ तक कि उचित को कराने के लिए भी क्यों अब वह मानसिक रूप से तैयार नहीं कर पाता है अपने आपको?

जानता है, गलत करने वाले से अधिक बड़ा दोषी गलत को बर्दाश्त करने वाला होता है। इसके बावजूद, जानते-समझते गलत को बर्दाश्त करता है। खुद गलत करने से सख्ती से बचता है। लाभ हो या हानि, आज भी अनुचित राह पर कदम कभी नहीं बढ़ाता है। पहले अतिरेक और अन्याय को सहन करना उसके स्वभाव में नहीं था। खुलकर और डटकर विरोध करता था उसका। अब चुप रह जाता है। उसकी आँखों के सामने, उसके देखते-देखते वह सबकुछ हो रहा होता है, जो नहीं होना चाहिए। वह आँखें बंद कर लेता है। जब स्वयं के साथ होने वाले अवांछित के प्रति दृष्टि बदल गई है तो दूसरों के बारे में मुखर होने का प्रश्न ही कहाँ उठता है? अपने साथ, निकटवर्तियों के साथ, अन्यों के साथ जब कुछ गलत हो रहा होता है और वह मौन रह जाता है तो इसे किस बात का संकेत मानना चाहिए?

क्या अंतर्मुखी होना इसी को कहते हैं?

जीवन भर समय का बहुत पाबंद रहा है। निर्धारित समय पर कहीं न जाना उसे बेचैन करता है। तयशुदा समय पर सूचना दिए बिना किसी का न आना उसका जायका खराब करता है। किसी शादी में रात को आठ बजे के बाद आने का समय छपा है निमंत्रण पत्र में। आपस में तय किया कि साढ़े आठ बजे घर से निकलेंगे। पत्नी देर से तैयार हुईं। बेटा देर से लौटा। कभी डाँट-डपटकर, कभी दूसरे तरीकों से वह अपनी नाराजगी जाहिर करता रहा है। जानते हुए भी कि शादी के समारोह में घंटा-आधा घंटा आगे-पीछे जाने से कोई अंतर नहीं पड़ेगा, वह कटु हो जाता रहा है। समयबद्धता अनुशासन का अंग है और वह स्वभाव से अनुशासन प्रिय जीवन का प्रबल पक्षधर है। अब स्थितियाँ बदल गई हैं। किसी से कुछ नहीं कहता है। स्वयं तैयार हो जाता है, मगर किसी से नहीं कहता या पूछता है कि जो समय तय किया था, उस पर चल क्यों नहीं रहे हो?

उसके कुछ न कहने के बाद समयबद्धता के प्रति आग्रह उड़न छू हो गया है। सब अपनी सुविधा के अनुसार, धीरे-धीरे तैयार होते हैं। यह प्रवृत्ति कभी-कभी रेलगाड़ी या हवाई सफर के मामले में भी बाधक बनती है। बाद में भले ही पछताते हों, मगर बाद में वह पछतावा भी अस्थायी सिद्ध होता है। अगली बार वैसा ही व्यवहार, वैसी ही विलंब की स्थिति, वैसी ही भाग-दौड़ और फिर वैसा ही पाश्चात्ताप देखने को मिलता है। वह मौन रहता है। तमाशबीन की तरह न कोई टिप्पणी करता है और न झुँझलाता या नाराज होता है। अच्छा नहीं लगता है, मगर चुप रहता है। मजे की बात यह है कि उसके व्यवहार में आए इस परिवर्तन की चर्चा परिवार में किसी ने नहीं की है। यहाँ तक कि पत्नी ने भी इस संबंध में कभी कुछ नहीं कहा। पहले आप ऐसे थे या पहले आप इस, उस और फलाँ स्थिति में उग्र हो जाते थे, इनमें से कोई टिप्पणी एक बार भी किसी ने नहीं की है। शायद किसी को इस बात से भी मतलब नहीं है कि अब वह मौन रहता है। कम तो बोलता ही है, प्रतिक्रिया भी यथासंभव नहीं देता है।

क्या अंतर्मुखी होना इसी को कहते हैं?

चलने में दिक्कत होती है। फिर भी प्रात: भ्रमण बंद नहीं किया है। सुबह घूमकर लौट रहा था। एक जगह कीचड़ था। बचने के लिए मकान के सामने बने रैंप से निकलने का उपक्रम किया। रैंप और सड़क के बीच बनी थोड़ी सी ऊँचाई नजर नहीं आई। ठोकर लगी। गिर गया। घुटने और हथेलियाँ जमीन से टकराईं। पायजामे के एक घुटने पर मिट्टी लगी और कलाइयों के पास हथेलियाँ छिल गईं। उनमें से एक से हल्का खून भी छलक आया। सामने बने रेस्टोरेंट से एक युवक, सड़क से जाता दूसरा युवक और वहाँ से गुजरता एक परिचित दौड़ते हुए आए। उठाया। पूछा, चोट तो नहीं लगी? उसने इनकार करते हुए धन्यवाद दिया। सहारा देकर रेस्टोरेंट में ले जाकर बैठाया। पानी पिलाया। पाँच-सात मिनट बाद धन्यवाद देकर वापस घर लौटा।

रिश्तेदार तो चले गए, मगर वह सोचता रहा, नहीं मालूम, यह अंतर्मुखी होना है या नहीं? इतना जरूर स्पष्ट है कि मित्रों से तो लगभग कट ही गया है, रिश्तेदारों और परिवार से भी दूर होता जा रहा है दिन-ब-दिन। अगर इसी को अंतर्मुखी होना कहते हैं तो उसे इसे प्रणाम कर लेना चाहिए।

परिवार के किसी सदस्य से इस घटना की न उसने चर्चा की और न किसी का ध्यान गया। खून रुक गया था। उसने हथेलियों के कोनों पर आई खरोंचों को पानी से साफ किया। खून के धब्बों को धोया। एक जगह बने हल्के घाव पर बैंड एड लगा दी। तब भी घर के किसी सदस्य का इस ओर ध्यान नहीं गया। वह इस विषय पर खामोश बना रहा। दूसरे दिन पत्नी की एकाएक बैंड एड की तरफ नजर चली गई। उन्होंने पूछा तो उसने टाल दिया। न उनकी ओर से खींचतान हुई और न उसने कुछ बताया।

क्या अंतर्मुखी होना इसी को कहते हैं?

दिल्ली से एक रिश्तेदार सपत्नीक मिलने घर आए हैं। परिवार में सबने गर्मजोशी से उनका स्वागत किया है। उनका घर आना उसे भी अच्छा लगा है। जब भी दिल्ली जाने के प्रसंग बने हैं, वह उनके यहाँ रुकता रहा है। वे दोनों एक-दूसरे को पसंद करते हैं। इसके बावजूद कुछ देर के बाद वह चुप्पी साध लेता है। बैठा जरूर है सबके साथ, किंतु भागीदारी बिल्कुल नहीं है। रिश्तेदार को भी अजीब लग रहा है। कहाँ वह उनके साथ घंटों बतियाता था और कहाँ अजनबियों की तरह बैठा है। जाते-जाते उन्होंने पूछ भी लिया, "तबीयत तो ठीक है न आपकी?"

वह कुछ बोला नहीं। बस मुसकराया। पत्नी ने ही जवाब दिया, "आजकल पता नहीं क्यों चुप-चुप रहने लगे हैं।"

रिश्तेदार तो चले गए, मगर वह सोचता रहा, नहीं मालूम, यह अंतर्मुखी होना है या नहीं? इतना जरूर स्पष्ट है कि मित्रों से तो लगभग कट ही गया है, रिश्तेदारों और परिवार से भी दूर होता जा रहा है दिन-ब-दिन। अगर इसी को अंतर्मुखी होना कहते हैं तो उसे इसे प्रणाम कर लेना चाहिए।

वह इसे साष्टांग करता है। नहीं चाहिए उसे ऐसा कुछ भी, जो अपनों से दूरियाँ बढ़ाए। सबके बीच होते हुए भी एकाकीपन के अहसास को नहीं चुनना है उसे। नहीं चाहिए ऐसा, जो न उसे किसी के लिए काम का रहने दे और न किसी से अधिकारपूर्वक कुछ करने के लिए कह सके। जो दीमक की तरह रिश्तों-नातों का भक्षण करे, नहीं चाहिए अंतर्मुखी होने का ऐसा स्वरूप।

वह मोबाइल उठाता है। एक मित्र का नंबर मिलाता है। फोन उठते ही व्यग्रतापूर्वक कहता है, "इतने दिनों से तुझे देखा नहीं है यार, बता कब और कहाँ मिल रहा है?"

भुला देने के दोस्त के उलाहने को दरगुजर करके वह आग्रह के साथ कहता है, "छोड़ यार, केवल यह बता। मैं तेरे घर आऊँ या तू आ रहा है।"

साअ

डी-१८३, मालवीय नगर,
जयपुर-३०२०१७ (राज.)
दूरभाष : ९८२८४००३२५

लोकसंस्कृति में तीर्थयात्रा की परंपरा

• सुमन चौरे

अयोध्या धाम में रामलला के दर्शनों और उनकी एक झलक पाने के लिए लोक का सागर उमड़ रहा है। राम का हर रूप, हर अवस्था लोक को अपनत्व का बोध कराता है, लोक ने अपने संस्कारों में अपनी परंपराओं में राम को प्रतिक्षण अपने निकट पाया है। लोक अपने ग्राम देवता को पूजता है, चावड़ी-चौपाल और पंचवटी की चौकी के देवता के प्रति भी उसकी आस्था है, अपने घर के पूजास्थान में भी देवी-देवताओं को पूजता है। लोक भाव है कि उसकी श्वास-प्रश्वास में सियाराम हैं और कंकर-कंकर में रामेश्वरम्। अपने चहुँओर उसे ईश्वर का बोध होता है। ईश्वर के प्रति यह अटूट विश्वास लोक को उसके ग्राम की सीमाओं तक बाँधता नहीं है, अपितु अनजान मार्गों पर बाधाओं को पार करते हुए तीर्थयात्रा पर जाने के लिए प्रेरित करता है। लोकसंस्कृति ने अपार श्रद्धा से भरी हुई तीर्थयात्रा की परंपरा सहस्त्रों वर्षों में पुष्ट की है।

ईश्वर उपासना और ईश्वर-प्राप्ति के कई साधन हैं। देवस्थान दर्शन और पवित्र नदियों-सरोवरों में स्नान अर्थात् तीर्थयात्रा को ईश्वर-प्राप्ति का एक प्रमुख मार्ग बताया गया है। तीर्थ स्थानों में सामूहिक रूप से वंदना, स्तवन, पूजा-आराधना की जाती है। देवी-देवताओं से सभी के मंगल की प्रार्थना की जाती है। लोक में इस बात का श्रद्धापूर्वक पालन किया जाता है कि व्यक्ति जब अपने कर्तव्यों और पारिवारिक उत्तरदायित्वों से निवृत्त हो जाता है, तब वह तीर्थयात्रा का नियोजन करता है। या फिर कोई युवा अपने परिवार के वृद्ध सदस्य को तीर्थ करवाने ले जाता है। लोक परंपरानुसार तीर्थयात्रा में प्रमुख हैं चार धाम, द्वादश ज्योतिर्लिंग, सप्त पुरी, शक्तिपीठ पवित्र सरोवर-नदी, पर्वत, प्रचीन मंदिर, आश्रम आदि।

मध्य प्रदेश के दक्षिण-पश्चिम हिस्से में निमाड़ लोक सांस्कृतिक क्षेत्र है। निमाड़ में तीर्थयात्रा से संबंधित पुष्ट लोक-परंपरा रही है। तीर्थयात्रा के लोकगीत की इस परंपरा को समृद्ध करते हैं। ऐसा नहीं होता है कि शासकीय सेवानिवृत्ति और पारिवारिक जिम्मेदारियों के पूरा होने के बाद कोई व्यक्ति निजी तौर पर प्लान बनाए और तीर्थयात्रा पर निकल पड़े। आम बोलचाल के शब्दों में कहें तो 'ऐसे ही कोई उठा और छूटा' जैसे तीर्थयात्रा नहीं करता। तीर्थयात्रा पर निकलने की तैयारी पूरे विधि-विधान से होती है।

सुपरिचित लेखिका। 'निमाड़ का सांस्कृतिक लोक' और 'मोहि ब्रज बिरसत नाहीं' पुस्तक एवं अनेक प्रतिष्ठित साहित्यिक और शोध-पत्रिकाओं में लेख एवं संस्मरण प्रकाशित। दूरदर्शन एवं आकाशवाणी से लोक-संस्कृति, कविताओं, बालकथाओं का प्रसारण। म.प्र. लेखक संघ, म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति एवं हिंदी भवन सहित अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

निमाड़ क्षेत्र का लोक चारों धामों की यात्रा में सबसे पहले जगन्नाथ धाम की यात्रा करता है। इस धाम से तीर्थयात्रा प्रारंभ करने का एक प्रमुख कारण यह माना जाता है कि शुभारंभ पूरब दिशा से हो। इस धाम के बाद पश्चिम दिशा में द्वारकाधीश धाम के दर्शन करते हैं। इसके पश्चात् उत्तर में पर्वतराज हिमालय के आँचल में स्थित बदरीनाथ विशाल, केदारनाथजी, गंगोत्तरी-यमुनोत्तरी के दर्शन करते हैं। इस धाम की यात्रा, मार्ग की कठिनाइयों के कारण सर्वाधिक दुष्कर है। तीर्थयात्री गंगोत्तरी से जल भरकर लाते हैं। इस जल को दक्षिण के धाम रामेश्वरम् में शिवजी का अर्पित करते हैं। निमाड़ के तीर्थयात्री वापस लौटकर ओंकार महाराज (ज्योतिर्लिंग ओंकारेश्वरजी) को भी जल अर्पित करते हैं और नर्मदा मैया में डुबकी लगाते हैं। इन्हीं के मार्ग में सप्तपुरियों के भी दर्शन कर लिए जाते हैं।

कई दशकों पहले आवागमन के साधनों की सुविधा उपलब्ध नहीं थी, तब लोग कठिनाइयों को पार करते हुए तीर्थयात्रा पूरी करते थे। इसलिए तीर्थयात्रा पर जाना दुष्कर था। ऐसे में कई लोग मिलकर जाते थे, जैसे किसी एक गाँव या आसपास के कुछ गाँवों के पंद्रह-बीस लोग मिलकर जाते थे। इस समूह को निमाड़ में 'पोहो' शब्द से संबोधित करते थे।

वर्तमान में तो लोग आवागमन के साधनों की सुविधा के अनुसार यात्रा का नियोजन करते हैं। इसके लिए मुहूर्त निकालने और उसके पालन करने जैसी प्रथा मुश्किल से ही दीखती है। लेकिन कुछ दशकों पहले तक मुहूर्त निकालकर तीर्थयात्रा प्रारंभ होती थी, तब आखा तीज का मुहूर्त पोहो के अनुकूल रहता था।

तीर्थ यात्रा जाने के बहुत पहले ही यात्रा शुभारंभ की तिथि निश्चित हो जाती थी। गाँव के पटेल (मुखिया) इस यात्रा में सम्मिलित होने वाले यात्रियों के नाम लिख लेते थे। तीरथ यात्रियों के नाते-रिश्तेदार उनसे मिलने आते थे। यात्रा प्रारंभ होने वाले दिन तीरथ यात्री के रिश्तेदार उसे लोकगीत गाते हुए परात (काँसे की मोटे पेंदे वाली थाली) बजाते हुए मंदिर तक ले जाते थे। जिस भी तीर्थ को जाते थे, उनके अधिष्ठाता देवता का नाम लेकर गीत गाया जाता था। लोकगीतों में आस्था और देवता के प्रति भक्त का अपनापन झलकता है, जब देवता ही कागज पर चिट्ठी लिखकर भक्त को बुलावा भेजते हैं। देवता पूछते हैं कि दूसरे स्थानों के भक्त आ गए हैं, तू क्यों नहीं आया अभी तक—

बद्रीनाथऽ नऽ लिख्या कागज दई भेज्याऽ
तूऽ रे वीराऽ बेगो आवऽ
सगळो पोहो रे मान आई गयो
नईं आई म्हारी भोळई निमाड़ऽ
भोळई निमाड़ का मानवयी असो बोल्याऽ
तोरऽ रे जुवारऽ को म्हरा धावणूऽ
मिरया कपासऽ मंऽ मनऽ बिलमायऽ
घूमाणऽ का नान्द्या रोकी रह्याजऽ
पाळणाऽ की ममताऽ रोकी रह्यीजऽ
पोहो ते जोवऽ वाटऽ कसा आँवाऽ देवऽ
तीरथऽ खऽ

भावार्थ : उत्तर के बदरीनाथ स्वामी ने कागज लिखकर संदेश भेजा है कि 'हे भाई, तू दर्शन करने क्यों नहीं आया?' सभी स्थानों से दल के दल तीरथ करने आ गए, भोली-भाली निमाड़ का मानस नहीं आया।' इस संदेश पर निमाड़ के भाई कहते हैं कि 'हमारे खेत में मिरी (मिर्ची), कपास फूल रही है, तुवर और जुवार को खेत से निकालना है। मिरी में मन बिलम रहा है। घुवाण में खड़े नंदीगण राह रोक रहे हैं। पालने में झूलते बालक की ममता रोक रही है, यही घर-परिवार से मोह नहीं छूट रहा है और पोहो रास्ता देख रहा है। इसी से विलंब हो रहा है।'

लोक अपने आत्मीय जन को मंदिर तक पहुँचाकर पुन: अपने घर आ जाते हैं। तीर्थ जाने वाले लोग रात को भूमि पर या चटाई पर सोते हैं और भोर होते ही तैयार हो जाते हैं। इस दिन लोग मंदिर पहुँचकर यात्रियों को गाँव से विदाई देते हैं। तीर्थयात्रा में कैसे कष्ट हो सकते हैं, इसकी जानकारी एक रात में ही मंदिर में भूमि पर सोने से मिल जाती है। जो लोग दृढ़ निश्चयी नहीं होते या आराम पसंद हैं, वे अपने गाँव से निकलकर ओंकार महाराज के दर्शन करके तुरंत वापस गाँव लौट आते हैं। गाँव से विदा लेने के बाद तीर्थयात्रियों को तीर्थवासी शब्द से संबोधित किया जाता है।

घर वालों को तीर्थयात्रियों की याद आती है तो उनके घर की महिलाएँ तीरथ गीत गाकर अपने मन को समझा लेती हैं—

सोन्ना रूप्पाऽ की बाई थारी भायरीऽ
या भायरीऽ काईऽ कव्हायऽ?
हमाराऽ दादाजी मांयऽ तीरथऽ गयाऽ
या भायरी मारगऽ झड़ायऽ
हीरा मोती की बाई थारी छाबड़ीऽ
चा छाबड़ी काईऽ कव्हायऽ?
हमारा पिताजी माताऽ तीरथऽ गयाऽ
या छाबड़ी फूलड़ाऽ धरायाऽ

भावार्थ : हे बहन, सोने-चाँदी की यह झाड़ू किस काम की है? तब बहन कहती है कि मेरे आजा दाजी और आजी माँय तीरथ यात्रा को गए हैं। मैं इस झाड़ू से मार्ग झाड़ूँगी, ताकि उन्हें भी कंटक विहीन मार्ग मिले। हे बहन! हीरे-मोती से गठी यह छाबड़ी किस काम की है? बहन कहती हैं कि मेरे माता-पिता तीरथ गए हैं, इस छाबड़ी को भरकर फूल लाकर मार्ग में डालूँगी, ताकि उनके मार्ग फूल जैसे कोमल हों जाएँ।

तीरथवासियों को घर से निकले बहुत दिन हो गए हैं। परिवारजन अनुमान लगाते हैं कि जब आम का पौधा लगाकर गए थे, अब उस वृक्ष में कैरियाँ लग रही हैं, गाय के बछड़ा-बछिया होने के बाद गए थे, अब गोवंश इतना बढ़ गया है कि गोठान में नहीं समा रहा है आदि। बिंबों के माध्यम से कालगणना के एक अद्‌भुत गीत के अंश—

तीरथऽ वासीऽ तिरवेणी असनानऽ तोऽ
अँवऽ घरऽ आओ तीरथऽ वासीऽ
नानो सो अम्बोऽ खेतऽ मेढ़ड गाड़ी गयाऽ
तेऽ कीऽ ते कैरी लटालूमऽ तोऽ
अँवऽ घरऽ आओ तीरथऽ वासीऽ
नानो सो चम्पो अँगणऽ लगई गयाऽ
तेऽ की ते डाळऽ गई गुजरातऽ तो
अँवऽ तोऽ घरऽ आओ तीरथऽ वासीऽ

भावार्थ : हे तीरथवासियो! अब तक तो आपने पवित्र त्रिवेणी में स्नान कर लिया होगा। देव दर्शन भी कर लिए होंगे। अब आप घर लौट आइए। आपने खेत की मेंड़ पर आम का जो छोटा सा रोपा लगाया था, वो अब वृक्ष हो गया है और उसमें लटालूम कैरियाँ लगने लगी हैं। हे तीरथवासी! आप जल्दी घर वापस आ जाओ। हे तीरथवासी! आपने घर के आँगन में जो चंपा का पौधा लगाया था, वह इतना बड़ा हो गया है कि उसकी डालियाँ गुजरात तक पहुँच गई हैं। हे तीरथवासी! आप जल्दी घर वापस आ जाओ। आपने गोठान में जो छोटी-सी बछिया छोड़ी थीं, उसके जाये (बछड़े, बैल, गाय) इतने बड़े हो गए हैं कि गोठान और बक्खर में नहीं समा रहे हैं। हे तीरथवासी! आप जल्दी घर वापस आ जाओ।

घर-परिवार के लोगों को जितनी याद अपने तीरथवासी परिवारजनों की आती है, उतनी ही याद तीरथवासी भी अपने परिवार की करते हैं। ये भाव जब मातु गंगा के दर्शन होते हैं, तब और भी आवेग से फूट पड़ते हैं। गंगा में उन्हें सतत प्रवाहिनी ममता की छबि दीखती है—

ओ देवी गंगा वयऽ हो सुरंगाऽ
तो थारी झब्बरऽ म्हारो निरमळऽ अंगऽ
गंगा का लह्यर चढ़ाओ रे कापऽ
तो आई मिलऽ नऽ म्हारो समरथऽ बापऽ
गंगा की लह्यर ढाको रे साड़ीऽ
तो आई मिलऽ नऽ म्हारी मयाळू माड़ी

भावार्थ : हे देवी गंगा! तुम बड़ी सुहावनी बह रही हो। तुम्हारी झब्बर लहर-लहर के स्पर्श से मेरा अंग तो निर्मल हो गया है और मेरा मन आह्लादित हो उठा है। हे माता! तुम्हारे दर्शन से मेरा मन मेरे परिवार में पहुँच गया है। हे देवी गंगा! मैं आपकी लहर-लहर को कपड़ा चढ़ाऊँगी, तुम मुझे अपने पिता से मिलवा दो। हे देवी गंगा! तुम बड़ी निर्मल होकर बह रही हो, तुम्हारी लहर-लहर को मैं साड़ी ओढ़ाऊँगी। हे ममतामयी! तुम प्रसन्न हो माँ और मुझे मेरी माँ से मिलवा दो।

तीर्थस्थल भक्ति और आराधना के पुरातन जाग्रत् स्थल हैं। इन स्थलों पर अनंत काल से देव आराधना, जप-तप साधना, भजन-कीर्तन किए जाते रहे हैं। इन स्थानों पर देवाकर्षण की भावमय तरंगें तरंगित होती हैं। इन स्थानों से व्यक्ति भक्ति की धारा में बह जाता है। कई व्यक्ति ऐसे होते थे कि वे मानते थे कि अब संसार के माया-मोह में पुन: नहीं लौटते, और वे अपने मन को ईश्वर में लीन कर तीर्थों में ही रुक जाते थे। किंतु जब तीरथवासियों की कोई सूचना नहीं मिलती थे तो उनके परिवारजनों को चिंता होती थी। महिलाओं के करुण स्वर फूट पड़ते थे—

तू काँ रे लोभाण्यो म्हार तीरथऽ वासीऽ
तीरथऽ करी नऽ बेगो आवऽ
काई रे वीरा तूऽ पुरी मऽ लोभाण्यो
जगन्नाथ स्वामी को भातऽ तुखऽ भायोऽ
कि तू समुंदर की लह्यर मऽ बिलमाण्यो
तीरथऽ करी नऽ बेगो आवऽ
काई रे वीरा तू रामेश्वर मंऽ लोभाण्या
शंकर की पिण्डीट मंऽ रमाण्यो
कि रे इक्कीस वावड़ी मंऽ बिलमाण्योऽ
तीरथऽ करी नऽ बेगो आवऽ

भावार्थ : हे मेरे तीरथवासी वीरा (भाई)! तू किस और लोभ में आ गया। तुझे तीर्थ में किसने रमा लिया? तू तीर्थ कर जल्दी से घर लौट आ। हे वीरा, क्या तुझे जगन्नाथपुरी बहुत भा गई या जगन्नाथजी का प्रसाद अधिक स्वादिष्ट लगा या समुद्र की लहरों में रम गया? हे वीरा! क्या तू रामेश्वरम् धाम में रम गया है? क्या तुझे शिवजी की पिंडी ने लुभा लिया है या इक्कीस कुओं के स्नान ने तेरा मन रमा लिया? हे वीरा! तू तीर्थ कर घर जल्दी से लौटकर आ जा।

तीर्थस्थानों के आनंद और उनके कृपापूर्ण वातावरण में आस्थावान तीरथवासी ऐसा रम जाता है कि उसे किसी बात की चिंता नहीं रहती। वह सांसारिक घटनाओं से बाहर निकल आता है। जब तक मन उस तीर्थ में लगा, तब तक वहीं ठहर जाते हैं। तीरथवासी के संदेश कभी-कभी उनके गाँव तक पहुँच जाते थे। जैसे किसी आस-पास के गाँव के तीर्थ यात्री लौट रहे हैं तो वे उस रुके हुए यात्री के कुशल-मंगल का समाचार उसके गाँव-घर तक पहुँचा देते थे।

आज जब लोग अपने-पराए, देश-विदेश के पल-पल के समाचार रखते हैं, तब उस काल में कोई व्यक्ति घर से बहुत दूर अनजान स्थानों से होते हुए तीर्थयात्रा पर गया और उसके लौटकर आने की कोई निश्चित कालावधि नहीं रहती थी, तो सूचना संप्रेषण का माध्यम आत्मिक बल ही हुआ करता था। तब तीर्थयात्रियों के विषय में कोई जानकारी नहीं मिलती थी, इस समय में निमाड़ में प्रचलित तीरथ गीतों को बिछोह के करुण गीतों की उपमा दें तो अत्युक्ति नहीं होगी। कल्पना कीजिए, जिस परिवार का एक युवा सदस्य, जो घर की धुरी है, तीर्थयात्रा पर जाता है, तब उस घर की स्थिति कैसी होती है। मार्मिक भावों से भरे तीरथ गीतों को सुनते ही आँखें नम हो जाती हैं। मन तड़प उठता है जब स्मृतियों का ज्वार उफन पड़ता है। परिवारजन अपनी विवशता दरशाते हैं कि हमने न तो बाहर की दुनिया में कदम रखा, हमारे लिए तो घर की दहलीज पर्वत जैसी और आँगन दूसरे मुल्क जैसा है—

ढेळ तो परवत भई, नऽ अँगणों भयो परदेशऽ
म्हारा वीराऽ रेऽ तीरथऽ करीऽ नऽ बेगो आवऽ
कचेरी बसन्त थारा पिताजी झूरऽ
हिण्डोळाऽ झूलन्ती थारी माँयऽ म्हारा वीराऽ रेऽ
तीरथऽ करीऽ नऽ बेगो आवऽ
फूतळ्या खेलन्ताऽ थारा बाळऽ गोपाल झूरऽ
राँधणी मंऽ झूरऽ थारीऽ नारऽ म्हारा वीराऽ रेऽ

भावार्थ : हे हमारे भाई! हमारे पुत्र, हमारे लिए तो घर की ढेल पर्वत जैसी ऊँची कठिन है और आँगन ऐसा है, मानो परदेश हो। हे हमारे सगे! तू तीरथ करके घर जल्दी लौट आ। कचहरी (घर का मुख्य बैठक कक्ष, जिसमें अतिथि आते हैं) में बैठने वाले तेरे पिताजी तेरी याद में भीतर ही भीतर घुल रहे हैं। ऐसी ही स्थिति झूले पर झूलने वाली तेरी माता की हो रही है। तू जल्दी से तीर्थ कर घर लौट आ। खेल-खिलौनों से खेलने वाले तेरे बाल-गोपाल भीतर ही भीतर तेरी याद में रंज रहे हैं। तेरी पत्नी चूल्हा-चौका (रसोई) करते-करते तेरी प्रतीक्षा में घुट रही है।

यादों की कितनी विचित्र पीर है। मन कुलबुला उठता है, याद कैसी सताती जाती है, लोकगीतों में आए इन शब्दों का कोई पर्याय नहीं है। वह गहन पीर तो केवल भावाभिव्यक्ति है। जो संवेदनशील है, वह उस दु:ख को परानुभूत कर लेता है।

तीर्थस्थानों के आनंद और उनके कृपापूर्ण वातावरण में आस्थावान तीरथवासी ऐसा रम जाता है कि उसे किसी बात की चिंता नहीं रहती। वह

सांसारिक घटनाओं से बाहर निकल आता है। जब तक मन उस तीर्थ में लगा, तब तक वहीं ठहर जाते हैं। तीरथवासी के संदेश कभी-कभी उनके गाँव तक पहुँच जाते थे। जैसे किसी आस-पास के गाँव के तीर्थ यात्री लौट रहे हैं तो वे उस रुके हुए यात्री के कुशल-मंगल का समाचार उसके गाँव-घर तक पहुँचा देते थे।

तीर्थयात्रा संपन्न करके गाँव में आगमन

निमाड़ के लोक की प्रबल आस्था है कि कितने ही तीरथ कर लो, किंतु रेवा मैया में स्नान करने के बाद ओंकार महाराज को जल नहीं चढ़ाया, तो तीरथ यात्रा पूर्ण नहीं मानी जाएगी। गाँव के, कुटुंब के लोग उन्हें ओंकारेश्वर में लेने आते हैं। भोर होते ही पूरा गाँव ढोल और परात की थाप पर गाते हुए तीरथवासियों को लेने जाते हैं। इस अवसर पर गाए जाने वाले गीत का उदार भाव देखिए कि गाँव के सभी वर्ग के लोगों को ससम्मान बुलाया गया है।—

बद्रीनाथ देव नऽ हुकुमा करीऽ रजाभरी
चारई धामऽ का देवऽ नंऽ नऽ रजाभरी
तूऽ रे तीरथऽवासी बेगो घर जावऽ
धोया धड़ऽ आया रे तीरथऽ वासीऽ
हुई रहीऽ जय जयऽ कारऽ
तूऽरे बजाज्या भाई बेगो आओऽ
लई आऽ रे मसरू का थानऽ
पोहाऽ खऽ चूँदड़ऽ ओढ़ाओ
हुई रही जय जयऽ कारऽ

भावार्थ : चारों धामों की यात्रा कर चुके तीरथवासियों से चारों धाम के देवताओं ने कहा, हे तीरथवासी भाइयो! हम प्रसन्न हैं, तुम्हारी भक्ति से। हम तुम्हें अपने घर लौट जाने की अनुमति देते हैं। गाँव की सीमा पर तीरथवासी पहुँच गए हैं। हे बजाज भाई! तू मसरू के कपड़ों के थान और काप लेकर आ जा। हम सभी तीरथवासियों को नए वस्त्र भेंट ओढ़ाएँगे।

प्रात:काल सब लोग तीरथयात्रियों को बधाकर, उनको कुंकुम-अक्षत लगाकर आरती उतारते हैं और बधावा गीत गाते हुए घर लाते हैं। उनके घर की ओर के मार्ग में लोग तीरथयात्रियों के चरण धुलाते हैं, चरणों पर कुंकुम-हल्दी लगाते हैं। उन पर पुष्पवर्षा भी करते हैं। कुछ लोग तीरथयात्रियों पर छत्र लगाकर उनको अपने घर भी ले जाते हैं। उनके स्वयं के घर पहुँचने पर तो हर्ष का अलग ही वातावरण हो जाता है।

शुभागमन के इस अवसर पर गाए जाने वाले गीतों में तीरथ और तीरथयात्रियों की महिमा और उनकी अंगकांति का वर्णन मिलता है—

झारीऽ मंऽ को गंगा जळऽ झळकऽ रह्योऽ
जळऽ झळकऽ रह्यो रे हिवड़ो हरकऽ रह्योऽ
थारी साँवळई मूरतऽ मुरझाये रेऽ

भावार्थ : तीरथवासी तीर्थयात्रा संपन्न करके गाँव लौट आए हैं। उनके हाथ में गंगाजल से भरी झारी है। इस झारी से जल छलक रहा है। हे तीरथवासी! देवदर्शन करने से तेरे शरीर में देवत्व का वास हो गया है। तेरा शरीर कांतिवान हो गया है।

तीरथवासियों के घरों और अड़ोस-पड़ोस में कई महीनों तक आनंद का वातावरण रहता है। उन दिनों सूचना-संप्रेषण के साधन विरल थे। जैसे-जैसे लोगों को पता चलता था कि तीरथवासी लौट आए हैं तो उनसे मिलने आते रहते थे। तीरथवासियों के घर लौटने पर ऐसा वातावरण रहता था, जैसे उनका पुनर्जन्म हो गया हो। नाते-रिश्तेदार मिलने आते हैं और उनको वस्त्र भेंट करते हैं।

नित्य रात्रि, तीरथवासी जब यात्रा पर रहते हैं, तब उनके घर तीरथ के गीत गाए जाते हैं। अड़ोसी-पड़ोसी, नाते-रिश्तेदारी आदि गाँव की कई महिलाएँ गीत गाने के लिए आती हैं। सभी मिलकर ये पारंपरिक लोकगीत गाते हैं। गीत गाने के लिए आने वालियों को प्रसाद में जुवार की धानी या सेंगळई (मूँगफली) उनके आँचल में दी जाती है।

गंगा-पूजन

निमाड़ में गंगा-पूजन का भी बड़ा माहात्म्य है। बदरीनाथ स्वामी जाने वाले तीर्थयात्री गंगोत्तरी और यमुनोत्तरी के दर्शन भी करते हैं। गंगोत्तरी से गंगाजल लाते हैं। जिसमें से जल से भरी एक झारी तो रामेश्वरम् धाम में चढ़ाते हैं, जबकि कुछ अन्य झारियाँ वे अपने-अपने गाँव लाते हैं। अपने गाँव, फिर परगाँव के लोगों को और संबंधियों को बाँटने योग्य बड़ी मात्रा में जल लाना तो संभव नहीं है। ऐसी स्थिति में एक विधान है गंगा पूजन का। गंगाजल की झारी से जल को गाँव के कुएँ या सरोवर में डालकर, घड़ों में भर दिया जाता है। सुहासिन अपने सिरों पर इन घड़ों को रखकर जलस्रोत से घर तक लाती हैं। सभी लोग पंक्तियों में बैठ जाते हैं, फिर सभी को कुंकुम लगाकर दक्षिणा देकर घड़ों में से जल को निकाल कर सभी लोगों में वितरित किया जाता है। सभी बड़ी श्रद्धा से अपने हाथों में जल लेकर पी लेते हैं।

तीर्थयात्रा देश की अखंडता को अक्षुण्ण बनाए रखती है। देश की सामाजिक-सांस्कृतिक-आध्यात्मिक संरचना को सुदृढ़ करती है। यह भारतवासियों को एक सूत्र में बाँधने का मूल मंत्र है। तीर्थयात्रा की परंपराओं को देश के हर क्षेत्र की लोकसंस्कृति प्रभावित करती है और इन तीर्थयात्राओं से बहुत कुछ ग्राह्य करके ये लोक संस्कृतियाँ समृद्धतर होती जाती हैं। लोकसंस्कृति की आत्मा लोकगीतों, लोककथाओं, लोक-कलाओं और प्रथाओं में बसती है। यही कारण है कि सहस्रों वर्षों से अगाध श्रद्धा से ओतप्रोत तीर्थयात्रा की परंपरा का पोषण लोकसंस्कृति करती आ रही है।

साअ
बँगला नं.-१९, एच.पी. नगर ईस्ट,
वासी नाका, माहौल रोड,
चेंबूर, मुंबई-४०००७४ (महा.)
दूरभाष : ९८१९५४९९८४

गांधारी का प्रायश्चित्त

• विनोद बब्बर

महाभारत समाप्त हो चुका था। श्रीकृष्ण से मंत्रणा करते हुए युधिष्ठिर ने कहा, "युद्ध समाप्त हो चुका है, लेकिन खतरा अभी समाप्त नहीं हुआ है। तपस्विनी माता गांधारी का मौन शंकित करता है। पुत्रों के न रहने पर उनके मन में क्या चल रहा है, कोई नहीं जानता। मुझे आशंका सता रही है कि वे कोई श्राप न दे दें। आप हमारे उद्धारक हैं। आप ही माता गांधारी से मिलकर उनके मन की ग्रंथी को सुलझा सकते हैं।"

चारों ओर बिखरे शवों के बीच वृक्ष तले एक नारी एक शव को उठाकर दूसरे शव पर रख रही है। दूसरे के बाद तीसरा, चौथा, पाँचवाँ शव रखा और उन पर चढ़ वृक्ष पर लगे फल तोड़े। वह उस फल को ग्रहण करने ही वाली थी कि एक दिव्य व्यक्तित्व ने अपनी उपस्थिति दर्ज कराते हुए कहा, "बुआ प्रणाम, यह क्या?"

कुछ ठिठकते हुए उसने सामने देखा। श्रीकृष्ण का प्रणाम स्वीकार करते हुए रोआसे स्वर में वह इतना ही कह सकी, "आखिर पेट की अग्नि का कब तक दमन किया जा सकता है। मन में कुछ भी चलता रहे, लेकिन तन की विवशता है कि रोग, शोक में भी उसकी आवश्यकताएँ रुक नहीं सकतीं। रोते-रोते मेरे आँसू सूख चुके हैं। तुम ही बताओ, मैं क्या करूँ? हे कृष्ण! मैं क्या करूँ?"

वह नारी कोई और नहीं, बल्कि महारानी गांधारी थी, जो युद्ध के मैदान में चहुँओर बिखरे अपने पुत्रों के शवों पर विलाप करते-करते थक चुकी थी। बुद्धि जानती थी कि वीरगति को प्राप्त हुए लौटकर नहीं आने वाले हैं, लेकिन ममता पर बुद्धि का वश नहीं चलता। गांधारी बेशक महारानी थी, लेकिन थी तो मानव ही। इसलिए मानवीय दुर्बलता होना स्वाभाविक था। भूख ने विवश कर दिया तो महारानी से बेचारी बनी गांधारी क्या करती।

कुंती श्रीकृष्ण की बुआ थी, तो उनकी जेठानी होने के नाते गांधारी भी श्रीकृष्ण के लिए बुआ थी। महारानी गांधारी ने स्वयं को सदैव धृतराष्ट्र, शकुनि और दुर्योधन के प्रपंचों से दूर रखा। कुंती अथवा उसके पुत्रों के प्रति कभी दुर्भावना नहीं रखी। यहाँ तक कि महाभारत से पूर्व जब दुर्योधन आशीर्वाद लेने उनके पास आया तो उसे विजयी होने का आशीर्वाद नहीं दिया। वह कभी इतनी विवश नहीं हुई, लेकिन आज भूख ने

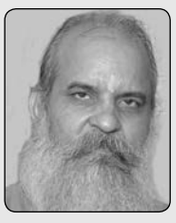

सुपरिचित लेखक। अब तक ४६ पुस्तकें प्रकाशित, ८ अन्य भारतीय भाषाओं में अनूदित, १८ देशों की साहित्यिक-सांस्कृतिक यात्राएँ, ६ विश्वविद्यालय में उनके साहित्य पर शोधकार्य पूर्ण तो कुछ अन्य विश्वविद्यालय में जारी! देश की अनेक पत्र-पत्रिकाओं में नियमित कॉलम लेखन। हरियाणा गौरव सम्मान, उ.प्र. हिंदी संस्थान द्वारा सौहार्द सम्मान, तुलसी सम्मान सहित अनेक सम्मान/पुरस्कार प्राप्त।

उसे विवश कर दिया था।

श्रीकृष्ण पांडवों के साथ रहे। लेकिन श्रेष्ठजनों के प्रति अपना कर्तव्य समझते थे। आज एक महारानी को इतना विवश देखकर उन्हें बहुत कष्ट हुआ। पुत्रों के न रहने पर गांधारी को सांत्वना देते हुए उन्होंने कहा, "बुआ, होनी को कौन टाल सकता है। जो हुआ, दु:खद है, लेकिन कब तक शोक करोगी? मेरी प्रार्थना है कि आप महाराज धृतराष्ट्र के पास महल में लौट जाएँ। हस्तिनापुर के नए महाराज युधिष्ठिर निश्चित रूप से आपको यथोचित सम्मान देंगे।"

धीर-गंभीर स्वर में गांधारी ने कहा, "एक साधारण मनुष्य यह बात कहे तो समझ में आती है, लेकिन कृष्ण तुम यह नहीं कह सकते कि होनी को टाला नहीं जा सकता। यदि तुम चाहते तो क्या नहीं हो सकता था?"

"नहीं बुआ, ऐसा नहीं है। मैंने तो अपने स्तर पर हर संभव प्रयास किया। पाँच गाँव देकर समझौते के प्रस्ताव को तो ठुकराया ही, मुझे भी बंदी बनाने का प्रयास किया था उस हठी ने।"

"हाँ, दुर्योधन आरंभ से बहुत हठी था। शायद पिताश्री की दमित महत्त्वाकांक्षाओं ने उसके मन-मस्तिष्क को जकड़ लिया था।"

"लेकिन बुआ, आप जैसा तेजस्विनी माता के गुण क्यों प्रकट नहीं हुए? पति के जन्मांध होने के कारण आँखों पर पट्टी बाँधना शायद आपकी नजर में एक पत्नी के लिए उचित हो, परंतु माता के लिए ऐसा करना अपने कर्तव्य-पथ से विचलित होना ही तो था।"

"लेकिन दुर्योधन सहित सभी राजकुमारों की देखभाल बहुत अच्छी तरह से की गई। उन्हें हमारे समय के श्रेष्ठ गुरु

द्रोणाचार्यजी के पास भेजा गया। फिर पितामह तो थे ही सब पर नजर रखने वाले। इतना सब होने के बाद मेरे लिए करने को बचता ही क्या था?"

"नहीं बुआ, जो माता कर सकती है, वह कोई नहीं कर सकता। स्मरण करो उस क्षण को, जब आपका संबंध महाराज धृतराष्ट्र से निश्चित हुआ तो अपने होने वाले पति के जन्मांध की सूचना पाकर आपने आक्रोश को प्रत्यक्ष में तो प्रकट होने नहीं दिया, लेकिन अपनी आँखों पर पट्टी बाँधने का निर्णय प्रतिकार नहीं तो और क्या था? लेकिन आप जैसी तेजस्विनी में प्रत्यक्ष प्रतिकार का आत्मबल क्यों न था?

"याद है उस क्षण आपकी एक सखी ने सावधान करते हुए कहा था, 'आँख पर पट्टी बाँध तुम अपने कर्तव्य किस प्रकार निभाओगी?' तो आपका उत्तर था, 'क्या तुम्हें मालूम नहीं कि हस्तिनापुर के वैभव के समक्ष हमारा गांधार कुछ भी नहीं है। मैं उस हस्तिनापुर की महारानी बनने जा रही हूँ, जहाँ सैकड़ों नहीं, हजारों दासियाँ होंगी। उनके रहते मुझे कोई असुविधा नहीं होगी।'

"बुआ, स्मृतियों को झकझोड़ते हुए स्मरण करो कि तुम्हारी उस सखी ने क्या कहा था। अगर स्मरण नहीं तो मैं बताता हूँ, उस विदुषी ने तुम्हें चेताते हुए कहा था, 'महारानी के रूप में तुम्हें जो कर्तव्य निभाने होंगे, उनमें वे दासियाँ मदद कर सकती हैं, लेकिन एक पत्नी और एक माता का दायित्व हजार नहीं, लाख दासियाँ मिलकर भी नहीं निभा सकतीं। इस दायित्व का निर्वहन तो तुम्हें स्वयं ही करना पड़ेगा।'

"बुआ, क्या यह सत्य नहीं कि आपने जब एक क्षण के लिए अपनी आँखों से पट्टी खोली थी तो दुर्योधन के शरीर का वह भाग, जहाँ आपकी दृष्टि पड़ी थी, वह वज्र का हो गया था। यदि आपकी दृष्टि आरंभ से ही दुर्योधन पर पड़ती तो उसका व्यक्तित्व भी वज्र हो सकता था। आपकी खुली हुई आँखें शकुनि की चालों को असफल कर सकती थीं। महाराज धृतराष्ट्र के मनोभावों को पढ़कर उन्हें षड्यंत्रों की राह से दूर रखने का प्रयास कर सकती थीं। बुआ, आप तपस्विनी हैं। आपके समान संयमी और विवेकी होना असंभव है, लेकिन आपकी आँख पर बँधी पट्टी और पितामह की प्रतिज्ञा ने परिस्थितियों के साथ न्याय नहीं किया। दोनों ने जीवन के एक समान मोड़ पर त्याग के उच्चतम शिखर को तो स्पर्श किया, लेकिन व्यावहारिकता का धरातल बहुत पीछे छूट गया। आप दोनों महान् हैं। आपके प्रति नतमस्तक होना मेरा सौभाग्य है। लेकिन, लेकिन···!'

"निस्संदेह, प्रत्येक मनुष्य को अपने वचन का पालन करना चाहिए, लेकिन जब प्रश्न समाज और राष्ट्रहित का हो तो वचन पर कर्तव्य को अधिमान देना ही श्रेयस्कर है। व्यक्तिगत प्रतिबद्धताएँ त्यागकर समाजहित और राष्ट्रहित को प्राथमिकता देने वाला वंदनीय होता है। लेकिन जो स्वयं को एक वचन से बाँध लेता है, वह न केवल स्वयं, बल्कि अपने परिवार और राष्ट्र का अहित करता है। यह नहीं कहता कि महाभारत का कारण आप हैं, लेकिन इतना अवश्य कह सकता हूँ कि आपकी आँखों पर पट्टी न होती तो परिदृश्य निश्चित रूप से भिन्न हो सकता था।"

मौन सिर झुकाए गांधारी उन स्मृतियों में डूब गई, जब उसने जीवन का सबसे कठिन अर्थात् अपनी आँखों पर पट्टी बाँधने का निर्णय लिया था। शायद वह नियति को स्वीकार करते हुए भी उसके प्रतिकार का उसका अपना तरीका था। गांधारी को तो गांधार से हस्तिनापुर आना ही था, लेकिन अपने भाई को भी वहाँ रहने से रोक न सकी। ओह तो क्या शकुनि भी उसके साथ हुए छल का प्रतिकार करने के लिए आजीवन वहाँ रहा? नहीं, नहीं, उसे ऐसा करने का अधिकार नहीं था। लेकिन एक साथ रहते हुए भी गांधारी ने भी तो कभी शकुनि से इस विषय पर बात नहीं की। उसके स्वभाव को जानते हुए भी अपने पुत्रों को उससे दूर रखने का प्रयास क्यों नहीं किया?

अनायास गांधारी के होंठ फड़फड़ाए, "हाँ सखी! तुमने ठीक ही कहा था। महारानी के रूप में मेरे कर्तव्यों के निर्वहन में दासियाँ मेरी मदद कर सकती थीं, लेकिन पत्नी और माता के रूप में तो अपने दायित्वों का निर्वहन स्वयं मुझे ही करना था। हाँ, हाँ, पत्नी के कर्तव्य का निर्वहन कोई दासी नहीं कर सकती। पति की अंकशायिनी और पुत्रों की जननी होने के लिए प्रसव पीड़ा स्वयं ही सहन करनी पड़ती है। मैं मातृसुख पाकर देवकी बनी, पर माता जसोदा नहीं बन सकी। माता तो वह होती है, जो लाड़-दुलार ही नहीं सुसंस्कार भी दें। जहाँ मर्यादा की लक्ष्मणरेखा पार होते महसूस करे फटकार और दंड से भी पीछे न हटे। ओह! मेरी उस चूक ने राष्ट्र को अकारण इतना बड़ा दंड दिया है।

"एक पत्नी के रूप में मेरी सजगता महाराजश्री को भी षड्यंत्रों का अंग बनने से रोक सकती थी। शकुनि को शीघ्र से शीघ्र वापस गांधार भेज सकती थी। लेकिन मैं ऐसा न कर सकी, क्योंकि मैं दासियों की सूचनाओं पर निर्भर थी। मेरी आँखों पर बँधी पट्टी शायद सही सूचनाएँ मिलने में भी बाधक बनी रही। इसी कारण मेरा विवेक सही निर्णय नहीं ले सका।

"लेकिन···लेकिन माधव, अब क्या हो सकता है। अब तो बहुत देर हो चुकी है। मेरी एक भूल ने कितना बड़ा अनर्थ किया। मैं पापिन हूँ। हे पार्थसारथी, बताओ अब मेरे पाप का प्रायश्चित्त कैसे हो सकता है?"

"बुआ, जो होना था सो हुआ। समय की सुई को उलटा नहीं घुमाया जा सकता, लेकिन उससे सबक लेकर भविष्य को जरूर सुरक्षित किया जा सकता है। आने वाले युग की हर नारी को परिस्थितियों के समक्ष समर्पण करने अथवा आँख पर पट्टी बाँधने की बजाय उसे क्या करना चाहिए, आप यह ज्ञान तो उन्हें दे ही सकती हो।"

"ठीक कहा केशव! जो अपराध मुझसे हुआ है, उसे दोहराया नहीं जाना चाहिए। पति पत्नी में परस्परता हो और उसका आधार पूरक होने में ही है। दोनों एक-दूसरे की न्यूनता को भरें। यदि पति में कोई कमी हो भी तो पत्नी को अपनी प्रतिभा और क्षमता का विस्तार करना चाहिए। यदि

मैं अपनी आँखों पर पट्टी बाँधने की बजाय महाराज धृतराष्ट्र की दृष्टि बनती तो इतना अनर्थ कदापि न होता। यदि महाराज पिता के रूप में अपने कर्तव्य का पालन ठीक से नहीं कर पा रहे थे तो मुझे अपनी संतान के हित में माता और पिता दोनों की भूमिका निभानी चाहिए थी। ऐसा करना चुनौती जरूर हो सकती था, लेकिन असंभव कतई न था।

"भविष्य की हर नारी से मेरी प्रार्थना है कि वह किसी भी कीमत पर उस गलती को न दोहराए, जो मुझसे हुई। मन में चाहे कितने भी महाभारत चलते रहें, लेकिन मस्तिष्क में विवेक और संयम ही रहना चाहिए। बेशक एक नारी का प्रथम कर्तव्य पति, संतान और परिवार के प्रति होता है, लेकिन उसका अपने कर्तव्य से विचलन पूरे समाज को प्रभावित कर सकता है। उसकी भूल एक राष्ट्र पर भी भारी पड़ सकती है।"

"बुआ आप धन्य हैं। आपको बारंबार प्रणाम!"

"नहीं केशव, मैं अपराधिन हूँ। मैंने ही अपने शतपुत्रों का वध किया है। महाभारत के विनाश और हजारों-लाखों की अकाल मृत्यु की जिम्मेदार मैं ही हूँ! हाँ, हाँ, मैं ही हूँ!"

ए-२/९ ए, राष्ट्र-किंकर हस्तसाल रोड,
उत्तम नगर, नई दिल्ली-११००५९
दूरभाष : ९८६८२११९११

कविता

सूखी नदी के प्यासे ओठ

• बी.एल. आच्छा

किरणें जेठ की
बरसा रही हैं आग
बहती नदी सूख गई है
सुखा दी भी गई है
पवित्रता के मंत्रों के साथ
शहर की गंदगी उलीचते हुए।

नमामि नदियाँ अब
कचरास्मि में बदल गई हैं
प्रगति के औद्योगिक
काले जल में, तेजाबी पानी में
शहराती सभ्यता लिये।

नदी सभ्यता पर शहराती नक्शे
पाट देते हैं पाट नदी के
अट्टालिकाओं से घिरे
दरशाते प्रकृति प्रेम
होटली स्वादों के संग
जीवित नदी को करते असंग।

हो स्खलन या भूस्खलन
मीठी हो या अलकनंदा
जेबें नहीं जानतीं जीवन
जीव-जंतु वानस्पतिक का
अतिक्रमण के अध्यायों से
अवरुद्ध प्रवाह संसृति का।

गाँव से दूर कभी चट्टानों में
कुछ ठहरा-सा नद-जल
नजर मारते पंछी
उतर आते थे आस लिए
जंगली पशु भी भटक-दौड़कर
प्यास बुझाते थे।

सूख गया है गीलापन
बिलबिलाते हैं प्राण
नदी के प्यासे ओठ
छितराए हैं किनारों से
रेतीली हृदयस्थली में जैसे
माँ के स्तनों से रोआसे-सिसकते
चिपके हों दोनों तट।

तट के वासिंदे
झाड़ियों के झुरमुट
पेड़ों के संपुट
कैसे सूख गए हैं कँटीले से
जैसे चुनावी गरमी में
गीले सपनों की आशा
रह जाती है महज प्रहार की भाषा।
चुभते कँटीले शब्दों में
लोकतंत्र का परिचय दे जाती हैं।

प्यासे होंठों के तट पर
कुछ ट्रैक्टर, कुछ बुलडोजर
हक जमाए हैं बजरी पर
छेदते नदी-हृदय को
सूखे आँसू भी कहाँ बचे हैं।
सूखती नदी तो उत्सव है
बजरी लूटती जेबों का
सूखे में हरियाती लक्ष्मी का।

कितनी आस लिये
बैठे हैं पंछी सूखी डालों पर
नदी माँ की गोदी में
जड़ें भी अकुलाती हैं भीतर से।
कितने बिलबिलाते हैं
जंगल के प्राणी
कब जल-चुंबन देगी नदी माँ
जंगल के जीवन को।

सुपरिचित कवि-लेखक, व्यंग्यकार। 'आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के उपन्यास, सर्जनात्मक भाषा और आलोचना', 'जल टूटता हुआ की पहचान', 'आस्था के बैंगन', 'पिताजी का डैडी' संस्करण व्यंग्य प्रकाशित। देवराज उपाध्याय आलोचना पुरस्कार, पं. नंददुलारे वाजपेयी आलोचना पुरस्कार, समीक्षा सम्मान, भाषा भूषण सम्मान इत्यादि से सम्मानित।

फ्लैट नं-७०१, टावर-२७
स्टीफेंशन रोड (बिन्नी मिल्स)
पेरंबूर, चेन्नई-६०००१२ (तमिलनाडु)
दूरभाष : ९४२५०८३३३५

राम और रामराज्य की प्रासंगिकता

● रसाल सिंह

निरंतर बदलते मानवीय मूल्यों ने समाज को आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक आदि अनेक स्तरों पर प्रभावित किया है। उपभोक्तावादी संस्कृति की चपेट में आकर समकालीन मनुष्य अपने संस्कार, रीति-रिवाजों और जीवन-दृष्टि आदि से विच्छिन्न होता जा रहा है। जिसका मुख्य कारण पश्चिमी जीवन-शैली के प्रति मोह व भारतीय संस्कृति के प्रति अनासक्ति की भावना का बढ़ना है। कोई भी संस्कृति अकस्मात् जन्म नहीं लेती, बल्कि समाज की प्रत्येक पीढ़ी अपने संस्कारों, रीति-रिवाजों, खान-पान, जीवन-शैली का हस्तांतरण अगली पीढ़ी को करती है। यही प्रकिया 'परंपरा' का निर्माण करती है। कोई भी समाज संस्कृति के बिना जीवित नहीं रह सकता। परंपरा और नूतनता के समावेश से संस्कृति सदा प्रवहमान बनी रहती है। किंतु जब कोई समाज अपनी विचारधारा, सामाजिक मूल्यों, परंपराओं आदि से पृथक् होने लगता है और किसी दूसरी संस्कृति को अपनाने लगता है, तब परोक्ष रूप से सामाजिक और सांस्कृतिक संकट बढ़ने लगते हैं।

वर्तमान युग सूचना क्रांति का युग है। इस क्रांति के परिणामस्वरूप विश्व-समाज में बहुत-सी अवधारणाएँ बदलने लगी हैं। एक अप्रत्याशित संक्रमण समाज और संस्कृति में देखने को मिल रहा है। बदलती अवधारणाओं व संक्रमण के कारण सामाजिक और सांस्कृतिक संकट का सामना विश्व के अनेक देश कर रहे हैं। भारतवर्ष भी इससे अछूता नहीं है। भारतीय समाज ने 'वसुधैव कुटुंबकम्' की अवधारणा को आत्मसात् करते हुए संपूर्ण विश्व को सदैव एक परिवार माना है। इसलिए जहाँ एक ओर अनेक स्तरों पर भौतिक विकास हो रहा है, वहीं दूसरी ओर भारतीय समाज पश्चिम की संस्कृति को तीव्रता से अपना भी रहा है। हमारी विचारधारा, हमारी भाषा, खान-पान, रहन-सहन, पहनावा-पोशाक आदि सबकुछ पश्चिम का अनुगामी बनता जा रहा है। जबकि एक कटु सत्य यह है कि भारतीय और पश्चिमी समाज दो अलग प्रकार के समाज हैं। ये दोनों कम-से-कम जीवन-शैली एवं विचार की दृष्टि से एक समान तो कतई प्रतीत नहीं होते। पश्चिमी संस्कृति के अंधानुगामी होने के कारण अनेक प्रकार की समस्याएँ आज भारतीय जन-मानस को प्रभावित कर रही हैं। आज भारत का युवावर्ग अपनी जन्मभूमि, अपने राष्ट्र और राष्ट्रीय भावनाओं से विमुख होता जा रहा है। पश्चिमी संस्कृति की चकाचौंध उसे इस प्रकार आकर्षित करती जा रही है कि वह भारत की जगह पश्चिम के देशों में अपना जीवन-यापन करना चाहता है, अपनी बौधिक क्षमता का उपयोग पश्चिम के देशों को समृद्ध करने में लगा रहा है। ऐसे में बरबस हमें श्रीराम का वह कथन याद आ जाता है, जब वे लंका की चकाचौंध को महत्त्व न देकर अपनी मातृभूमि को स्वर्ग का दर्जा देते हुए कहते हैं—

सुपरिचित लेखक। दो कार्यावधि के लिए दिल्ली विश्वविद्यालय की अकादमिक परिषद् के निर्वाचित सदस्य रहे। अब तक छह पुस्तकें और २०० से अधिक लेख प्रकाशित। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में सामाजिक-राजनीतिक और साहित्यिक विषयों पर नियमित लेखन। संप्रति दिल्ली विश्वविद्यालय के किरोड़ीमल कॉलेज में प्रोफेसर।

अपि च स्वर्णमयी लंङ्का लक्ष्मण मे न रोचते।
जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी॥

भगवान् राम छोटे भाई लक्ष्मण से कहते हैं कि पूरी लंका नगरी ऊपर से नीचे तक सोने से मढ़ी हुई है, फिर भी हे लक्ष्मण, यह मुझे जरा भी अच्छी नहीं लग रही। मेरे लिए तो माँ और जन्मभूमि स्वर्ग से भी अधिक मूल्यवान हैं। इस चौपाई से हमें यह सीख मिलती है कि जो व्यक्ति अपनी जन्मभूमि से जुड़ा रहता है, वहाँ के मूल्यों को आगे बढ़ाता है, उन्हें महत्त्व देता है, वही दूसरों से आगे रहता है।

वस्तुस्थिति यह है कि रामराज्य की संकल्पना वाले राष्ट्र में आज पश्चिमी संस्कृति पूरी तरह हावी होती जा रही है। भारत में आज मानवीय मूल्य व्यक्ति केंद्रित होते जा रहे हैं और समाज के प्रति दायित्व-बोध की भावना व्यक्ति के भीतर खत्म होती जा रही है। इसका प्रमुख कारण भारतीय ज्ञान-परंपरा के प्रति समाज की उदासीनता, अनभिज्ञता और पश्चिम की संस्कृति के प्रति आकर्षण है। तुलसीदास द्वारा जिस रामराज्य की संकल्पना भारतवर्ष के लिए की गई थी, आज समाज उस संकल्पना को ही नहीं, अपितु मर्यादा पुरुषोतम श्रीराम के चरित्र को भी भूलता जा रहा है। विशेषकर युवा वर्ग में हमारी पुरातन मान्यताओं, वेद-पुराण, रामायण-महाभारत, रामचरितमानस आदि ग्रंथों के प्रति गौरव की

भावना का निरंतर ह्रास होता जा रहा है। भारतीय मान्यताओं के प्रति युवा वर्ग की दृष्टि नकारात्मकता की ओर बढ़ रही है। इसके कारण अनेक प्रकार की समस्याएँ हमारे दैनादिन जीवन का हिस्सा बन गई हैं। ऐसे में भारतीय मूल्यों को जाग्रत् करने के लिए भारतीय ज्ञान-परंपरा के प्रति समाज की रुचि को पुन: जाग्रत् करना अति आवश्यक है। तुलसीदास ने रामचरितमानस में कहा था—

दैहिक, दैविक, भौतिक तापा।
रामराज नाहिं काहुहि व्यापा॥

अर्थात् राम के राज में देह से संबंधित रोग, दैवीय प्रकोप और भौतिक आपदा आदि किसी प्रकार का कोई प्रभाव नहीं था। परंतु आज हमारी वस्तुस्थिति क्या है, इस बारे में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है। अभी कुछ समय पूर्व हम सभी ने कोरोना की त्रासदी का सामना किया है, दैहिक समस्याओं की इतनी बड़ी त्रासदी हमने शायद ही कभी देखी हो। उत्तराखंड में बाढ़ का प्रकोप, विश्व में आर्थिक संकट आदि रामराज्य का बोध तो कतई नहीं कराते। राम ने तो इन सभी पर विजय प्राप्त कर ली थी। उनके राज में दैहिक, दैविक और भौतिक तापों से सभी मुक्त थे। यही कारण है कि आज भारत सरकार द्वारा आजादी के अमृत महोत्सव के माध्यम से भारतीय ज्ञान-परंपरा, पुरातन संस्कृति, रामराज्य की आवश्यकता जैसे विषयों को जन-जन तक पहुँचाने का प्रयास किया जा रहा है। राम मंदिर के निर्माण की आवश्यकता भी इसी विचार दृष्टि से जुड़ी हुई थी।

किंतु रामराज्य की स्थापना के लिए सबसे प्रमुख कार्य राम के चरित्र को पुन: समाज के सम्मुख लाना है। उसे पुनर्प्रतिष्ठित करना है। वह समाज जो आज उपभोक्तावादी संस्कृति से ग्रसित हो गया है, उनके भीतर राम के चरित्र के माध्यम से ही पुन: दायित्वबोध, संवेदनशीलता, कर्तव्यबोध की भावना को जीवित व जागृत किया जा सकता है। राम का मर्यादा पुरुषोतम आदर्श चरित्र एकमात्र ऐसी शक्ति है, जो समाज को पुन: भारतीय हृदय प्रदान करने की क्षमता रखती है। राम के स्मरण मात्र से जीवन के आधे दु:ख दूर होने लगते हैं।

राजीव नयन धरें धनु सायक।
भगत बिपति भंजन सुखदायक॥

आज के समय में जब जगह-जगह अनाचार, अत्याचार बढ़ रहा है, ऐसे में राम की प्रासंगिकता भी बढ़ने लगती है। मानो प्रत्येक काल के लिए राम का चरित्र ग्रहणीय हो। मर्यादा पुरुषोतम राम की जीवन-दृष्टि वर्तमान में युवाओं के भीतर उस चेतना का प्रसार करती है, जिससे वे तटस्थ हो सकते हैं। सभी का आदर, माता-पिता और गुरु की आज्ञा का पालन, छोटे-बड़ों का सम्मान, नारी के प्रति सम्मान की भावना, त्यागबोध आदि वे सारे गुण राम के चरित्र में मौजूद हैं, जो पश्चिमी संस्कृति के आकर्षण के कारण आज युवा पीढ़ी में स्थानांतरित नहीं हो पा रहे हैं।

आज के समय में जब जगह-जगह अनाचार, अत्याचार बढ़ रहा है, ऐसे में राम की प्रासंगिकता भी बढ़ने लगती है। मानो प्रत्येक काल के लिए राम का चरित्र ग्रहणीय हो। मर्यादा पुरुषोतम राम की जीवन-दृष्टि वर्तमान में युवाओं के भीतर उस चेतना का प्रसार करती है, जिससे वे तटस्थ हो सकते हैं। सभी का आदर, माता-पिता और गुरु की आज्ञा का पालन, छोटे-बड़ों का सम्मान, नारी के प्रति सम्मान की भावना, त्यागबोध आदि वे सारे गुण राम के चरित्र में मौजूद हैं, जो पश्चिमी संस्कृति के आकर्षण के कारण आज युवा पीढ़ी में स्थानांतरित नहीं हो पा रहे हैं।

राम के चरित्र की महत्ता इसलिए भी अधिक बढ़ गई है कि प्रत्येक स्तर पर व्यक्ति यांत्रिक हो गया है। उसके भीतर अहं की भावना का विकास चरम पर है और यह विचार समाज के सभी वर्गों को प्रभावित कर रहा है। मानवीय मूल्य जिस प्रकार से विघटित हो रहे हैं, उसके लिए श्रीराम और उनके त्याग को एक सुंदर उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। राम के द्वारा माता की आज्ञा के कारण अपने संपूर्ण जीवन को न्योछावर कर देना, वनवास को अपनाना वर्तमान पीढ़ी के लिए त्याग का पाठ पढ़ाने का एक श्रेष्ठतम उदाहरण है। आज पारिवारिक संबंध छोटे-छोटे स्वार्थों के कारण निरंतर टूटते जा रहे हैं। संबंधों की मधुरता भौतिकता और स्वार्थपरता के कारण नष्ट होती जा रही है। मनुष्य का मनुष्य के प्रति प्रेम भाव कम होता जा रहा है। ऐसे में श्रीराम का चरित्र मानवमात्र में प्रेम की भावना को आजीवन जीवित रखने का संदेश देता है। चाहे वह प्रेम माता-पिता के प्रति हो, पत्नी के प्रति या शबरी के प्रति। वर्तमान समय में पारिवारिक और सामाजिक संबंधों की मधुरता को बचाए रखने के लिए श्रीराम जैसे नायक को युवा पीढ़ी के सम्मुख लाना अत्यंत आवश्यक हो गया है।

हम जानते हैं कि पश्चिमी संस्कृति व्यक्ति केंद्रित होने के कारण व्यक्ति को अधिक महत्त्व देती है। जबकि भारतीय मान्यताएँ परिवार और समाज को महत्त्वपूर्ण मानती हैं। भारत में सुख-दु:ख को बाँटने की प्राचीन परंपरा श्रीराम के समय से चली आ रही है। आज हमारा समाज अपनत्व की उस भावना से दूर हो गया है, जहाँ पुत्र के लिए माता-पिता और गुरु की आज्ञा ही सर्वस्व मानी जाती थी। पश्चिमी संस्कृति के प्रभाववश आज भारत में भी भौतिकतावादी जीवन-शैली समाज के भीतर अपनत्व, बंधुत्व, साहचर्य आदि की भावना को समाप्त कराती जा रही है। रामराज्य की परिकल्पना इन भावनाओं को जीवन की आधारभूत आवश्यकताओं में से एक मानती है। आज राजनीति में स्वार्थपरता इतनी अधिक बढ़ती जा रही है कि प्रजा का हित संकट में है। प्रजा में राजा के प्रति सम्मान का भाव किसी भी सुशासित व संपन्न राज्य का उदाहरण होता है। राम ने राजा होते हुए भी प्रजा को सदैव प्रमुखता दी, जबकि आज का शासन सत्तापरस्त होकर केवल अपने हितों के विषय में सोच रहा है। रजा राम और प्रजा के संबंधों की व्याख्या करते हुए रामकथा में लिखा है—

मुखिया मुख सों चाहिए, खान पान को एक।
पालै पोसै सकल अंग, तुलसी सहित विवेक॥

अर्थात् मुखिया को मुख या मुँह के समान होना चाहिए। तुलसीदासजी

कहते हैं कि मुँह खाने-पीने का काम अकेला करता है, लेकिन वह जो खाता-पीता है, उससे शरीर के सारे अंगों का पालन-पोषण करता है। इसलिए मुखिया को भी ऐसे ही विवेकवान होना चाहिए। विवेकवान होकर वह अपना काम अपने तरह से करे, लेकिन उसका फल सभी में बाँटे। यहाँ मुखिया राजा और अंग प्रजा का द्योतक हैं। आज की राजनीति में राजा और प्रजा का संबंध शायद ही कहीं देखने को मिले। पश्चिमी राजनीति में यह दिखना तो दुर्लभ ही है। आज वैश्विक स्तर पर देखें तो अलग-अलग देशों के बीच विध्वंसक युद्ध हो रहे हैं। इसका मुख्य कारण जनकल्याण नहीं, बल्कि एक-दूसरे को नीचा सिद्ध करना, अपनी शक्ति को अधिक दिखाना और साम्राज्यवाद का विस्तार करना बनता जा रहा है। चीन, पाकिस्तान जैसे देश बारंबार भारत से मित्रता दिखाने का मिथ्या प्रयास करते हैं और समय-समय पर पीठ में खंजर भोंकते हैं। अपने साम्राज्य का विस्तार करने की कोशिश करते हैं। रामकथा हमें ऐसे मित्रों से भी सावधान रहने की सीख देती है—

आगें कह मृदु बचन बनाई।
पाछें अनहित मन कुटिलाई॥
जाकर चित अहि गति सम भाई।
अस कुमित्र परिहरेहिं भलाई॥

किष्किंधा कांड में श्रीराम ने मित्रों के लक्षण के विषय में बताया है। उन्होंने कहा कि अच्छा मित्र जीवन में बड़ी उपलब्धि है। ऊपर की चौपाई में लिखा है कि जो सामने तो कोमल वचन कहता है और पीठ-पीछे बुराई करता है, ऐसे लोगों से हमेशा दूरी बनाकर रखनी चाहिए, क्योंकि ये स्वार्थी होते हैं। भगवान् राम अपने भाई लक्ष्मण से कहते हैं कि हे भाई, जिसका मन साँप की चाल के समान टेढ़ा है, ऐसे कुमित्र को तो त्यागने में ही भलाई है। सच्चा मित्र हमेशा स्पष्ट बात करता है। सच्चा मित्र आपको सही राय देता है। मित्रता में एक-दूसरे के प्रति खुला हृदय होना चाहिए।

इसलिए विश्व समाज आज लाखों-करोड़ों लोगों का विध्वंस देख रहा है। ऐसे में राम की युद्धनीति भी समाज के सम्मुख एक आदर्श प्रस्तुत करती है। रामराज्य यह बताता है कि युद्ध किसी समाज के लिए सुख का सूचक नहीं है। यही कारण है कि राम ने रावण से युद्ध करने की बजाय सर्वप्रथम युद्ध न करने का निवेदन किया था। कोई भी अच्छा शासक प्रजा का अहित नहीं चाहता। इसी सोच की आवश्यकता आज संपूर्ण विश्व समाज को है। राम जैसे भारतीय महानायक का चरित्र हर उस समस्या का समाधान है, जिससे समकालीन विश्व जूझ रहा है। यही कारण है कि गांधीजी ने भी बार-बार अपने स्वराज की संकल्पना को रामराज्य से जोड़ा था। रामराज्य की अवधारणा समाज को सकारात्मकता की ओर ले जाती है। इसमें स्त्री का सम्मान है, विपक्षी राजा के प्रति भी घृणा का भाव नहीं, अपितु सम्मान का भाव है। रामराज्य की संकल्पना में प्रजा दयनीय स्थिति में नहीं दिखाई पड़ती और अपने पक्ष को रखने के लिए स्वतंत्र होती है। अर्थात् रामराज्य उस विचार का सूचक है, जहाँ सब सुखमय और प्रजाहितकारी है।

वर्तमान युग में पश्चिमी संस्कृति के प्रति मोह के कारण जब पारिवारिक विघटन चरम पर है, राजनीतिक सत्तापरस्तता एकमात्र विकल्प है, भौतिक्तावाद, स्वार्थपरता आदि समाज में निरंतर बढ़ रहा है, ऐसे में राम के चरित्र और रामराज्य की परिकल्पना को अपनाना अत्यंत आवश्यक हो जाता है। गोस्वामी तुलसीदासजी की रामराज्य की अवधारणा समाज को सही दिशा प्रदान कर सकती है। संभवत: समाज को पश्चिमी संस्कृति से होने वाली क्षति से बचाने का एकमात्र विकल्प आज प्रभु श्रीराम का चरित्र और रामराज्य की परिकल्पना ही है।

साअ

२३५४, तृतीय तल, हडसन लाइन,
किंग्सवे कैंप, दिल्ली-११०००९
दूरभाष : ८८००८८६८४७

पाठकों से निवेदन

- जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है, कृपया वे सदस्यता का नवीनीकरण समय से करवा लें। साथ ही अपने मित्रों, संबंधियों को भी सदस्यता ग्रहण करने के लिए प्रेरित करने की कृपा करें।
- सदस्यता के नवीनीकरण अथवा पत्राचार के समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।
- सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो कृपया इसकी सूचना अलग से पत्र द्वारा अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख करते हुए दें।
- चैक **साहित्य अमृत** के नाम से भेजे जा सकते हैं।
- ऑन लाइन बैंकिंग के माध्यम से बैंक ऑफ इंडिया के एकाउंट नं. 600120110001052 IFSC-BKID 0006001 में **साहित्य अमृत** के नाम से शुल्क जमा कर फोन अथवा पत्र द्वारा सूचित अवश्य करें।
- आपको अगर **साहित्य अमृत** का अंक प्राप्त न हो रहा हो तो कृपया अपने पोस्ट ऑफिस में पोस्टमैन या पोस्टमास्टर से लिखित निवेदन करें। ऐसा करने पर कई पाठकों को पत्रिका समय पर प्राप्त होने लगी है।
- सदस्यता संबंधी किसी भी शिकायत के लिए कृपया फोन नं. 011-23257555, 8448612269 अथवा sahityaamritindia@gmail.com पर इ-मेल करें।

सात के सप्त रंग

● उमाशंकर चतुर्वेदी

सुपरिचित साहित्यकार, व्यंग्यकार। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। अपर संचालक, लोक शिक्षण मध्य प्रदेश (से.नि.)। साहित्य में योगदान के लिए अनेक पुरस्कारों से सम्मानित।

सात का अंक हमारे यहाँ अत्यंत शुभ और अति महत्त्वपूर्ण माना गया है। वेदों, शास्त्रों, पुराणों तथा अन्यान्य ग्रंथों में भी सात का अंक सब अंकों में सर्वोपरि होकर अपनी सत्ता जमाए हुए है। सात के अंक को अति पवित्र मानते हैं। हम लोग सात ऋषियों की संतानें हैं। ये सात ऋषि हैं—वसिष्ठ, कश्यप, अत्रि, जमदग्नि, विश्वामित्र, भरद्वाज और गौतम। महाभारत के अनुसार सप्त ऋषि ये हैं—अत्रि, अंगिरा, वसिष्ठ, मरीच, पुलह, कृतु और पुलस्त्य। कल्प भेद अनुसार भिन्न-भिन्न सप्त ऋषि हैं। ऋषि भी सात प्रकार के बताए गए हैं। ये हैं—कांड ऋषि, परम ऋषि, महर्षि, राजर्षि, श्रुतर्षि, ब्रह्मर्षि और देवर्षि। आकाश में तारागणों का सप्तर्षि मंडल स्थित है। पृथ्वी पर सात द्वीप हैं। ये सात द्वीप हैं—जंबू द्वीप, प्लक्ष द्वीप, शाल्वली द्वीप, कुश द्वीप, क्रौंच द्वीप, शाक द्वीप और पुष्कर द्वीप। हिंदू धर्म के अनुसार ब्रह्मांड में चौदह लोक हैं। पृथ्वी सहित ऊपर सात लोक हैं और पृथ्वी से नीचे सात लोक हैं। ऊपर के सात लोक हैं—भू लोक, भुवर लोक, स्वर्ग लोक, महर लोक, तपो लोक, जन लोक और सत्य लोक। पृथ्वी के नीचे पाताल है, जिसमें सात लोक हैं। शास्त्रों में वर्णित सात पाताल लोक हैं—अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल, रसातल और पाताल। कुछ ग्रंथों में पृथ्वी के ऊपर ये सात लोक बताए गए हैं—देव लोक, यम लोक, स्वर्ग लोक, बैकुंठ लोक, शिव लोक, ब्रह्म लोक और परलोक।

अपने यहाँ सात पावन नगरी बताई गई हैं। ये पावन नगरी हैं—मथुरा, हरिद्वार, काशी, अयोध्या, उज्जैन, द्वारका और काँची। संगीत के सात स्वर होते हैं। ये हैं—सा, रे, ग, म, प, ध, नि। संगीत में सात राग बताए गए हैं। ये हैं—षढज, ऋषभ, गांधार, मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद। सप्ताह में सात दिन होते हैं—सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि और रविवार। शीतला सप्तमी और संतान सप्तमी दो तिथियाँ अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। सात छंद होते हैं—गायत्री, उष्णिक, वृहती, अनुष्टुप, पंक्ति, त्रिष्टुप और जगती। हिंदू धर्म में शादी के समय वर-वधू द्वारा सात फेरे लेने पर ही विवाह संपन्न होता है। इन सात फेरों को विवाह की सप्तपदी भी कहते हैं। विवाह को सात जन्मों का बंधन मानते हैं। सप्त पदी के बाद सुखी जीवन के लिए वर वधू द्वारा सात, पाँच वचन स्वीकार किए जाते हैं। शरीर में सात नाड़ी चक्र बताए गए हैं। ये नाड़ी चक्र हैं—सहस्रार, आज्ञा, विशुद्ध, अनाहत, मणिपूर, स्वाधिष्ठान और मूलाधार। मुख्य सात रंग ही होते हैं। सात रंग हैं—नीला, पीला, हरा, लाल, बैंगनी, नारंगी और जामुनी। इंद्रधनुष में भी सात रंग ही होते हैं। मुख्य धान्य सात बताए गए हैं—गेहूँ, चना, जौ, चावल, मूँग, उड़द और बाजरा। सात अनाजों को मिलाकर बनाया गया अनाज 'सतना' कहलाता है। सतनजा में जौ, गेहूँ, चना, ज्वार, बाजरा, मक्का, अरहर आदि सात अनाज होते हैं। दान के रूप में सतनजा का दान उत्तम माना गया है। दुनिया में सात अजूबे हैं। ये सात अजूबे विभिन्न देशों में इस प्रकार हैं—ताजमहल भारत, चिचेन इत्जा, मेक्सिको, क्राइस्ट द रिडीमर की प्रतिमा ब्राजील, रोमन कोलोसियम-इटली, माचू पिच्छू पेरु, चीन की विशाल दीवार-चीन, पेत्रा-जॉर्डेनियो। अपने देश के सात आश्चर्य हैं—ताजमहल-आगरा, स्वर्ण मंदिर-अमृतसर, गोमतेश्वर मंदिर-कर्नाटक, हंपी मंदिर-कर्नाटक, नालंदा विश्वविद्यालय-बिहार, कोणार्क सूर्य मंदिर-उड़ीसा, खजुराहो मंदिर-मध्य प्रदेश। शरीर में सात धातुएँ बताई गई हैं और ये हैं—रक्त, रस, मांस, मेदा, मज्जा, अस्थि और वीर्य। सात स्थानों की मिट्टी पवित्र मानी गई, जिसका उपयोग, यज्ञ, पूजा, राजतिलक आदि के समय किया जाता है। ये सात स्थान हैं—गौ शाला, घुड़साल, हाथीसाल, राजद्वार, वामी, नदीसंगम और तालाब।

भारत से सटे हुए सात पड़ोसी देश हैं—नेपाल, म्याँमार, बांग्लादेश, पाकिस्तान, श्रीलंका, भूटान और चीन। भारत की समुद्री सीमा सात देशों से लगती है। ये सात देश हैं—पाकिस्तान, श्रीलंका, मालदीव, बांग्लादेश, थाईलैंड, म्याँमार और इंडोनेशिया। सात समुद्र हैं—हिंद महासागर, आर्कटिक महासागर, दक्षिणी महासागर, उत्तरी प्रशांत महासागर, दक्षिणी

प्रशांत महासागर, उत्तरी अटलांटिक महासागर, दक्षिणी अटलांटिक महासागर। हिंदू शास्त्रों में सात सागर बताए गए हैं—लवण जल सागर, इक्षु सागर, मदिरा सागर, घृत सागर, क्षीर सागर, दही सागर और मीठा जल सागर। जहाँ नदी की सात धाराएँ मिलती हैं, उसे सप्त धारा कहते हैं। हरिद्वार में गंगा नदी की सात धाराएँ हैं। शास्त्रों के अनुसार हरिद्वार में सप्त ऋषि तपस्या कर रहे थे। उधर भागीरथजी की तपस्या से प्रसन्न होकर गंगाजी तेज गति से कलकल करती हुई निकलीं। सप्त ऋषियों की तपस्या में खलल न पड़े, इस कारण गंगाजी ने अपने आप को सात धाराओं में विभाजित कर आवाज धीमी कर ली थी। सप्त ऋषियों की तपस्थली के पास ही सप्त ऋषि घाट बने हुए हैं। वहीं सप्त सरोवर कुंड भी है और सप्त सरोवर तपोवन भी है। उधर उत्तर प्रदेश के पीलीभीत में टाइगर रिजर्व के अंदर भी सात झीलें हैं, जो सप्त सरोवर के नाम से प्रसिद्ध हैं। सप्त सरोवरों का बड़ा महत्त्व है। यज्ञ और राजतिलक के समय सप्त सरोवरों का जल मँगाया जाता है। मध्य प्रदेश के ओरछा धाम में बेतवा नदी भी सात धाराओं में विभाजित है, जिसे सत धारा कहते हैं। सात पत्तों वाला पौधा सप्त पर्णी कहलाता है। सात भुजाओं वाली आकृति को सप्त भुजी कहते हैं। सात खंड के भवन को सतखंडा कहा जाता है। इसी के बावस्ता एक तन्वंगी बुंदेली बाला, जिसका प्रियतम सातवें खंड पर है, परेशान होकर कहती है कि "मेरौ सतखंडा पै यार, मिलन कैसे होबेगो?" मंदिर की घंटी की आवाज सात सेकंड तक प्रतिध्वनि के रूप में हमारे शरीर के अंदर मौजूद रहती है। वह प्रतिध्वनि हमारे शरीर के सात आरोग्य केंद्रों को क्रियाशील करती है।

दुनिया में सात सुख बताए गए हैं। पहला सुख नीरोगी काया, दूसरा सुख, घर में हो माया। तीसरा सुख, सुलक्षणा पत्नी हो, चौथा सुख, आज्ञाकारी पुत्र हो। पाँचवाँ सुख, अपना स्वयं का आवास हो, छठवाँ सुख, कोई कर्ज न हो और सातवाँ सुख, अच्छी नौकरी या व्यवसाय हो। शास्त्रों में सात प्रकार की वायु का वर्णन है। ये सात प्रकार की वायु हैं—प्रवह, आवह, उदवह, संवह, विवह, परिवह और परावह। इन सात प्रकार की वायु के सात गण हैं, जो सात जगह अर्थात् ब्रह्म लोक, इंद्र लोक, अंतरिक्ष, भूलोक की पूर्व दिशा, भू लोक की उत्तर दिशा, भू लोक की दक्षिण दिशा और भू लोक की पश्चिम दिशा में विचरण करते हैं। इन्हीं सात गुणन सात अर्थात् उनचास प्रकार की वायु का उल्लेख रामचरितमानस में लंका दहन के प्रसंग में किया गया है। आयुर्वेद के अनुसार शरीर में गरमाहट लाने के लिए इन ७ चीजों का उपयोग करना चाहिए—गुड़, कालीमिर्च, हल्दी, लहसुन, मैथी, सूखे मेवे और शहद। हिंदी व्याकरण में व्यंजन अक्षरों के सात वर्ग हैं, क वर्ग, च वर्ग, ट वर्ग, त वर्ग, प वर्ग, अंतस्थ अथवा य वर्ग और ऊष्म अर्थात् अंतिम वर्ग। कथा वाचक बतलाते हैं कि ईश्वर की कथा या गुणानुवाद सुनने वाले श्रोता सात प्रकार के होते हैं। जो कथा सुनने में ध्यान नहीं देते हैं, वे सौता। जो देर से कथा सुनने आवैं, वे सोंटा। जो लज्जावश कथा न सुनें, वे शर्मौंता। जो कथा सुनकर समझें नहीं, वे सिलबट्टा। जो कथा सुनने में कुतर्क करें, वे सरौता। जो कथा में सोते रहते हैं, वे सोता। जो कथा को मन लगाकर सुनते हैं, वे श्रोता। आत्मा के सात गुण बताए गए हैं। धार्मिक ग्रंथों में सूर्य के रथ के सात घोड़े बताए गए हैं। वास्तव में ये सात घोड़े काल्पनिक हैं। वस्तुत: सूर्य के प्रकाश के सात रंगों से ही उसके सात घोड़ों की परिकल्पना की गई है। दुनिया में सात नसीहतें व्यावहारिक हैं, खफगी पिता की, दया माता की, होती की बहिन, अनहोती का यार, आँख की तिरिया, गांठी का दाम जब चाहो आवे काम और अनूठा शहर सोवै सो खोबै, जागे सो पावे। शंख बजाने के सात फायदे हैं, शरीर में ऊर्जा का संचार होता है, प्राणायाम होता है, हृदयाघात का खतरा कम होता है, फेफड़े पुष्ट होते हैं, स्नायुतंत्र सक्रिय होता है, घर के कीटाणु नष्ट होते हैं और मनोरोग नहीं होता है। संतों के असार के लिए सात गुण आवश्यक हैं, ओठों से सत्य वचन, आवाज में प्रार्थना, आँखों में दया, हाथों से दान, हृदय से प्रेम, चेहरे पर मुसकान और दूसरों को माफी।

अथर्ववेद में इन सात से कल्याण की प्रार्थना की गई है, मित्र, वरुण, यम, सूर्य, पृथ्वी, आकाश तथा स्वर्ग के सभी ग्रह। इसी वेद में इन सात के कल्याण की प्रार्थना की गई है, हमारे पिता का कल्याण हो, हमारी माता का कल्याण हो, गायों का कल्याण हो, सभी मनुष्यों का कल्याण हो, सभी कुछ सुदृढ़ सत्ता से युक्त हो, सभी शुभ ज्ञान से परिपूर्ण हों और हम चिरंतन काल तक सूर्य को देखें।

अथर्ववेद में इन सात से कल्याण की प्रार्थना की गई है, मित्र, वरुण, यम, सूर्य, पृथ्वी, आकाश तथा स्वर्ग के सभी ग्रह। इसी वेद में इन सात के कल्याण की प्रार्थना की गई है, हमारे पिता का कल्याण हो, हमारी माता का कल्याण हो, गायों का कल्याण हो, सभी मनुष्यों का कल्याण हो, सभी कुछ सुदृढ़ सत्ता से युक्त हो, सभी शुभ ज्ञान से परिपूर्ण हों और हम चिरंतन काल तक सूर्य को देखें। इसी में आगे प्रार्थना की गई है कि ये सात अर्थात् रुद्र, वसु, आदित्य, अग्नि, महर्षिगण, देवता और वृहस्पति हमें सुख और शांति प्रदान करें। इन सात से अभय की प्रार्थना की गई है, मित्र से, शत्रु से, परिचित से, अज्ञात से, रात्रि से, दिवस से और सभी दिशाओं से। इसी वेद में आगे सात कामनाएँ पूर्ण होने की प्रार्थना की गई है, हम सौ वर्ष जिएँ, सौ वर्ष देखें, सौ वर्ष तक ज्ञान प्राप्त करते रहें, सौ वर्ष तक उन्नति करते रहें, सौ वर्ष तक परिपुष्ट रहें, सौ वर्ष तक शोभा प्राप्त करते रहें और सौ वर्ष तक संपन्न रहें। विष्णु पुराण के सातवें अध्याय में विष्णु भक्त और कथा का अधिकारी उसे माना गया है, जो इन सात लक्षणों से युक्त हो, जो निज धर्म न छोड़ता हो, जो दुनिया को समभाव से देखता हो, जो पराया द्रव्य हरण न करे, जो हिंसा न करे, जो राग-द्वेष से रहित हो, जो मोह रहित हो और जो पर दारा से दूर रहता हो। महाभारत महापर्व में कहा गया है कि मित्र में ये सात गुण होने चाहिए—कृतज्ञ, धर्मनिष्ठ, सत्यवादी, अक्षुद्र, दृढ़ भक्ति, जितेंद्रिय और मैत्री मानने वाला। महाभारत के वन पर्व में कहा गया है कि क्षमा के सात गुण हैं, क्षमा ब्रह्म है, क्षमा सत्य है, क्षमा भूत है, क्षमा भविष्य है, क्षमा तप है, क्षमा शुचिता है और क्षमा द्वारा ही संसार धारण किया हुआ है। 'मालती माधव'

ग्रंथ के अनुसार शास्त्रों में प्रतिष्ठा, सहज स्वाभाविक ज्ञान, प्रगल्भता, गुण युक्त वाणी, काल का उचित विवेक, प्रतिभा और नवीनता, ये सात गुण विद्या की पूर्ति कामना को पूर्ण करने वाले होते हैं।

'मनुस्मृति' में कहा गया है कि गुणवती स्त्री, रत्न, विद्या, धर्म, शुचिता, सुभाषित और विविध प्रकार के शिल्प, इन सात को सब प्रकार से ग्रहण कर लेना चाहिए। 'मृच्छकटिक' ग्रंथ में ईश्वर से इन सात बातों के लिए प्रार्थना की गई है—गाएँ अधिक दूध देने वाली हों, पृथ्वी अन्न से परिपूर्ण हो, मेघ उचित समय पर बरसें, सभी को आनंदित करने वाली वायु चले, सभी प्राणी प्रसन्न रहें, ब्राह्मण सभी के द्वारा अभिनंदित हों और शत्रु पर विजय पाने वाले शोभा संपन्न, धर्मपरायण राजा ही पृथ्वी का पालन करें। 'श्रीमद्भगवद्गीता' के अनुसार ये सात स्थितियाँ विनाश का कारण बनती हैं—विषयों के चिंतन से आसक्ति, आसक्ति से कामना, कामना से क्रोध, क्रोध से अविवेक, अविवेक से स्मृति विभ्रम, स्मृति विभ्रम से बुद्धि नाश और बुद्धि नाश से पुरुष का विनाश हो जाता है। 'गीता' में ही कहा गया है कि मित्र, शत्रु, उदासीन, मध्यस्थ, द्वेषी, बंधु गण, पापी गण अर्थात् इन सात में समान भाव रखने वाला व्यक्ति सभी में श्रेष्ठ होता है। गीता में गुणातीत व्यक्ति के सात लक्षण बताए गए हैं—आत्मभाव में स्थित, सुख-दुःख में समान, निंदा स्तुति मान-अपमान में समान, प्रिय-अप्रिय में समभाव, मित्र-शत्रु में समान भाव, सभी कर्मों को त्यागने वाला और मिट्टी पत्थर सोना मैं समान भाव रखने वाला हो।

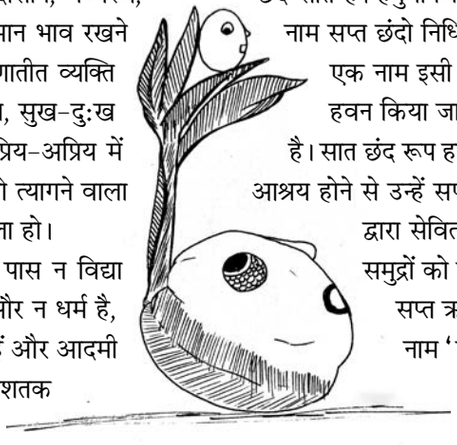

'भर्तृहरि नीति शतक' के अनुसार जिनके पास न विद्या है, न तप है, न दान, न ज्ञान, न गुण, न शील और न धर्म है, ऐसे सात प्रकार के व्यक्ति पृथ्वी पर भारस्वरूप हैं और आदमी के भेष में मृगों की तरह घूमते हैं। इसी नीतिशतक में कहा गया है कि अच्छी संगति सात काम करती है—बुद्धि की जड़ता खत्म करती है, वाणी में सत्य का अभिसिंचन करती है, सम्मान में वृद्धि करती है, पाप दूर करती है, चित्त प्रसन्न रखती है, दिशाओं में कीर्ति विस्तार करती है और सर्व कल्याण करती है। चाणक्य नीति में कहा गया है कि झूठ भाषण, उतावलापन, छल-कपट, मूर्खता, अधिक लालच, अशुद्धता और दयाहीनता, ये सात लक्षण कुलटा स्त्रियों के हैं। इस नीति में आगे लिखा है कि अपने पैर से इन सात को नहीं छूना चाहिए—अग्नि, गुरु, ब्राह्मण, गौ, कन्या, वृद्ध और बालक। चाणक्य नीति अनुसार विद्यार्थी, नौकर, पथिक, भूख से व्याकुल, भय से त्रस्त, भंडारी और द्वारपाल, इन सात को सोता हुआ देखे तो जगा देना चाहिए। ये लोग अपने कर्तव्यों का पालन जागकर या सचेत रहकर ही कर सकते हैं। उसी प्रकार सर्प, राजा, सिंह, बर्र या ततैया, बालक, दूसरे का कुत्ता तथा मूर्ख व्यक्ति, इन सात को सोते से नहीं जगाना चाहिए, क्योंकि जगाने पर इनसे हानि हो सकती है। पंचतंत्र में कहा गया है कि मंत्र, तीर्थ, द्विज, देवता, देवज्ञ, वैद्य और गुरु इन सात के प्रति जैसी भावना होती है, उसे वैसी ही सिद्धि प्राप्त होती है। द्विज उस ब्राह्मण को कहते हैं, जिसमें ये सात गुण हों, एक समय भोजन कर पढ़ना, पढ़ाना, यज्ञ करना, यज्ञ कराना, दान देना, दान लेना और ऋतुकाल पश्चात् स्त्री प्रसंग करना। तुलसीदासजी के ग्रंथों में तो सात की सत्ता ही परिलक्षित होती है। राम चरित मानस में सात कांड हैं। संत जन इन्हें राम भक्ति के सात सोपान मानते हैं। ये सात कांड मानस सरोवर की सात सीढ़ियाँ हैं, जिनको ज्ञान रूपी नेत्रों से देखते ही मन प्रसन्न हो जाता है। रामचरितमानस में पक्षिराज गरुड़जी ने काग भुशुंडिजी से सात प्रश्न पूछे हैं। ये सात प्रश्न हैं—सबसे दुर्लभ शरीर किसका है? सबसे बड़ा दुःख क्या है? सबसे बड़ा सुख क्या है? संत-असंत में भेद क्या है? सबसे बड़ा पुण्य क्या है? सबसे बड़ा पाप क्या है? और मानस रोग कौन-कौन से हैं? काग भुशुंडिजी ने इन प्रश्नों के उत्तर देकर गरुड़जी की शंका का समाधान किया। रामायण में ही शंकर-पार्वतीजी संवाद में शंकरजी ने कहा है कि रामकथा इन सात अपात्रों को नहीं सुनानी चाहिए—हठशील व्यक्ति को, जिसका मन कथा सुनने में न लगता हो; लोभी को, क्रोधी को, कामी को, जो भगवान् का भजन न करता हो और जो ब्राह्मण-द्रोही हो। वैदिक छंद सात हैं। हनुमानजी इन सात छंदों के ज्ञाता हैं, इसलिए उनका एक नाम सप्त छंदो निधि है। सात स्वर्गलोक बताए गए हैं। हनुमानजी का एक नाम इसी से सप्त स्वर्लोक भी है। सामवेद के सात मंत्रों से हवन किया जाता है। हनुमानजी का एक अन्य नाम 'सप्त होता' है। सात छंद रूप हनुमानजी को 'सप्त छंद' भी कहते हैं। सप्तजनों के आश्रय होने से उन्हें सप्त जनाश्रय भी कहते हैं। हनुमानजी सात माताओं द्वारा सेवित होने से वे सप्त मातृ निसेचित कहलाते हैं। सात समुद्रों को लाँघने के कारण उन्हें 'सप्ताब्धि लंघन' कहते हैं। सप्त ऋषियों द्वारा वंदित होने से हनुमानजी का एक अन्य नाम 'सप्तर्षि गण वंदित' है। सामवेद के सात सुरों द्वारा गुणगान होने से हनुमानजी को 'सप्त सामोपगीत' भी कहते हैं। तुलसी बाबा कहते हैं कि संयोग, वियोग, भले, बुरे, शत्रु, मित्र और उदासीन, ये सात सभी भ्रम के फंदे हैं। धरती, धन, घर, नगर, परिवार, स्वर्ग और नर्क इन सात का विचार मन में आता है, उसकी जड़, मोह या अज्ञान है।

तुलसी बाबा लिखते हैं कि रामराज्य में सात प्रकार के सुख प्राप्त थे, सब में संतोष था, सभी सुखी थे, घर में सर्व सुविधाएँ, वन में भी सभी सुविधाएँ, कल्पवृक्ष से वृक्ष, पृथ्वी कामधेनु जैसी और मनोवांछित भोग-विलास प्राप्त था। बाबा कहते हैं कि श्रीराम का नाम, लीला, रूप, वस्त्र, आभूषण, छोटे भाई गण और अयोध्या के बालक ये सातों ललित हैं। श्रीराम के धनुष के सात अंग हैं, कोदंड और छह वाण, लव, निमेष, परमाणु, युग, वर्ष, कल्प। रामायण में ब्रह्म के सात गुण बताए गए हैं, ब्रह्म सर्व व्यापक है, विरक्त है, अजन्मा है, अकल है, अनीह है, अभेद है और वेदों से परे है। तुलसी बाबा लिखते हैं कि अगर ये सात अर्थात् संपत्ति, सदन, सुख, मित्र, माता, पिता और भाई श्रीराम के चरणों में प्रीति के बाधक हों तो उन्हें महत्त्व नहीं दिया जाना चाहिए। रामायण में तप के सात प्रभाव बताए गए हैं—तप से सुख प्राप्त होता है, दुःख दूर होता है, तप बल से ब्रह्मा सृष्टि रचते हैं, तप बल से ही विष्णु जगत् का पालन करते हैं, तप

बल से ही शंकर जी संहार करते हैं, तप बल से ही शेषनागजी पृथ्वी धारण किए हैं और तप ही सृष्टि का आधार है। हिमालय पर शिवजी, पार्वतीजी, देवता, ऋषि, मुनि, नाग और किन्नर, ये सात निवास करते हैं। राज्य के समस्त कार्य, लज्ज्या, प्रतिष्ठा, धर्म, पृथ्वी, धन और घर इन सात का रक्षण गुरु का सामर्थ्य करता है और उसका परिणाम भी शुभ होता है।

तुलसी बाबा दोहावली में लिखते हैं कि ज्योतिष शास्त्र के अनुसार यदि ये सात तिथियाँ अर्थात् द्वादशी, एकादशी, दसमी, तृतीया, षष्ठी, द्वितीया और सप्तमी क्रमशः इन सात दिनों रवि, सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनिवार को पड़े, तो ये सब कार्यों को बिगाड़ने वाली होती हैं। इसे कुयोग माना जाता है। ये सात सदा मंगलकारी बताए गए हैं—अमृत, साधु, कल्प वृक्ष, पुष्प, सुंदर फल, सुहावनी बात और जानकीनाथजी की भक्ति। तुलसी दोहावली अनुसार इन सात को रस बिगड़ने के पूर्व ही छोड़ देना चाहिए। ये सात हैं—नगर, स्त्री, भोजन, मंत्री, सेवक, मित्र और रस। राजा तभी सुखी रह सकता है, जब वह ये सात अर्थात् प्रजा, राज समाज, घर, अपना शरीर, धन, धर्म और सेना को शांत और सुयोग्य मंत्रियों के हाथ सौंप देता है। जिस राजा में ये सात गुण अर्थात् रक्षा करना, दान देना, प्रजा वत्सलता, उदारता, मधुरता, सत्यता और हितवादिता हों, उस राजा को विजय, ऐश्वर्य और बुद्धिमत्ता भूलकर भी नहीं छोड़ते हैं। तुलसी दोहावली अनुसार विपत्ति काल में ये सात मित्र होते हैं—धैर्य, धर्म, विवेक, सत् साहित्य, साहस, सत्य का व्रत और श्रीरामजी का भरोसा। इन सात योनियों अर्थात् जलचर, नभचर, थलचर, देवता, राक्षस, मनुष्य और नाग में उत्तम कोटि के बहुत कम होते हैं। तुलसी बाबा कहते हैं कि गिद्धराज की अनुपम मृत्यु का समाचार सुनकर विरक्त, कर्मयोगी, भक्त, मुनि, सिद्ध, ऊँच और नीच ये सातों गिद्धराज से ईर्ष्या करने लगे। सबने चाहा कि उन्हें भी गिद्धराज जैसी मृत्यु मिले। माया, जीव, स्वभाव, गुण, काल, कर्म और महत्त्व—ये सात ईश्वर रूपी अंक के संयोग से बढ़ते हैं और इस अंक के बिना व्यर्थ हो जाते हैं। श्रीराम के राज्य में ये सात कार्य अर्थात् खेती, मजदूरी, विद्या, व्यापार, सेवा, कारीगरी तथा अन्य सुंदर कार्य, कल्प वृक्ष के समान सुंदर और फलदायी थे। जब महाराज दशरथजी के चार अनुपम पुत्रों का जन्म हुआ, तब उन्होंने इन सात का दान दिया—हाथी, रथ, घोड़े, गौएँ, सोना, हीरे और नाना प्रकार के वस्त्र। ईश्वर के सात गुण बताए गए हैं—ईश्वर व्यापक, अकल, इच्छा रहित, अजन्मा, निर्गुण, अनाम और रूप रहित है। तुलसी बाबा कहते हैं कि ये सात स्थितियाँ संभव नहीं हैं, गरुड़ का भाग कौवा चाहे, सिंह का भाग खरगोश, क्रोधी कुशलता चाहे, शिवविरोधी संपत्ति चाहे, लोभी कीर्ति चाहे, श्रीहरि से विमुख व्यक्ति मोक्ष चाहे और कामी व्यक्ति निष्कलंकता चाहे? श्रीराम के सात गुण बताए गए हैं। वे परम ब्रह्म, अविगत, अलख, अनुपम, विकार शून्य, अनाम और अंत रहित हैं। श्रीराम और उनके तीनों भाइयों के ये सात कार्य एक साथ संपन्न हुए थे—जन्म, बाल्यकाल का भोजन, सोना, लड़कपन के खेलकूद, कर्ण छेदन, यज्ञोपवीत और विवाह। तुलसी बाबा लिखते हैं कि पर्णकुटी के पास चित्रकूट रूपी शिकारी को ये सात चीजें मिल गई—मंदाकिनी की धनुषाकार धारा का धनुष, मंदाकिनी स्वयं प्रत्यंचा, साम, दान, दंड, भेद, रूपी चार बाण और कलियुग के पाप रूपी हिंसक पशु। रहीम कवि के अनुसार ये सात छिपाए नहीं छिपते हैं—कत्था, खून, खाँसी, खुशी, दुश्मनी, प्रेम और नशा। वे लिखते हैं—खैर, खून, खाँसी, खुशी, बैर, प्रीति, मदपान/रहिमन दाबे ना दबे, जानत सकल जहान। इसी प्रकार तुलसी बाबा कहते हैं कि किसी भी विपत्ति से ये सात गुण आपको बचा लेंगे—आपकी विद्या, आपकी नम्रता, विवेक, साहस, अच्छे कर्म, सत्यव्रत और भगवान् के प्रति विश्वास। वे लिखते हैं कि तुलसी साथी विपत्ति के, विद्या, विनय, विवेक/साहस, सुकृति, सुसत्यव्रत, राम भरोसे एक।

रहीम कवि के अनुसार ये सात छिपाए नहीं छिपते हैं—कत्था, खून, खाँसी, खुशी, दुश्मनी, प्रेम और नशा। वे लिखते हैं—खैर, खून, खाँसी, खुशी, बैर, प्रीति, मदपान/रहिमन दाबे ना दबे, जानत सकल जहान। इसी प्रकार तुलसी बाबा कहते हैं कि किसी भी विपत्ति से ये सात गुण आपको बचा लेंगे—आपकी विद्या, आपकी नम्रता, विवेक, साहस, अच्छे कर्म, सत्यव्रत और भगवान् के प्रति विश्वास। वे लिखते हैं कि तुलसी साथी विपत्ति के, विद्या, विनय, विवेक/साहस, सुकृति, सुसत्यव्रत, राम भरोसे एक।

सात का अंक बहुत ही चमत्कारी है। सात के अंक से संबंधित अनेक लोक विश्वास, कहावतें, मुहावरे और लोकोक्तियाँ हैं। एक लोक विश्वास के अनुसार संध्या समय ये सात कार्य वर्जित हैं—चारपाई पर लेटना या सोना, रोना या शोक मनाना, सियार का बोलना, तुलसी पर जल चढ़ाना, घर में झाड़ू लगाना, घर की देहरी पर बैठना और घर में अंधकार रखना। सात पाँच वचन का मुहावरा शादी की तरफ इशारा करता है। चुनाव, सात पाँच की लाकड़ी, अर्थात् मिलजुलकर लड़ा जाता है। सात घाट का पानी पीना का अर्थ है, बहु अनुभवी अथवा चालाक होना। सात पाँच करने का अर्थ चालाकी दिखाना होता है। सातवें आसमान पर होना का अर्थ बहुत घमंडी होना होता है। सात रंग के सपने संजोना का अभिप्राय ऊपर ही ऊपर उड़ने से होता है। सत्ते पे सत्ता का मतलब समान दाँव खेलना होता है। जो किसी को बहकाता है, उसके लिए कहा जाता है कि सात पाँच मत करो। गलत आदमी भी पड़ोसियों से झगड़ा नहीं करता है, तभी तो लोकोक्ति है कि डायन भी सात घर छोड़ देती है। एक बुंदेली कहावत है कि "सात सौंजियाई का बाप कुत्ता कढ़ोरत", अर्थात् कभी-कभी सम्मिलित उत्तरदायित्व भी असफल रहता है। सातवें आसमान पर पहुँचने का अभिप्राय बहुत प्रसन्न होने से है।

इस प्रकार लगता है कि सात के अंक की महिमा तो सातवें आसमान को छू रही है।

साअ

'पारिजात', बँगला नं-२९८ सी
सर्वधर्म-बी सेक्टर, कोलार रोड
भोपाल-४६२०४२ (म.प्र.)
दूरभाष : ९८२६५५३४८४

भोजपुरी लोकगीतों में मानवीय संवेदना

● ऋता शुक्ल

भोजपुरी लोक-साहित्य उस क्षीरसागर की तरह है, जिसकी रसमयता कभी कम नहीं हो सकती। स्मरण करें हमारी उन पुरखिनों का, मातृसत्तात्मक समाज में श्रेष्ठ पद प्राप्त करने वाली उन ऋषिकाओं का, जो अपनी शिशु-परंपरा का संरक्षण-संवर्धन करती हुई, लोकगीतों का अमृतरस घोलती पूरे परिवेश को मंगलमय करती होंगी।

लोकपरंपरा के उन्मेष की गाथाएँ रचने वाली सहज मानवीय भावना उस गंगोत्तरी की तरह है, जिसे सुमधुर गीतधर्मिता के साथ अपनी कंठध्वनि में सहेजती न जाने कितनी मातामहियों, पितामहियों ने अपने दिव्य मनोलोक से इस धरती पर उतारा होगा।

लोकमंगल विद्यायिनी इस लोकगीत गंगा में मनुष्य के हर्ष-विषाद, जीवनोत्सव के अलभ्य अनुभवों की इंद्रधनुषी आभा का विस्तार है। मानवजीवन में रसधर्मिता के संस्कार भरने वाले भोजपुरी लोकगीतों में सृष्टि के वे समग्र उपादान संरक्षित हैं, जिन्हें जिजीविषा की प्राणशिरा के रूप में स्वीकार किया गया है।

भारतीय लोक-संस्कृति के सभी अंगों को भोजपुरी लोकगीतों की अनहदता में बड़ी विशदता के साथ सहेजा गया है। सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, दार्शनिक, प्राकृतिक, देशप्रेम और सौंदर्यानुभूति से भरे ये गीत चेतना में नई उमंगों की उद्‌भावना करने वाले हैं।

समाज के बिना मनुष्य का जीवन अपूर्ण है। भोजपुर के सामाजिक संस्कारों में लोकगीतों के मानवीय पक्ष का सौंदर्य अप्रतिम है। भारतीय सनातन संस्कृति में हमारे जीवन से जुड़े हुए प्रत्येक संदर्भ की विशेष उत्सवधर्मिता है। घर, परिवार में नव-संतति के जन्म का उछाह है। मायका, ससुराल—दोनों ही परिवारों के सदस्य और पूरा समाज उस आनंद पर्व में सम्मिलित है। नाई यह शुभ संदेश घर-घर पहुँचाता है। प्रिय पाहुन मानकर उसका यथोचित सत्कार किया जाता है। पंडित प्रवर नवजात की लग्नपत्रिका का शोध करते हैं। रँगरेज नई धोती और चुनरी लाता है। बढ़ई सुंदर पीढ़ा, पालना गढ़ता है। माली फूलों के हार गूँथकर लाता है। पूरा परिवेश आनंदमय हो उठता है।

सोहर के बोल बड़े सुहावन, मनभावन लगते हैं—

कहँवा से आवे रेशम धोतिया
त धोतिया सोहावन लागे जी।
ललना कहँवा से आवे चुनरिया,
चुनरिया मनभावन लागे जी।
पटहेरिया लावे रेशम धोतिया,
रँगरेज चुनरिया नु जी।
ए सासुजी, अम्मा मोरी भेजेली चुनरिया,
चुनरिया मनभावन लागे जी!

गाँव-जवार के सबलोग प्रमुदित भाव से बेटी के लिए सौगात सजाते हैं। गाँव की बेटी, सबकी बेटी—यह सात्त्विक भावना ही भारतीय संस्कृति की मूलाधार है।

राधा-कृष्ण, सीता-राम जैसी पावन अस्मिताएँ, वात्सल्य रस में पगी हुई कौशल्या, देवकी, यशोदा जैसी माताएँ और न जाने कितने ही दिव्य पुरुष-स्त्री अपनी समस्त मानवीय ऊर्जस्विता के साथ भोजपुरी लोकगीतों के उपजीव्य बने हैं। परस्पर अनुराग की मूल्यवत्ता, संबंधों की मधुरता सुख-दु:ख में एक साथ रहने का करुणा भाव भोजपुर जनपद की चेतना का अमृतत्व यही अकूत मानवीय संवेदना ही तो है।

भोजपुर जनपद का इतिहास श्रमशीलता की महत्ता से ओत-प्रोत है। अंग्रेजों के निष्ठुर शासन काल में आरा, छपरा, बलिया, बनारस आदि प्रमुख नगरों से श्रमशील युवकों की टोली को पानी के जहाज से भर-भरकर अज्ञात स्थानों पर मेहनत-मजदूरी के लिए भेजा गया था। हमारे उन पुरखों, पुरखिनों के साथ तुलसी का पौधा, रामचरितमानस की पोथी और कुछ सपनों की धरोहर थी। हाड़तोड़ परिश्रम और असीमित धैर्य के साथ उन्होंने सागर-तट के निर्जन क्षेत्रों को अपने रक्त से सींचकर उर्वर बनाया और अंग्रेजों का जुल्म सहते हुए भी अपनी जिजीविषा को कायम रखा।

सुप्रसिद्ध कथाकार। 'अरुंधती', 'दंश', 'अग्निपर्व', 'समाधान', 'बाँधो न नाव इस ठाँव', 'शेषगाथा', 'कनिष्ठा उँगली का पाप', 'कितने जनम वैदेही', 'कासों कहों मैं दरदिया' तथा 'मानुस तन' कृतियाँ चर्चित। 'क्रौंचवध तथा अन्य कहानियाँ' कृति भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा पुरस्कृत। इसके अलावा लोकभूषण सम्मान आदि विशिष्ट पुरस्कारों से सम्मानित।

मॉरीशस, गुयाना, ट्रिनिडाड, सूरीनाम, केन्या जैसे देशों में भोजपुरी लोकगीतों का बड़ा महत्त्व है। भोजपुरिया माटी की सोंधी सुगंध में रचे-बसे गीत इन भारतवंशियों के लिए सबसे बड़ी सांस्कृतिक धरोहर है। गंगा, यमुना, सरयू, सोन, गंडक जैसी नदियों, आरा, बनारस, मिर्जापुर, छपरा, बक्सर जैसे शहरों से जुड़ी स्मृतियाँ वहाँ के लोकमानस में संजीवनी शक्ति बनकर सुरक्षित हैं। अनंत ऊर्जा का अक्षय स्रोत सँजोने वाले सूर्योपासना व्रत के लिए विश्वप्रसिद्ध भोजपुर जनपद का वैदिक काल से भरपूर उल्लास के साथ मनाया जाने वाला एक ऐसा पवित्र पर्व है, जो तीन दिनों के निर्जल व्रत के साथ सांध्यकालीन सूर्य को अर्घ्य देने और प्रभातकालीन उगते हुए सूर्य की मनुहार करने में व्यतीत होता है। सूप, दउरा, फल, ठेकुआ, लहठी, सिंदूर, माटी के चूल्हे पर बनाए गए पकवान, देसी घी, कच्चे दूध, गंगाजल से सूर्यदेव का अभिषेक और आँचल पसारकर भुवन-भास्कर की परिक्रमा! जल में कटिप्रदेश तक निमग्न भोजपुर की तिरिया को अपनी सुध कहाँ! न जाने कहाँ से अपार शक्ति हर व्रती महिला के अंग-प्रत्यंग में विराजने लगती है। वनस्पति द्वारा प्रदत्त प्रत्येक नैसर्गिक उपहार की डाली सूर्य भगवान् के लिए। उनका ताप है तो जीवन है, उनकी सप्तरश्मियों की छुअन है तो सृष्टि के कण-कण में चेतनता है।

भोजपुरी छठगीतों की लयात्मकता, सुरम्यता और मोहकता में मानवीय करुणा की सहज दीप्ति है। एक पारंपरिक छठगीत है—

लाली खड़उँवा ए दीनानाथ पियर जनेव
कहँवा लगवल ए दीनानाथ अतनी अबेर
बीचे रहतिया ए सेवका अन्हरा भेंटाय
आँखि पलटवइत ए सेवका भइले अति देर
बीचे रहतिया ए सेवका कोढ़िया भेंटाय
काया पलटवइत ए सेवका भइले अति देर
बीचे रहतिया ए सेवका बाँझिनि भेंटाय
*कोख पलटवइत ए सेवका भइले अति बेर··

लाल रंग की खड़ाऊँ और पीले रंग का यज्ञोपवीत पहनकर सूर्य भगवान् पूर्व दिशा में खड़े हैं। छठ व्रती महिला पूछती है—'हे दीनानाथ, अर्घ्य देने का समय हो गया है, इतना विलंब क्यों?'

सूर्य भगवान् उत्तर देते हैं—'बीच मार्ग में एक अंधा व्यक्ति मिला, उसकी प्रार्थना पर उसे आँखों की दीप्ति देनी थी। एक कुष्ठ रोगी मिला, उसकी चिरौरी पर उसे स्वस्थ काया देनी थी। एक नि:संतान महिला मिली, उसे संतान का वरदान देना था। इसी कारण से विलंब हुआ।'

अथर्ववेद में सूर्य की किरणों के स्पर्श से असाध्य रोगों के उपचार की सत्यता सिद्ध की गई है—*ज्योगव दृशेम सूर्य्यम्!*

सूर्य पूरे विश्व की भौतिक और आध्यात्मिक शक्तियों का मूल स्रोत है। वे विसर्गमूलक जाग्रत् देवता हैं, जो त्याग सिखाते हैं। उनकी रश्मियाँ कोई भी भेदभाव नहीं जानतीं।

भोजपुरी लोकगीतों की राजनैतिक चेतना के सूत्र मानवीय संवेदनाओं से निर्मित हैं। फिरंगियों के क्रूर शासनकाल में राष्ट्रवैभव की उन्मुक्त अभिव्यक्ति देने वाले रघुवीर नारायण सिंह के बटोहिया गीत को भोजपुरी के राष्ट्रगीत का गौरव प्राप्त है। भारत की प्रकृति, संस्कृति, कला, साहित्य और शौर्य की सुंदर गाथा से भरी इस अनमोल रचना को लोक-चेतना का संपूर्ण समादर प्राप्त है—

सुंदर सुभूमि भइया, भारत के देसवा से
मोरे प्रान बसे हिम खोहरे बटोहियाऽ··!

लगभग इसी तर्ज पर लिखा गया प्रिंसिपल मनोरंजन प्रसाद सिंह का 'फिरंगिया' गीत अंग्रेजों के अत्याचार का भयावह दृश्य सामने रखता है—

सुंदर सुघर भूमि भारत के रहे रामा
आजु इहे भइल मसान रे फिरंगिया!

इस मार्मिक गीत में भारत देश के लिए स्वराज की गोहार लगाई गई है। अंग्रेज राज के समय देश की दुर्दशा का चित्र अनेक लोकगीतों में मिलता है—

आइल अँगरेज के जमनवाँ
गुजर कइसे होई सजनवा
भारतमाता खड़ी पुकारेली
जाग हो देस के ललनवा!

भारतीय लोकमानस की समष्टि चेतना को संपूर्ण उत्सवधर्मिता के साथ उजागर करने वाले लोकगीतों की मलय सुरभि सबके मन-प्राणों को अनुप्राणित करती है। इन लोकगीतों का समाज 'वसुधैव कुटुंबकम्' की अनुभूति से ओत-प्रोत है। संयुक्त परिवार की व्यवस्था में परस्पर सहयोग की भावना, माता-पिता, पुत्र-पुत्री, भाई-बहन के अतिरिक्त ननद-भावज, जेठ-जेठानी, देवर-देवरानी, पति-पत्नी और गाँव-समाज से जुड़े सभी संबंधों के सम्यक् निर्वाह की मानसिकता के दुर्लभ चित्र भोजपुरिया संस्कृति के वैशिष्ट्य को प्रस्तुत करते हैं। बेटी के विवाह का एक दृश्य देखें। गाँव में बसने वाले सभी लोगों का कन्या के विवाह में उत्साहपूर्ण सहयोग मिलता है—

तेलिन ले आवेली तेल
तमोलिनी पान-फूल हो
मालिन ले आवेली गजरा
*धिया के पहिरावेली हो··
बढ़ई गढ़ेला पलंगिया

रँगरेज रँगे चुनरी हो
पंडित लावेले पोथिया
त धोबिन सोहाग देबे हो¨¨ !

तेली की पत्नी तेल लाकर देती है, तमोलिन पान-फूल लाती है, मालिन हार और गजरा ले आती है, तब कन्या का शृंगार होता है। बढ़ई पलंग गढ़ता है, रँगरेज लाल टहकार चुनरी रँगता है। पंडित पोथी लेकर आते हैं। धोबिन बेटी को सोहाग देती है।

बेटी की माँ और घर-परिवार की, गाँव-जवार की बड़ी-बूढ़ियाँ विदाई के समय आशीष देती हैं और साथ-ही-साथ उचित-अनुचित की सीख भी देती हैं कि अपनी कोमलता और सहिष्णुता से ससुराल में सबका मन जीत लेना। यदि कोई किसी बात का उलाहना भी दे तो हँसकर टाल देना—

सासु-ननद बेटी ओरहन दीहें,
ले लीह अँचरा पसारी जी!

परिवार यदि मनुष्य की पहली पाठशाला है तो माँ उस पाठशाला की प्रथम गुरु। शुभ्र संवेदना और अनुशासन की छुअन देकर वह अपनी संतान को सुदक्ष बनाती है। भोजपुरी लोकगीतों में वृद्ध माता-पिता के लिए अपार श्रद्धा और सेवाभाव देखा जा सकता है—

सभवा बइठन के ससुर माँगिले
मचिया बइठन के सासु ए छठि मइया¨¨

छठ माता, सूर्यदेव से व्रती स्त्री माँगती है कि सभा में पाग बाँधकर बैठने वाले, परिवार का शुभचिंतन करने वाले मेरे श्वसुर को हमेशा स्वस्थ, दीर्घायु बनाए रखें। मचिया पर बैठी मेरी सासु माँ का अनुशासन भरा प्यार कभी मुझसे दूर नहीं हो!

भोजपुर जनपद श्रमशीलता को अपना पुरुषार्थ मानता है। ईमानदारी से कमाया गया धन-वैभव उसे सुख-शांति दे सकता है। भोजपुर का पुरुष-समाज अपनी भुजाओं की अथाह शक्ति और बुद्धिबल में भरोसा रखता है। खेत, खलिहान हों या गाँव के बाहर आजीविका का कोई भी सम्मानजनक सुयोग मिले, भोजपुर के लोग अपनी श्रमशीलता सिद्ध करने में नहीं चूकते।

वृद्धाश्रम की राह बताने वाली पुत्रवधुओं को सबक सिखाने वाले इस छठ लोकगीत की सार्थकता हर युग में रहेगी। घर का कोई भी आनंद-पर्व सास, ननद, जिठानी के बिना अधूरा रहता है—

सासु के भेजबो नउनिया
ननद के बारिनिया नु हो
गोतिनी के रउरे प्रभु जाईं
हम ही गोतिनी पाइंचि

सासु माँ को संदेशवाहिका ठकुराइन भेजकर बुलाना है, ननद के लिए बारिन जाएगी। गोतिनी को लाने के लिए विशेष आदरभाव के साथ पति स्वयं जाएँगे।

परस्पर सौम्यता और मधुरता ही भोजपुर की सांस्कृतिक विशिष्टता है। किसी भी मंगल कार्य के पूर्व मातृ-पितृ पक्ष के पूर्वजों के आह्वान-पूजन की परंपरा है—

पूजेली बाबाजी के पाँव
सुदिनवा के जनमल हो
पूजेली आजी के पाँव
त पितर मनाइलें

मनुष्य की जीवन-यात्रा में आर्थिक पक्ष का बड़ा योगदान है। जन्म से लेकर मृत्यु तक भौतिकता के उपादानों की आवश्यकता सबको होती है। धन अर्जित करना भी एक लक्ष्य है।

गाँव-घर में धन का अभाव है। नववधू का कष्ट देखकर उसका पति उसे प्रबोध देता है—

हम जइबो पूरुब बनिजिया
दरब लेइ आइब
जनि रोव ए धनि, जनि रोव
कलप मिटावहु,
हम जइबो राजा के नोकरिया
त धन लेइ आइब¨¨ !

तुम मत रोओ! मैं व्यापार करने के लिए पूरब जाऊँगा, राजा की चाकरी करूँगा और यथेष्ट धन लेकर गाँव लौटूँगा।

भोजपुर जनपद श्रमशीलता को अपना पुरुषार्थ मानता है। ईमानदारी से कमाया गया धन-वैभव उसे सुख-शांति दे सकता है। भोजपुर का पुरुष-समाज अपनी भुजाओं की अथाह शक्ति और बुद्धिबल में भरोसा रखता है। खेत, खलिहान हों या गाँव के बाहर आजीविका का कोई भी सम्मानजनक सुयोग मिले, भोजपुर के लोग अपनी श्रमशीलता सिद्ध करने में नहीं चूकते। एक लोकगीत में पत्नी चिंता व्यक्त करती है—

राजा हो रिमझिम बदरा बरिसे
नोकरी कइसे जइब हो¨¨।

पति उत्तर देता है—

रानी हो, मुखे रुमलिया, हाथ छतरिया,
धीरे-धीरे चलि जइबो,
साहेब तलब कहिहें ना।

सब प्रकार का अन्न उपजाने में कुशल भोजपुर का कृषक समाज कठिन परिश्रम से देश की आर्थिक उन्नति में अपनी साझेदारी निभाता है। उसी किसान के घर बेटी ब्याहने का रिवाज था, जिसकी खलिहान अनाज से भरी हो, जिसके घर में दुधारू गौमाता हो। किसी भी जाति या वर्ग का मनुष्य हो, कृषि संपदा ही उसकी संपन्नता का प्रतीक मानी जाती है। परस्पर सुख-दु:ख में यथासाध्य आर्थिक सहयोग करना भी भोजपुर की संस्कृति का अनिवार्य पक्ष है। भोजपुरी लोकगीतों में भूखे को अन्न, फटेहाल को वस्त्र देने के साथ-साथ रोजगार की वृद्धि हेतु उसकी आर्थिक मदद की बात भी कही गई है—

सात घर के चुल्हवा एके में जोरइहें जी
केहु चले पनरह कोस, केहु बीस कोसजी

साँझ बेरा एके छतवा होखेला जेवनार जी!

भले ही सात घर अलग-अलग हैं, लेकिन साँझ ढलते एक ही चूल्हे पर सबकी रसोई पकती है। कोई पंद्रह कोस तो कोई बीस कोस चलकर काम-काज पूरा करे। परिवार-समाज में सबकी साझेदारी बराबर की होती है।

भोजपुरी लोकगीतों का धार्मिक या आध्यात्मिक पक्ष मानवीय संवेदना की दृष्टि से अत्यंत सुदृढ़ है। गणपति, शिव-पार्वती, राम-सीता, कृष्ण-राधा जैसे आराध्य युग्मों से जुड़े मनोहारी गीतों में जीवन की सार्थकता के अंश सन्निहित हैं। भोजपुर के समाज में किसी भी शुभ कार्य का श्रीगणेश देवी मइया के गीत से होता है—

निमिया के डाढ़ मइया लावेली हिंडोलवा कि झूलि-झूलि ना,
मइया गावेली गितिया हो कि झूलि-झूलि ना¨

नीम की डाल से लगे झूले में देवीमाँ, शीतला माँ झूला झूल रही हैं। प्यास लगने पर वे मालिन से पानी माँगती हैं। मालिन का नन्हा बालक उसकी गोद में है। मालिन से माता कहती है—

बालक को हिंडोले में सुला दो और मुझे पानी पिलाओ!

मालिन ऐसा ही करती है। जल ग्रहण करने के बाद मालिन की सेवा-भक्ति से प्रसन्न होकर देवी उसे सपरिवार फलने-फूलने का आशीष देती हैं, बालक की रक्षा का वचन देती हैं। शताब्दियों से लोक-कंठ में बसे इस गीत को आज भी हर भोजपुरिया घर में देवीमाँ के प्रति बड़े आदरभाव के साथ गाया जाता है। किसी भी शुभ कार्य का शुभारंभ इसी गीत से होता है। विषपायी शिव के अड़भंगी स्वरूप के बावजूद हर कन्या शिव जैसे पति की कामना करती हुई उनका पूजन करती है। महादेव को मनाना हो तो पकवान नहीं देना है, भाँग-धतूरे से ही वे प्रसन्न हो जाते हैं—

पेड़ा-जलेबी सिव के मन ही ना आवे
भाँग-धतूरा कहाँ पाइब हो,
सिव मानत नाहीं।

भोजपुर की माताएँ अपनी कन्याओं के लिए राम सरीखा वर चाहती हैं—

राम के माथे तिलक भले सोभेला
चंदन सोभेला लिलार भले हो
आवसु राम चउक चढ़ि बइठसु¨¨।

राम के ललाट पर चंदन, दधि, अक्षत का तिलक शोभित है। पीतांबरधारी श्रीराम वर वेश में आसन पर बैठते हैं तो सबका हृदय मोह लेते हैं।

कुल मिलाकर भोजपुरी लोकगीतों का विस्तार उस दुग्ध-सागर की तरह है, जिसकी शुभ्र तरंगों में अवगाहन का सुख अनिर्वचनीय है। लोक-चित्त को मानवीय करुणा से सदैव आर्द्र रखने वाले भोजपुरी लोकगीतों में लोकमंगल का विराट् भाव सुरक्षित है।

'कहानी' टैगोर हिल रोड
मोराबादी, राँची-८३४००८
दूरभाष : ९४३११७४३१९

मरघट के मैदान में

कविता

● श्रीराम मीना

मैं माटी का एक घड़ा हूँ

संघर्षों में पला-बढ़ा हूँ, एक माटी का घड़ा हूँ मैं।
मेरे गाँव के लोग कह रहे, उनके फ्रिज से बड़ा हूँ मैं॥

गरमी में शीतल जल देता, हर मौसम से लड़ा हूँ मैं।
मौन विद्या में पारंगत हूँ, धरती माँ से जुड़ा हूँ मैं॥

वक्त कुम्हार के चलित चक्र पर, कितना घूमा हूँ मैं।
नीम-बबूल की छाया में ही खड़ा रहा हूँ मैं॥

ठोंक-बजा के सबने देखा, पानी भरकर भी देखा।
सबकी प्यास बुझाकर भी, खुद प्यासा रह जाता हूँ मैं॥

शुरुआत से अंत समय तक, काम तुम्हारे आऊँगा।
मरघट में भी फूट-फूटकर, गीत तुम्हारे गाऊँगा॥

एक दिन फूट जाऊँगा प्यारे, मरघट के मैदान में।
कंधे पर रख लेना मुझको, चिता और श्मशान में॥

गजब की चीज है तकिया

नींद का तकिए से रिश्ता समझ न आए।
बिना तकिए के नींद भी क्यों नहीं आए?

गद्दे-रजाई सोचते तकिए में ऐसा क्या?
आराम करने वाले को तकिया ही क्यों भाए?

रोज सपने बुना करता सोने वालों की आँखों में।
बौना भी सोना बन गया, ये समझ नहीं आए।

हम तो सब लात खाते हैं, मुआ यह सिर पे बैठे है।
उछलता-कूदता तकिया, पलंग को नींद न आए।

आँख तो आसमानों में, कान तकिए से चिपके हैं।
नाक कुछ सूँघती रहती, ध्यान तकिए में रहते हैं।

गजब की चीज है तकिया, नींद की जान तकिए में।
गजब के ख्वाब देता है, लगे भगवान् तकिए में॥

राष्ट्र जागरण मंच
बाबई रोड, मालाखेड़ी, होशंगाबाद-४६१००१ (म.प्र.)
दूरभाष : ८८७१५१०२४०

थपेड़े-दर-थपेड़े

● विष्णु भट्ट

प्यारे पाठको! आपने प्राकृतिक थपेड़ों के बारे में तो सुना ही होगा। जैसे समुद्र में अलनीनो के कारण उठी समुद्र की उत्ताल लहरों के थपेड़े, जो ५ से ६ मीटर तक उठती हैं और दूर-दूर तक के इलाकों को जलमग्न कर देती हैं। दूसरे, ठीक उसी तरह धरती पर रेगिस्तान में बवंडर के कारण उठी तूफानी हवाओं के जोरदार दबाव से रेत के टीले-के-टीले पल भर में देखते-ही-देखते समाप्त हो जाते हैं। चारों ओर धूल भरी आँधी से अंधकार छा जाता है। और तीसरे, एक ओर ऊँची पहाड़ी भागों में जमे बर्फ का थपेड़ा होता है, जिसे बर्फीला तूफान कहते हैं। बर्फीले थपेड़ों की ऐसी मार पड़ती है कि पूरा जन-जीवन ही अस्त-व्यस्त हो जाता है। ठीक इसी तरह मानव जीवन में भी दु:ख रूपी थपेड़े आते हैं, जिनके कारण भुक्तभोगी अपना चैन गँवा बैठता है। वह तड़पता है उन थपेड़ों से निजात पाने के लिए। यही है जीवन, जिसे मरते दम तक येन-केन प्रकारेण जीवन रूपी थपेड़ों के बाद भी जीना पड़ता है। जैसे प्रस्तुत कहानी की नायिका सुषमा ने जिया। अंतत: उसे थपेड़े-दर-थपेड़े खाते हुए जीवन से, इस निष्ठुर संसार से मरकर ही मुक्ति मिलती है। कैसे? यह तो इस कहानी को पढ़कर ही आपको ज्ञात हो सकेगा। तो कहानी यो शुरू होती है—

शहर से दूर कच्ची बस्ती में बनाए गए एक मकान में सुषमा उदास बैठी थी। आज वह अकेली थी। उसकी इस जीवन-नैया को खेने वाला कोई नहीं था। इस संसार रूपी अथाह सागर में उसकी जीवन नैया दर-दर की ठोकरें खाने के लिए आज एक ऐसे चौराहे पर पड़ी थी, जहाँ से कोई भी रास्ता तय करना मुश्किल ही नहीं अपितु अत्यंत कठिन भी था। कहने को तो उसके अपने तीन बच्चे थे, किंतु वे भी किशोर ने अपने पास रख लिये थे और उसे दर-दर भटकने के लिए अकेला बाहर निकाल दिया था। क्यों? आखिर उसका क्या अपराध था, जिसकी सजा वह पिछले बारह वर्षों से इस तरह से भुगतती चली आ रही है? कौन है उसका इस जहान में, जिसे वह अपने दिल के उद्‌गार कह सके और अपना मन कुछ हलका कर सके? कोई भी तो नजर नहीं आता, जिसे वह अपना कह सके। जब अपने ही अपने न रहे तो बेगानों पर कैसे विश्वास किया जाए?

रविवार होने के कारण आज आसपास के सभी लोग सैर-सपाटे को निकल पड़े हैं। औरों की तरह बाहर जाने की उसे कोई इच्छा नहीं है। उसका मन करता है कि वह खूँटी तानकर खूब जी भरकर नींद निकाले। लेकिन नींद भी तो नहीं आती। जी ही नहीं लगता। कैसे मन बहलाए? रैक में ढेर सारी पुस्तकें रखी हुई हैं, तो कुछ सामने छोटी सी टेबल पर

सुपरिचित लेखक। अब तक हिंदी में तीन कृतियाँ तथा राजस्थानी व हिंदी में बाल-साहित्य की सात पुस्तकों के अलावा पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। 'कर्तत्व रो पुकार' राजस्थानी भाषा में बाल-कहानियों की पुस्तक। 'पं. जवाहरलाल नेहरू बाल साहित्य पुरस्कार'; राजस्थानी भाषा, साहित्य एवं संस्कृति बीकानेर से पुरस्कृत।

भी एक-दो उपन्यास और अखबार रखे हैं। कहा जाता है कि "पुस्तकें एक अच्छे साथी की भूमिका निभाती हैं, न केवल मन बहलाने के लिए, बल्कि समय गुजारने के लिए भी।" सुषमा के पास अच्छी पुस्तकों का काफी कलेक्शन है, वह भी ऐसी, जिनको जितनी बार भी पढ़ा जाए, जी नहीं भरता।

लेकिन आज सुषमा का मन न जाने क्यों उदास है। तब अनमने भाव से उसकी उँगलियाँ रेडियो का स्विच ऑन कर देती हैं। वह समय ऑल इंडिया रेडियो की उर्दू सर्विस से फर्माइश के कार्यक्रम का था। जैसे ही रेडियो ऑन होता है, अनाउंसर की आवाज सुनाई देती है—"ये ऑल इंडिया रेडियो की उर्दू सर्विस है। पेशे-खिदमत है—आपकी फर्माइशी फिल्मी नगमों का प्रोग्राम 'आपकी पसंद' इसके साथ ही गाना शुरू होता है—

'भरोसा कर लिया जिस पर उसी ने हमको लूटा है
कहाँ तक नाम गिनवाएँ, सभी ने हमको लूटा है।'

फिल्म 'प्रभात' के इस गाने के इन शब्दों ने उसके रोम-रोम को रोमांचित कर दिया; मानो गीतकार ने उसकी ही भावना को गीत में उड़ेल दिया हो।

गीत के साथ ही उसे अपनी पुरानी यादें रह-रहकर उभरती हुई याद आ रही थीं—ठीक बारह वर्ष पहले, जब किशोर देहरादून के जंगलों में ठेकेदारी करता था। वह कितना सीधा-सादा था। उसकी चाल-ढाल, बात करने का तरीका और व्यवहार—सभी ऐसे थे, जैसे एक शरीफ इनसान में मौजूद होते हैं। पहली ही नजर में वह उसे अपना दिल दे बैठी थी। ईश्वर से उसने बार-बार यही प्रार्थना की थी कि उसे जीवनसाथी मिले तो किशोर। उसके अलावा उसका मन और किसी को स्वीकार नहीं करेगा। माता-पिता को उसकी शादी की चिंता सताने लगी थी, क्योंकि वयस्क लड़की की शादी अगर माता-पिता के सामने, उनके हाथों से हो जाती है

तो वे अपना जीवन धन्य समझते हैं। उसे वह दिन याद आया, जब किशोर उसके घर के सामने से गुजरा था। किस तरह उसने मौका देखकर उससे बहाने से बातचीत करनी चाही थी। यद्यपि उसके मन में यह भय था कि बिना जान-पहचान के किसी से बातें करते अगर किसी ने देख लिया तो वह क्या सोचेगा? लेकिन तब भी उसके पाँव उसी ओर बढ़े जा रहे थे, जिधर किशोर जा रहा था। वह एक जनरल स्टोर पर कुछ सामान खरीदने के लिए रुक गया था। वह भी जल्दी-जल्दी बड़े-बड़े डग भरती हुई उसी दुकान पर पहुँच गई। जनरल स्टोर उसके घर से बहुत दूर था। वहाँ कोई परिचित नहीं मिला। वह किशोर के ठीक बाजू में जाकर इस ढंग से खड़ी हो गई थी, जैसे वह उसी के साथ सामान खरीदने आई हो। यद्यपि उसका दिल जोर-जोर से धड़क रहा था। हमें काउंटर के सामने खड़ा देखकर दुकानदार बोला, "कहिए बाबूजी, क्या चाहिए?" किशोर ने आवश्यक सामान की लिस्ट दुकानदार को दे दी। उसे देखकर उसने तपाक से कहा, "बाबूजी, ये तो मर्दाने सामान की लिस्ट है। क्या इन बीबीजी के लिए कुछ भी नहीं लेंगे?" किशोर को एक झटका सा लगा, क्या उत्तर दे, इसी पसोपेश में उससे कुछ भी उत्तर देते नहीं बन रहा था। तब उसने फौरन उसकी ओर मुड़कर देखा। देखते ही दोनों की आँखों से आँखें मिलीं। दोनों ने आँखों-ही-आँखों में एक-दूसरे कुछ को कहा।

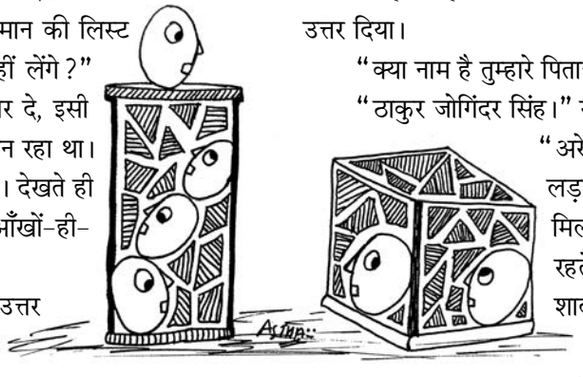

जब दुकानदार को अपने प्रश्न का उत्तर न मिला तो उसने फिर जोर देकर पूछा, "बाबूजी, किस सोच में डूब गए हो? अरे साहब, अगर बीबीजी को सामान नहीं खरीदोगे तो फिर इनको खुश कैसे रख सकोगे? अभी से इतनी कंजूसी?" यह सुनकर बेचारा किशोर एकदम हड़बड़ा गया था, जैसे किसी ने उसे नींद से झकझोरकर जगा दिया हो।

"अरे भाई, मुझसे क्यों पूछते हो? अगर इनको लेना है तो जो सामान ये कहें, पैक कर दो," एक ही साँस में किशोर ने यह सब कह डाला। लेकिन अपने ही बुने जाल में वह खुद ही फँस गई थी। कैसे उससे छुटकारा मिले? दुकानदार तीखी नजरों से उसे देखने लगा, क्योंकि उसका काफी समय व्यर्थ ही हमारे कारण नष्ट हो रहा था। दूसरे ग्राहकों का भी तो उसे ध्यान करना था। लेकिन जब तक वह पहले ग्राहक को निपटा दे, दूसरे ग्राहक को कैसे सामान दे सकता था! जब उसे चुप देखा तो फौरन दुकानदार बोला, "ऐसे ग्राहक अगर रोजाना मेरी दुकान पर आ जाएँ तो मुझे जल्दी ही दुकान बंद करनी पड़ेगी।...अच्छा बाबूजी, पहले मैं आपका सामान पैक करता हूँ, तब तक बीबीजी आप अपने सामान की लिस्ट दे दीजिए। जरा जल्दी कीजिएगा, साहब।"

तब तो उसकी हालत और भी बिगड़ गई थी। किशोर बिना बोले ही उसे देखता जा रहा था और वह मजबूर होकर शृंगार के सभी सामान की सूची तैयार कर रहा था। दुकानदार आया और बोला, "लीजिए बाबूजी यह पैकेट आपके सामान का है। अब लाइए दूसरी लिस्ट।"

किशोर ने देते हुए कहा, "माफ करना, हमारी वजह से आपको व्यर्थ ही परेशान होना पड़ा।" "कोई बात नहीं बाबूजी, व्यापार में तो ऐसा होता ही है।" दुकानदार ने जवाब दिया था। दुकानदार ने बहुत ही जल्दी वह पैकेट भी लाकर दे दिया। जैसे ही किशोर चलने को हुआ तो न जाने क्यों उसके पाँव किशोर के साथ-साथ चल रहे थे। दुकानदार भी उन दोनों को देर तक देखता रहा था। वे दोनों जब दूर निकल गए तो एक पार्क में, जहाँ फूल-ही-फूल खिले थे, जाकर बैठ गए। मुझसे मुखातिब हो किशोर ने हिम्मत करके कहा, "ईश्वर जो भी करता है, अच्छा ही करता है; क्यों, है न?" बिना उत्तर की प्रतीक्षा किए किशोर ने फिर पूछा था, "क्या मैं आपका परिचय जान सकता हूँ।" तब शर्म से लड़खड़ाते मैंने संक्षिप्त उत्तर दिया था, मुझे...मुझे सुषमा कहते हैं।"

"तुम्हारे पिताजी क्या करते हैं?" किशोर ने फिर पूछा था।

"यहाँ...यहाँ के...जंगलों में...ठेकेदार हैं।" सुषमा ने फिर उसी तरह उत्तर दिया।

"क्या नाम है तुम्हारे पिताजी का?" किशोर ने अगला प्रश्न किया।

"ठाकुर जोगिंदर सिंह।" सुषमा का उत्तर था।

"अरे वाह! आप ठाकुर जोगिंदर सिंह की लड़की हैं। मुझे बड़ी खुशी हुई आपसे मिलकर। अरे, हम दोनों तो हर वक्त मिलते रहते हैं। कल ही उन्होंने मुझसे आपकी शादी की चर्चा की थी, और कोई अच्छा सा लड़का ढूँढ़ने का आग्रह भी किया था!..." थोड़ी देर रुकने के बाद किशोर फिर बोला था, "सुषमाजी, एक बात पूछूँ?"

"पूछिए..." मेरा संक्षिप्त उत्तर था।

"क्या ऐसा नहीं हो सकता कि हम दोनों विवाह के बंधन में बँध जाएँ?"

"मैं...मैं...मैं क्या जानूँ। मेरे...मेरे...पिताजी...से आकर घर...घर पर बात कीजिएगा।" मैंने उत्तर दिया था।

"लेकिन क्या तुम मुझे स्वीकार कर लोगी?" यह सुनकर उसने अपनी गरदन शर्म से झुका ली थी। तब किशोर ने फिर अपना प्रश्न दोहराया था। प्रत्युत्तर में उसने अपनी मौन स्वीकृति दे दी और अपनी आँखें नीची कर ली थीं। दोनों की आँखें चार हुईं तो मेरी आँखों ने आँखों-ही-आँखों में किशोर को अपने प्रश्न का उत्तर दे दिया। वह किशोर को अपने घर का पता बताकर पैकेट हाथों में लिये अपने घर आ गई। लेकिन जब उसने पैकेट खोला तो कैसे दंग रह गई। उसमें सभी सामान मर्दाने निकले थे। असल में घर आने की हड़बड़ाहट में दोनों के पैकेट ही बदल गए थे।

एक दिन शाम को किशोर आया और बातों-ही-बातों में पिताजी से बोला, "ठाकुर साहब, आपको याद है, आपने एक लड़का ढूँढ़ने के लिए मुझसे कहा था, वह मैंने ढूँढ़ लिया है।"

"कौन है वह लड़का, उसका परिचय तो दो!"

"वह लड़का···वह लड़का···मैं हूँ, ठाकुर साहब।" किशोर ने कहा।

"कहीं मैं सपना तो नहीं देख रहा हूँ? मुझे मेरे कानों पर विश्वास नहीं हो रहा है, किशोर बाबू! आप सचमुच में देवता हैं।" खुशी प्रकट करते हुए पिताजी ने कहा।

"आप विश्वास कीजिए! मैं धन्य होऊँगा यदि आपकी लड़की का हाथ थाम सकूँ।" किशोर ने खुशी जाहिर करते हुए कहा।

इस प्रकार एक दिन शुभ मुहूर्त में हमारी शादी हो गई। मैं किशोर के पास ही रहने लगी। जीवन के दिन बड़े सुख से बीतने लगे और मैं माँ भी बन गई। पाँच वर्ष के अंतराल में मैं दो बच्चों की माँ बन गई। कहते हैं कि सुख के बाद दु:ख भी जरूर आता है। धंधे में हानि होने पर किशोर ने ठेकेदारी छोड़कर देहरादून भी छोड़ दिया, फिर काम की तलाश में घूमते-घूमते आखिरकार हम उदयपुर पहुँचे।

पर्यटक केंद्र उदयपुर के विषय में हमने काफी कुछ सुन रखा था, इसलिए पहले हमने उदयपुर के दर्शनीय स्थल देखने हेतु एक गार्ड को साथ ले लिया। एक टैक्सी किराए पर ले ली। गार्ड हमें उदयपुर के विषय में जानकारी देते हुए कह रहा था, "उदयपुर 'झीलों की नगरी' के नाम से जाना जाता है। देश और विदेश के बहुत पर्यटक यहाँ पर सैर-सपाटे के लिए तथा यहाँ की झीलों का भरपूर आनंद लेने के लिए हर रोज आते रहते हैं। यहाँ के पर्यटन उद्योग पर सरकार ही नहीं, बल्कि कई लोगों की रोजी-रोटी निर्भर है।"

इस तरह हमने दिन भर सभी ऐतिहासिक प्राकृतिक और धार्मिक स्थलों को घूमकर देखा, मन प्रफुल्लित हो उठा। जिस नगरी की चर्चा किताबों में पढ़ी थी, उसे जी भर कर देखने का अवसर मिला। यद्यपि उदयपुर के आस-पास धार्मिक स्थल भी थे, जैसे श्रीनाथद्वारा का मंदिर, काँकरोली में द्वारकाधीश का मंदिर और चारभुजा में चारभुजाजी का मंदिर। किंतु समयाभाव के कारण फिर बाद में कभी शेष रहे स्थलों को देखने का निश्चय कर हम लौट आए।

हमने शहर में एक अच्छा सा कमरा, जिसके साथ में किचन और लैटरिन-बाथरूम की सुविधा थी, को १२५० रुपए माहवार किराए पर ले लिया। किशोर ने टैक्सी-चालक के रूप में अपनी रोजी-रोटी कमाना आरंभ किया। वह पर्यटकों को उदयपुर के दर्शनीय स्थलों को दिखाने ले जाता। उनमें से विदेशी पर्यटक तो उसके अच्छे व्यवहार के कारण उसे ईनाम भी दे दिया करते थे। हमें किसी भी चीज की कोई कमी नहीं थी, टैक्सी का मालिक पहले तो राजेश पर खुश था। वह ३,५०० रुपए माहवार तनख्वाह देता था। बाद में जब काफी कमाई होने लगी तो किशोर ने बीच में ही नोट चुराने शुरू कर दिए। इसके साथ ही उसका उठना-बैठना ऐसे लोगों के बीच होने लगा, जो हर प्रकार के बुरे कामों में माहिर थे, जैसे शराब पीना, जुआ खेलना, मार-पीट करना, यहाँ तक कि झगड़ा होने पर किसी को भी चाकू मार देना आदि।

धीरे-धीरे इस संगत का असर किशोर पर हुआ और वह भी रात को देर से आने लगा। मैं सारी रात उसकी राह देखती रहती थी। मैं अकसर भूखे ही सो जाती, जबकि वह खा-पीकर आता था। मैंने बहुत कोशिश की समझाने की, लेकिन सब व्यर्थ। उस समय तक आठ साल का अरसा मेरी शादी को हो चुका था और तब तक मैं तीन बच्चों की माँ बन चुकी थी। वैसे तो किशोर सही हालत में मुझसे बहुत प्यार करता था, लेकिन शराब पीने के बाद उसे कुछ भी ध्यान नहीं रहता था। सारे मोहल्ले वाले तरह-तरह की बातें करते। मैं बहुत परेशान थी।

उस समय मैं आठवीं ही पास थी और कहीं भी सर्विस करना बड़ा मुश्किल था। घर का वातावरण ही कुछ ऐसा बन गया था कि मेरा मन न तो काम में और न पढ़ने में ही लगता था। इधर मेरे बच्चे भी छोटे-छोटे थे। टैक्सी के मालिक को जब कमाई कम होने लगी तो उसने किशोर को नौकरी से छुट्टी दे दी। गुजारा करना बड़ा मुश्किल हो गया। किशोर पहले से भी अधिक खूँखार हो गया। उसने मुझे पीटना भी शुरू कर दिया। धीरे-धीरे उसके साथियों ने भी उससे कन्नी काटनी शुरू कर दी थी। और सामने पड़ने पर उसे अपनी चिकनी-चुपड़ी बातों से बहलाकर खिसक जाते थे। गुजारा चलाना बड़ा मुश्किल हो गया। मकान छोड़ना पड़ा, क्योंकि मकान मालिक का किराया चढ़ गया था। फिर १,२०० रुपए महीने पर एक छोटा सा कमरा किराए पर लिया।

यहाँ तक तो सब ठीक था। मैं कठिन-से-कठिन दु:ख उठा सकती थी, यदि किशोर मुझे प्यार करता। औरत को अपने आदमी का प्यार चाहिए। वह प्यार के खातिर उस पर कुरबान हो सकती है, उसके लिए भूखी मर सकती है। लेकिन यदि उसका अपना ही पति दूसरे से अपनी पत्नी की इज्जत की रक्षा नहीं कर सकता तो वह पति कहलाने के काबिल नहीं। यही कुछ हुआ। एक भयानक बरसाती रात को जब मैं अपने पति का इंतजार कर रही थी। रात के दो बजे वह अपने कुछ साथियों के साथ आया। सभी शराब पीए हुए थे। दरवाजा खुलते ही सब एकदम से अंदर आ गए। मैंने किशोर के मुँह से उखड़े-उखड़े ये शब्द सुने···ये···रही··· मेरी···औरत···अब तुम सँभालो इसे···और वह नशे में धुत्त खटिया पर गिर गया। उनमें से एक व्यक्ति मेरी ओर झपटा और दूसरे ने मेरा मुँह बंद कर दिया। यह सब पलक झपकते ही हो गया। सबने मिलकर बारी-बारी से मेरी एकमात्र सुरक्षित संपत्ति को लूट लिया। यद्यपि मैंने अपनी अमूल्य संपत्ति की रक्षा करने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी, लेकिन चार लोगों के सामने अकेली की क्या बिसात थी! मैं रात भर रोती रही। वे सब लोग मुझे लूटकर जा चुके थे। जब किशोर का नशा उतरा तो उसने मुझे खटिया पर बँधा पाया। मेरा मुँह कपड़े से बंद था। उसने मुझे खोला। मैं खूब रोई। किशोर को खूब आड़े हाथों लिया। किशोर भी जो मुझे पीटने का आदि हो चुका था, वह मुझे पीटकर रही-सही कसर भी उसने पूरी कर दी।

मोहल्ले वाले इकट्ठे हो गए। मैंने आव देखा न ताव और फौरन पास के पुलिस स्टेशन गई और दारोगाजी को पूरी कहानी सुना दी। उन्होंने किशोर के और मेरे बयान लिये तथा गवाही के रूप में आसपास वालों से भी पूछा। मेरे जीवन की रक्षा के लिए दारोगाजी ने मुझे पुलिस चौकी में बिठा दिया। एक-दो दिन वहाँ रखने के बाद मुझे दारोगाजी ने सहानुभूति के रूप में किशोर से तलाक लेने के लिए कोर्ट में अर्जी देने के लिए अपने परिचित वकील को राजी कर लिया। उन दोनों ने मिलकर मेरे रहने

के लिए एक कमरा ठीक कर दिया और खाने-पीने का भी पूरा प्रबंध कर दिया। मैं दारोगाजी के अहसानों से दब गई। वकील साहब ने मेरी ओर से तलाक के कागजात तैयार करने के लिए मुझसे पूरी स्थिति की जानकारी लेनी चाही। टुकड़े-टुकड़े में वे जानकारी लेते रहे। एक टाइप किए कागज पर मेरे हस्ताक्षर लेकर उन्होंने मुझे आश्वस्त भी कर दिया कि कोर्ट में तलाक के लिए अर्जी दे दी गई है। उधर धीरे-धीरे दारोगाजी भी किसी-न-किसी बहाने मेरे पास आने लगे। दारोगाजी मुझसे अपने अहसान का बदला चाहते थे—मुझे अपने बिस्तर की शोभा बनाकर। मैंने साफ इनकार कर दिया, लेकिन मुझे डराकर दारोगा ने पुलिस चौकी में रात को बंद कर देने और सभी सिपाहियों द्वारा मेरी इज्जत लूटने की धमकी दी। दारोगा अब हर रात आने लगा, पर मकानमालिक की हिम्मत नहीं थी कि वह उसे रोके, क्योंकि उसी ने मुझे कमरा दिलवाया था। बाद में मुझे मालूम हुआ कि वह पूरा मकान दारोगाजी के पास गिरवी रखा गया था। इस तरह दारोगा मेरा रक्षक होकर भक्षक बन गया। मैं मजबूरी के बोझ से परेशान थी और किसी तरह छुटकारा पाना चाहती थी।

मेरे वकील साहब भी, जो स्वयं मुझ पर लट्टू थे, अपने शयनकक्ष में मुझे किसी-न-किसी बहाने बुलाने का मौका ढूँढ़ रहे थे। यह मुझे तब ज्ञात हुआ, जब उनकी असलियत साफ हुई। एक दिन बगुलाभगत को वह मौका मिल ही गया। कोर्ट में तलाक की अर्जी देने के बाद गवाहियाँ हुईं। तारीख पर तारीख पड़ती रहती, लेकिन तलाक नहीं मिल पा रहा था। वकील ने मुझे यह प्रलोभन भी दिया कि जल्द ही तलाक दिलवाकर वे मुझे दारोगा से भी छुटकारा दिला देंगे। वकील की दो लड़कियाँ थीं। उसकी बड़ी लड़की कोई विशेष खूबसूरत नहीं थी, किंतु उसकी छोटी लड़की खूबसूरत व गठीले बदन की थी, एक खिलती हुई कली। वकील की घरवाली को भी मुझसे सहानुभूति थी। एक दिन वकील साहब घर पर आए और मुझे रात को ८ बजे उनके ऑफिस में मिलने के लिए कह गए। मैं ठीक ८ बजे वहाँ पहुँची, थोड़ी देर केस के संबंध में बातें हुईं और अचानक उन्होंने पिक्चर का प्रोग्राम बना लिया। हम दोनों पिक्चर देखने गए। तब तक उनका व्यवहार साधारण था। पिक्चर देखकर घर वापस आते समय रास्ते में उन्होंने यह प्रस्ताव किया कि मैं उनके घर पर रात बिताऊँ। चूँकि तब तक सब साधारण था, अत: मैंने प्रस्ताव मान लिया। उनके घर जाने के लिए अँधेरी गलियों से होकर जाना पड़ता था, सो अचानक वकील महोदय ने प्रस्ताव बदलकर उनके ऑफिस में ही रात बिताने की पेशकश की।

स्थिति से अनजान मैंने वह प्रस्ताव भी मान लिया। उनके ऑफिस में मैं एक बेंच पर सोने के लिए लेट गई और दूसरी बेंच पर वकील। अचानक मुझे नींद लग गई। वकील ने इसका फायदा उठाया। वह मेरे पास अपनी वासना की भूख शांत करने के लिए आया। उसके छूते ही अचानक मेरी आँख खुल गई। मैंने भरपूर शक्ति से उसका प्रतिरोध किया। मैंने उस भूखे भेड़िए से बहुत प्रार्थना भी की और कहा कि वह मेरे पिता के समान है, लेकिन उस पर मेरी प्रार्थना का कोई असर नहीं हुआ। मैंने चिल्लाना चाहा तो उसने कहा कि चिल्लाने से मेरा तो कुछ बिगड़ेगा नहीं, परंतु तुम्हारी इज्जत जरूर मिट्टी में मिल जाएगी। मैं सब लोगों को यही कहूँगा कि वह खुद उसके पास आई थी अपनी वासनापूर्ति के लिए। उसके पास तलाक का मुकदमा लड़ने की फीस देने के लिए रुपए नहीं हैं तो वकील ने यह धमकी भी दी कि वह तलाक का केस छोड़ देगा। मेरी बोलती बंद हो गई और उस भेड़िए ने प्रतिरोध के बावजूद मुझे अपनी वासना का शिकार बना लिया, फिर उसके बाद हर सप्ताह या महीने वह मुझे अपनी वासना का शिकार बनाता रहा। मैं न तो मरने की और न जीने की, किसी तरह से पीछा छुड़ाना चाहती थी।

जब कोई उपाय नहीं सूझा तो मैंने उस जगह को छोड़ने का इरादा कर लिया। लेकिन कहते हैं न कि 'डूबते को तिनके का सहारा मिल जाए तो वह सहारा ही काफी मानसिक शक्ति प्रदान करता है।' वही सहारा मेरे लिए बना एक सह-किराएदार। कमरे की तलाश में एक बरसाती सुबह को दो व्यक्ति आए। वे मकानमालिक से पूछताछ कर रहे थे। तभी मकान मालिक ने मुझे आवाज देकर बुलाया, ताकि कमरा किराए पर देने से पहले पूरी तरह आश्वस्त हो जाए। बातचीत के दौरान पता चला कि दोनों एक ही संस्थान में कार्य करते हैं। एक पहले से ही पास ही एक किराए के कमरे में रहता है और दूसरा नया-नया ही इस शहर में आया है, जिसे कमरा दिलवाने के लिए वह उसके साथ आया हुआ है।

मेरी 'हाँ' के बाद उस व्यक्ति को एक कमरा, जिसके साथ लगा हुआ छोटा सा किचन था, सात सौ रुपए महीने के किराए पर दे दिया गया। मेरी 'हाँ' की मकान मालिक ने इसलिए आवश्यकता समझी होगी कि वह कमरा मेरे कमरे के ठीक सामने पड़ता था। मुझे कोई असुविधा न हो, इसलिए आश्वस्त करने के लिए उन्होंने मुझे बुला लिया था।

दूसरे दिन वह किराएदार अपने थोड़े से सामान को ठेले पर रखकर आया। मैंने पहले ही मकानमालिक से कहकर कमरा साफ करवा दिया था, ताकि किराएदार अपना सामान सलीके से रख सके। शाम को जब वह अपने कार्य से लौटकर अपने कमरे में आया, जिसका आभास मेरे टोह लेने वाले कानों से हो गया था। उसने कमरे का ताला खोला और किवाड़ भिड़ाकर कपड़े बदलने लगा, ऐसा मुझे उसके कपड़े झिटकने की आवाज से पता लगा। जब भिड़े हुए किवाड़ खुलने की आवाज हुई, तब मैं अपने कमरे से निकलकर बाहर आई। मैंने उस किराएदार को चाय का निमंत्रण दे डाला, क्योंकि मैं जानती थी कि नया होने से दूध वगैरह की व्यवस्था करने में समय लगता है। इसलिए उसके आते ही मैंने पड़ोसी धर्म का निर्वाह करते हुए चाय का पानी चढ़ा दिया था, बिना पूछे ही कि वह चाय पीता भी है या नहीं! मेरे निमंत्रण पर जब वह मेरे कमरे में आया, तब मैं आश्वस्त हो गई कि वह चाय पीता है।

चाय पीने के दौरान मैंने उसका परिचय जान लिया। मैंने भी अपना पूर्व इतिहास न बताते हुए केवल अपने बारे में संक्षिप्त जानकारी दी,

क्योंकि एक अनजान व्यक्ति के सामने बीती बातों को कहना अपने पाँवों पर कुल्हाड़ी मारने के समान होता है। चाय के दौरान ही मैंने उससे पूछ लिया था कि दूध डेयरी पर मैं सुबह-शाम दूध लेने जाती हूँ, अगर उसके पास समय न हो तो मैं ही दूध ले आया करूँगी। उसने आधा किलो सुबह और आधा किलो शाम को दूध के लिए हामी भर दी और जेब से सौ रुपए का एक नोट निकालकर मेरे हाथ में थमा दिया।

रविवार होने से उस दिन प्रकाश बाबू (यह नाम ही उस किराएदार का था, जिसकी जानकारी मुझे चाय पीने के दौरान मिली थी, अत: संबोधन पर भी फर्क पड़ेगा) छुट्टी पर थे। चूँकि मेरा परिचय हो चुका था, इसलिए मैंने उनके उठते ही, जब वे नित्यकर्म के लिए कमरे से बाहर निकले, तभी 'जय श्रीकृष्ण' बोलकर अभिवादन किया। इस रूप में सुबह और शाम को बत्ती होने पर अभिवादन करने का तरीका मुझे प्रकाश बाबू से ही सीखने को मिला, तब मैंने छुट्टी का प्रोग्राम पूछ लिया। कुछ निश्चित न होने पर मैंने उन्हें लंच पर अपने यहाँ खाने का निमंत्रण आग्रहपूर्वक दे डाला। एक तो अकेले, दूसरे होटल का खाना, अत: प्रकाश बाबू मेरा अनुरोध न टाल सके।

खाना खाने के बाद जब प्रकाश बाबू ने बड़ी आत्मीयता से मेरे बारे में पूछा कि जब से वे आए हैं, तब से न तो कोई पुरुष और न कोई बालक ही घर पर दिखाई दिया, तो मानो मेरी दुखती नस पर दबाव पड़ा हो। मैं अपने आपको रोक न सकी। मैं भावविभोर हो गई, मेरी आँखों से गंगा-जमुना बहने लगी। रोते-रोते ही मैंने अपनी पूर्व जिंदगी की कहानी की मुख्य बातें प्रकाश बाबू को बता दीं।

तब प्रकाश बाबू ने तुरंत एक सुझाव दिया कि मैं हायर सेकेंडरी की परीक्षा देकर एस.टी.सी. कर लूँ, ताकि अध्यापिका की नौकरी करके अपना भविष्य तो सुखमय बना सकूँ। यहाँ तक कि वे मुझे पढ़ाने के लिए भी तैयार हो गए।

समय व्यर्थ न गँवाने की दृष्टि से प्रकाश बाबू ने मेरे लिए हायर सेकेंडरी की पुस्तकें, कॉपियाँ और लेखन सामग्री ला दी और स्वाध्यायी (प्राइवेट) परीक्षार्थी के रूप में परीक्षा का फॉर्म भरवा दिया गया। प्रकाश बाबू के उत्साह के आगे मैं नतमस्तक हो गई। मेरी डूबती हुई नैया को पार लगाने के लिए प्रकाश बाबू तिनके का सहारा बनकर आए। जब उन्होंने देखा कि वे मुझे पढ़ाने के लिए समय नहीं निकाल पा रहे हैं तो उन्होंने कोचिंग क्लासेज में मेरा प्रवेश करवा दिया। जिसकी फीस भी उन्होंने जमा करवा दी। मैंने खुद को उनके अहसान तले दबती हुई महसूस किया। मैं भी किंकर्तव्यविमूढ बनकर नहीं रहना चाहती थी, अत: मैंने सबसे पहले उनसे होटल का खाना छुड़वाया और घर पर ही खाना बनाने हेतु आवश्यक साज-सामान खरीदवाए। बड़ी विनम्रता से मेरे हाथ का बना हुआ खाना खाने का मेरा अनुरोध उन्होंने अस्वीकार कर दिया था, क्योंकि उन्हें डर था कि कहीं मकानमालिक इस व्यवहार से कुछ और ही न समझ बैठे। मैं बड़ी परेशान थी कि कैसे प्रकाश बाबू को खाना बनाने, बरतन माँजने, झाड़ू-पोंछा के झंझट से मुक्त करूँ, जिसने मेरी डूबती नैया को इतना बड़ा सहारा दिया है।

एक दिन मैंने उचित समय देखकर मकान मालकिन से बात की। वह मेरी राय से सहमत हो गई। उसने अपने पति से परामर्श कर उसे भी राजी कर लिया। जब शाम को प्रकाश बाबू ड्यूटी से घर लौटे, तब मकान मालिक ने उन्हें रोककर घुमा-फिराकर खाना बनाना, बरतन साफ करना, झाड़ू-पोंछा आदि लगाने के लिए बाई की जगह मुझे यह काम सौंप देने की राय दी। उन्होंने न 'हाँ' की न 'ना' और सुनकर अपने कमरे में चले गए। हम तीनों ने उस बिना कुछ कहे जाने को मौन स्वीकृति समझ लिया। मैं जब जबरदस्ती उनके हाथ से झाड़ू छीनकर कमरा साफ करने लगी, तब प्रकाश बाबू ने मुझे वह सब न करने को कहा, यह जताते हुए कि मेरा दर्जा बाई से अधिक है, मुझे वह सब शोभा नहीं देगा। तब मुझसे रहा नहीं गया। मैंने उनके इतने प्रयासों के बदले ही नहीं सही तो पड़ोसी के रूप में अपना अधिकार जताते हुए घर का काम करने की पेशकश की। बेचारे प्रकाश बाबू क्या करते? हथियार डालते हुए मजबूर होकर उन्होंने ताले की एक चाबी मुझे सौंप दी। उनके घर का भार मैंने वहन कर लिया। उन्होंने बदले में मेरी सहायता में कमी नहीं आने दी, साथ ही पढ़ाई में भी मेरी सहायता की।

परीक्षा के दिन नजदीक थे। एक दिन शाम को प्रकाश बाबू ड्यूटी से लौटे तो कुछ उदास दिखाई दिए। शाम की चाय के दौरान उन्होंने मुझे बताया कि घर से चिट्ठी आई है। उनके मम्मी-पापा ने आग्रह किया है कि वह अपनी पत्नी और बच्चों को ले जाए। पिताजी के पत्र के साथ ही उनकी पत्नी का भी पत्र था, जिसमें उसने और अधिक दिन तक वहाँ न रहने की कसम खा ली थी तथा तुरंत लेने आने के लिए लिखा था।

परीक्षा के दिन नजदीक थे। एक दिन शाम को प्रकाश बाबू ड्यूटी से लौटे तो कुछ उदास दिखाई दिए। शाम की चाय के दौरान उन्होंने मुझे बताया कि घर से चिट्ठी आई है। उनके मम्मी-पापा ने आग्रह किया है कि वह अपनी पत्नी और बच्चों को ले जाए। पिताजी के पत्र के साथ ही उनकी पत्नी का भी पत्र था, जिसमें उसने और अधिक दिन तक वहाँ न रहने की कसम खा ली थी तथा तुरंत लेने आने के लिए लिखा था।

मुझे तो अत्यंत प्रसन्नता हुई कि खाली घर उनके आने से भरा-भरा लगेगा। इसलिए मैंने प्रकाश बाबू को तुरंत अपनी पत्नी को लाने के लिए कहा। इसके जवाब में प्रकाश बाबू ने जो शब्द कहे, उसने मेरे पैरों की जमीन खिसका दी। उन शब्दों का भाव यह था कि उनकी पत्नी शक्की मिजाज की है और अगर उसे यहाँ लाया गया तो प्रकाश बाबू ने जो मुझे हायर सेकेंडरी करवाकर एस.टी.सी. करवाने का बीड़ा उठाया है, वह कहीं अधर में न रह जाए। उन्हें यह भी डर था कि अगर वे लेने नहीं जाएँगे तो किसी को साथ लेकर ही वह आ जाएगी। मैंने काफी समझाया कि मैं अनुशासित होकर काम करूँगी। वे उन्हें यहीं ले आएँ, यदि जगह कम पड़ेगी तो मैं अपना कमरा भी दे दूँगी। लेकिन प्रकाश बाबू ने एक अनजाने भय से ग्रस्त होकर मेरे प्रस्ताव को नामंजूर कर दिया। खैर, जैसे-तैसे परीक्षा की तैयार की। परीक्षा आरंभ होने पर मैं परीक्षा देने जाने लगी। अंतिम पेपर के बाद प्रकाश बाबू ने मुझे बताया कि उन्होंने एक

अन्य कॉलोनी में दो कमरों का फ्लैट ठीक कर लिया है। वे सेकेंड सेटरडे को ही छुट्टी पर घर चले जाएँगे और इसके पहले पहली तारीख को ही वे नए फ्लैट में शिफ्ट हो जाएँगे।

मेरी सभी आशाओं पर पानी फिरने जा रहा था। क्या मैं अपनी नंगी आँखों से अपना वर्चस्व समाप्त होते देखने के लिए जीवित बची रहूँगी? प्रकाश बाबू को न केवल मैंने, बल्कि मकानमालिक और मालकिन ने भी काफी समझाया। किंतु जैसा कि उन्होंने कहा था कि वे अपनी पत्नी के मिजाज को देखते हुए मजबूर हैं।

खैर, प्रकाश बाबू अपने नए मकान में चले गए। हम लोगों ने सामान रखवाने में मदद की। प्रकाश बाबू को विदा करते समय हम सब उदास थे, क्योंकि अपने व्यवहार से उन्होंने सबका दिल जीत लिया था।

प्रकाश बाबू के जाते ही ऐसा लगा कि घर सूना हो गया। सारी चहल-पहल समाप्त हो गई थी। मेरी हालत देखते हुए मकानमालिक ने भी उस कमरे को किराए पर नहीं उठाने का निश्चय किया। जून में रिजल्ट निकला। कड़ी मेहनत और प्रकाश बाबू के अथक प्रयास के कारण मैं दूसरी श्रेणी में उत्तीर्ण हुई। बधाई देने वालों में सबसे पहले व्यक्ति थे प्रकाश बाबू। खुशी के मारे हम दोनों की आँखें भर आईं। बधाई के बाद उन्होंने मुझे मिठाई का एक पैकेट थमाकर अपने हाथ से बर्फी का एक टुकड़ा मेरे मुँह में ठूँस दिया। फिर प्रकाश बाबू ऐसे विदा हुए कि उनकी सूरत देखने के लिए मैं तरस गई, लेकिन उनके नए फ्लैट पर जाने की हिम्मत नहीं जुटा सकी। विधाता की यही इच्छा समझकर अनमने मन से समझौता कर लिया। जो मार्ग प्रकाश बाबू ने दिखाया था उस पर चलने का दृढ़ निश्चय कर मैंने एस.टी.सी. हेतु एडमिशन ले लिया। मैंने अपने आप को किसी-न-किसी तरह व्यस्त रखने का प्रयत्न करने हेतु एस.टी.सी. के साथ ही एक प्राइवेट स्कूल में छोटे बच्चों को पढ़ाने हेतु अध्यापिका की नौकरी कर ली। प्रकाश बाबू के सद्प्रयत्नों से मैं नौकरी करने लगी थी।

जब तक प्रकाश बाबू मेरे सामने वाले कमरे में रहे, तब तक न तो थानेदार और न ही वकील के आने की हिम्मत हुई। किंतु जैसे ही उन्हें पता लगा कि प्रकाश बाबू छोड़कर चले गए तो फिर उन्होंने मुझसे संपर्क बढ़ाने का इरादा किया, जिसकी जानकारी मकानमालिक से मुझे हुई।

मैंने तुरंत वह जगह छोड़ने का निश्चय किया। ईश्वर की कृपा से मुझे शहर के पास के गाँव में ही अध्यापिका की नौकरी मिल गई। मैं वह घर छोड़कर शहर से दूर कच्ची बस्ती में एक पहचान की अध्यापिका के पास, जो अनुसूचित जनजाति की थी, चली गई। उसी के प्रयत्नों से मैं खाली जमीन में झोंपड़ी बनाकर रहने लगी, जिसे बाद में सरकार ने हमें बिना शुल्क लिए आवंटित कर दिया।

धीरे-धीरे सरकार द्वारा मकान बनाने आसान शर्तों पर दस हजार रुपए का कर्ज दिया गया, और मैंने यह मकान बना लिया, जिसमें दो कमरे आधे कच्चे व आधे पक्के बना लिये। पता नहीं, प्रकाश बाबू आज इसी शहर में हैं या कहीं और चले गए हैं! यदि वे होते और देखते कि उनके द्वारा दिखाए मार्ग से मैं कहाँ तक पहुँच गई हूँ तो वे अपने आप को गौरवान्वित समझे बिना नहीं रहते।

काश, प्रकाश बाबू से मेरी भेंट उन भूखे भेड़ियों से पहले हो जाती तो मुझे उन्हें अपने पति रूप में स्वीकार करने में कोई शर्मिंदगी महसूस नहीं होती, चाहे मुझे उनकी दूसरी पत्नी बनकर रहना पड़ता। फिर भी मैं उन्हें स्वीकारती। किंतु विधि का विधान जैसा होता है, वैसे ही सबकुछ होता है। यही क्या कम हुआ, जो प्रकाश बाबू ऐसे समय में मेरी डूबती नैया को पार लगाने के लिए पति के रूप में न सही, बल्कि एक देवता के रूप में मेरे संपर्क में आए। मैं जब तक जिंदा हूँ, मेरे मन में हमेशा-हमेशा यह बात खटकती रहेगी कि प्रकाश बाबू ने जो पौधा लगाया, उसे वे खिलते हुए नहीं देख पाए।

इसी बीच रेडियो पर कब वह गाना समाप्त हो गया, मुझे पता ही नहीं चला। इतने में दरवाजे पर दस्तक हुई। लड़खड़ाते कदमों से मैंने दरवाजा खोला तो जो कुछ मैंने देखा, उस पर तो मुझे सहसा विश्वास नहीं हुआ। प्रकाश बाबू सामने खड़े थे। मेरी आँखों से अश्रुधारा फूट पड़ी। प्रकाश बाबू भी अपने आप को रोक नहीं सके और उनकी आँखें भी सजल हो गईं, तब उन्होंने कहा, "मेरा ट्रांसफर यहाँ से दिल्ली हो गया है। यहाँ से जाने से पहले तुम्हें देखने की लालसा थी। आज तुम्हें देख लिया। मेरे मन का बोझ हलका हो गया। अब तुम्हें किस बात की कमी है? तुम हमेशा सुखी रहो, यही मैं तुम्हारे लिए ईश्वर से प्रार्थना करता रहता हूँ। भविष्य में भी तुम सुखी रहोगी अपनी मेहनत और लगन से। इसी आशा और निश्चय के साथ मैं यह जगह छोड़कर जा रहा हूँ।"

प्रकाश बाबू कहते गए और मैं खुशी से मस्त हो सुनती रही। अपनी आँखों में गंगाजल लिये हुए जैसे मैं कह रही थी कि मैं जो कुछ भी हूँ, सब आप ही की बदौलत; इस पर यदि किसी का अधिकार है तो केवल आपका।

अब विदाई की घड़ी आई। प्रकाश बाबू ने बड़े अनमने मन से विदा ली, क्योंकि उसी शाम उन्हें दिल्ली के लिए प्रस्थान करना था। जाते-जाते मैंने प्रकाश बाबू से वचन ले लिया था कि यदि मैं मर जाऊँ तो मेरी अंतिम क्रिया आप ही करें, चाहे आप जहाँ भी हों। प्रत्युत्तर में मुझे आश्वस्त कर वे विदा हो गए। मैं सजल नेत्रों से अपने खेवनहार को तब तक देखती रही, जब तक वे दूर खड़े ऑटो में सवार होकर मेरी आँखों से ओझल नहीं हो गए।

मेरी जीवन-नैया थपेड़े-दर-थपेड़े खाते हुए किनारे लगने से पहले ही फिर से उस अथाह समुद्र में रोज नए थपेड़े खाने के लिए अधर में ही ठहर गई। आखिर कब तक यह जीवन थपेड़े खाता रहेगा? यह प्रश्न मेरे मानसपटल पर अब भी अपना अस्तित्व बनाए हुए है। इसका सबसे उपयुक्त उपाय यही है कि क्यों न जहर खाकर मर जाऊँ।

अंतत: सुषमा ने जहर खाकर दम तोड़ दिया। तब उसका खेवनहार उसकी अंतिम क्रिया के समय नहीं आया। आसपास के पड़ेसियों ने ही उसका अंतिम संस्कार कर उसे और थपेड़े-दर-थपेड़े नहीं खाने के लिए शरीर मुक्त कर दिया।

साअ

म.न.-१ म-९, गायत्री नगर, हिरन मगरी,
सेक्टर-५, उदयपुर-३१३००२ (राज.)
दूरभाष : ९४६१४०३१६९

कोलकाता : पत्रकारिता की गंगोत्तरी

● ऊषा निगम

गंगोत्तरी अर्थात् गंगा का उद्गम-स्थल। ऐसे ही कोलकाता भारतीय पत्रकारिता का उद्गम-स्थल बना। इसीलिए यह नगर 'पत्रकारिता की गंगोत्तरी' कहलाया।

इस दुनिया का प्रथम मुद्रित समाचार-पत्र 'रिलेशन' जुलाई १६०५ में फ्रांस से प्रकाशित हुआ था। भारत में पत्रकारिता का आरंभ इसके १७५ वर्ष बाद बंगाल से हुआ। १७५७ में प्लासी के युद्ध में ईस्ट इंडिया कंपनी की विजय ने बंगाल के संपूर्ण परिदृश्य को बदल दिया था। अब बंगाल की बागडोर ऐसी व्यापारिक कंपनी के हाथ में आ गई थी, जिसका केंद्र इंग्लैंड था। अधिकतम आर्थिक लाभ प्राप्त करना कंपनी की प्राथमिकता थी। बंगाल की आर्थिक दशा पर इसका सीधा प्रभाव पड़ा था। मुगल साम्राज्य का एक समृद्ध प्रांत निर्धनता की ओर बढ़ने लगा। आने वाले वर्षों में ईस्ट इंडिया कंपनी का व्यापारिक स्वरूप गौण और राजनीतिक आकांक्षाएँ प्राथमिक हो गईं। सही अर्थों में भारत अब पहली बार पराधीन हुआ था। "भारत में पत्रकारिता का प्रादुर्भाव इसी पृष्ठभूमि में हुआ।" (विजय दत्त श्रीधर—भारतीय पत्रकारिता कोश; भाग एक, पृ. ११)

सन् १७७३ में कोलकाता कंपनी राज की राजधानी बना। प्रशासनिक केंद्र बनने के कारण वह सारी गतिविधियों का केंद्र बना, पत्रकारिता का भी। यहाँ जेम्स आगस्टस के 'बंगाल गजट' और 'केलकटा जनरल एडवरटाइजर' से भारत में पत्रकारिता की यात्रा आरंभ हुई। हिकी ने २९ जनवरी, १७८० को इसका प्रकाशन आरंभ किया। एक अंग्रेज द्वारा अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित यह प्रथम समाचार-पत्र था, जिसका उद्देश्य ईस्ट इंडिया कंपनी के अधिकारियों एवं कर्मचारियों के निजी जीवन की आलोचना करना था। हिकी ने कंपनी प्रशासन से सीधे टक्कर लेने का जोखिम उठाया था, जिसके दुष्परिणाम उसे भुगतने पड़े थे। १८ नवंबर, १७८० को हिकी के ही चरण-चिह्नों पर पीटर रीड और बी. मेनजेक ने 'इंडिया गजट' का प्रकाशन आरंभ किया। इन दो पत्रों के स्वर से कंपनी प्रशासन सतर्क हो गया था। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्रशासन के लिए संकटपूर्ण थी, साथ ही पराधीन देश के नागरिकों के सम्मुख यह एक गलत उदाहरण था।

शनैः-शनैः पत्रकारिता का यह सफर आगे बढ़ने लगा। सन् १७८४ से लगभग प्रतिवर्ष अंग्रेजी भाषा में किसी-न-किसी नए पत्र का प्रकाशन होता रहा। इन सभी पत्रों पर अंग्रेजों का स्वामित्व था। अभी तक भारतीय भाषाओं ने पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रवेश नहीं किया था। इसका प्रारंभ १८१८ से हुआ। कोलकाता (तब कलकत्ता) से सर्वप्रथम १५ मई, १८१८ को 'बंगाल गजट' प्रकाशित हुआ। पत्र की भाषा बंगाली थी, संपादक हारूचंद्र राय और प्रकाशक गंगा किशोर भट्टाचार्य भी बंगाली थे। राय और भट्टाचार्य राजा राममोहन राय के सहयोगी थे। राजा राममोहन राय ने एक नई वैचारिक क्रांति के साथ बंगाल के सामाजिक और धार्मिक जीवन में प्रवेश किया था। उन्हें एक बात का अहसास था कि पत्रकारिता के माध्यम से वे अपने क्रांतिकारी विचारों को समाज तक सरलता से पहुँचा सकते हैं। ४ दिसंबर, १८२१ को बंगाली भाषा में 'संवाद कौमुदी' के प्रकाशन के साथ राममोहन राय ने पत्रकारिता के क्षेत्र में कदम रखा। 'संवाद कौमुदी' पत्र वैचारिक दृष्टि से समय से बहुत आगे था। १२ अप्रैल, १८२२ को उन्होंने 'मिरात-उल-अखबार', जिसकी भाषा फारसी थी और १८२९ में 'बंगदूत' का प्रकाशन किया। इन दोनों पत्रों की आयु बहुत कम रही।

सुपरिचित लेखिका। स्वतंत्रता सेनानियों पर विशेष लेखन। अब तक 'क्रांति और स्वाधीनता', 'काकोरी की याद में', 'क्रांति का इतिहास और सुधीर विद्यार्थी', 'हार नहीं मानूँगी', 'राजेंद्रनाथ लाहिड़ी और उनकी शहादत' तथा पत्र-पत्रिकाओं में लेख आदि निरंतर प्रकाशित। 'कानपुर : एक सिंहावलोकन' स्मारिका भी। सन् १९७०-७२ में पी.पी.एन. कॉलेज में अध्यापन कार्य किया। संप्रति लेखन में रत।

दो फारसी अखबारों का भी प्रकाशन हुआ। यह जानकर कौतूहल होता है कि हिंदी पत्रकारिता का शुभारंभ भी कोलकाता की धरती पर ही हुआ। कारण यह था कि जीविकोपार्जन के लिए बड़ी संख्या में हिंदी भाषा-भाषी लोग कलकत्ता आने लगे थे। पं. युगल किशोर भी इसी उद्देश्य से वहाँ आए थे। यहाँ रहने के बाद उन्हें प्रतीत हुआ कि केवल हिंदीभाषियों के पास अपना कोई समाचार-पत्र नहीं है। उनके पास सीमित आर्थिक साधन थे, लेकिन हौसला बुलंद था। ३० मई, १८२६ को उन्होंने 'उदंत मार्तंड' पत्र का प्रकाशन आरंभ किया, जिसका अर्थ है—'समाचार सूर्य'। यह पत्र साप्ताहिक था। पंडितजी में हौसला था, समझ थी, फिर भी अनेक कारणों से १९ दिसंबर, १९२७ को उन्हें ७९ अंक प्रकाशित करने के उपरांत यह साप्ताहिक पत्र बंद कर देना पड़ा। उन्होंने व्यथित हृदय से ७९वें अंक में लिखा था—

"आज दिवस लौं उग चुक्यौ यह मार्तंड उदंत।
अस्ताचल को जात है दिनकर दिन अब अंत।"

असफल होकर भी यह पत्र अमर हो गया। इसे हिंदी का प्रथम समाचार-पत्र होने का गौरव प्राप्त हुआ। इसी की स्मृति में प्रतिवर्ष ३० मई को 'हिंदी पत्रकारिता दिवस' मनाया जाता है।

सन् १८३० में कलकत्ता से ही बँगला भाषा में 'संवाद प्रभाकर' का प्रकाशन आरंभ हुआ। आरंभ में साप्ताहिक और फिर दैनिक हो गया। ईश्वर चंद्र गुप्त इसके प्रकाशक व संपादक थे। इस पत्र में विभिन्न विषयों की चर्चा रहती थी। इसमें कंपनी प्रशासन के अत्याचारों के विरुद्ध भी आवाज उठाई गई, इसीलिए इस पत्र ने पत्रकारिता के इतिहास में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया। १८३१ में प्रकाशित 'रिफॉर्मर' में सामाजिक सुधारों की ओर अधिक ध्यान दिया गया। इसी वर्ष 'ज्ञान अन्वेषण' का प्रकाशन हुआ। यह पारंपरिक विषयों का पत्र न होकर प्रगतिशील विचारधारा का पत्र था। इस पत्र ने कंपनी शासन की खुलकर आलोचना की थी।

१६ अगस्त, १८४३ को तत्त्वबोधिनी सभा ने 'तत्त्वबोधिनी पत्रिका' का प्रकाशन किया। इस पत्रिका में जीवन के सभी पक्षों पर चर्चा होती थी। प्रांत की जर्जर आर्थिक स्थिति के लिए अंग्रेज सरकार को जिम्मेदार बताया जाता था। ईसाई मिशनरियों और ईसाई शिक्षण संस्थाओं के द्वारा ईसाई धर्म का प्रचार तेजी से हो रहा था। इस पत्रिका में इस विषय पर गंभीरता से विचार किया गया तथा समाधान भी बताए गए थे। विषयों की विविधता के कारण यह उस समय की महत्त्वपूर्ण पत्रिका थी। १८४४ में 'केलकटा रिव्यू' का प्रकाशन हुआ, जो लंबे समय तक प्रकाशित होती रही। १८४६ में काशी प्रसाद घोष के संपादकत्व में 'हिंदू इंटेलिजेंसर' प्रकाशित हुआ। इस पत्र ने गिरीशचंद्र घोष, हरिश्चंद्र मुखर्जी, क्रिस्टोदास आदि अनेक पत्रकारों को प्रशिक्षित किया।

कलकत्ता से आरंभ हुआ पत्रकारिता का यह सफर फिर कभी रुका नहीं। जितनी बड़ी संख्या में यहाँ से अनेक भाषाओं में पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ, उसे देखना और जानना सुखद आश्चर्य है। पूर्व से उठे इस हवा के झोंके देश की सभी दिशाओं में पहुँचे। १८३२ में बंबई से मराठी और अंग्रेजी भाषा में 'दर्पण' पाक्षिक पत्र का प्रकाशन हुआ। शीघ्र ही यह साप्ताहिक हो गया। इसके संपादक गंगाधर शास्त्री थे।

सन् १८५३ में प्रकाशित होने वाले 'हिंदू पेट्रियट' ने पत्रकारिता के इतिहास में विशेष स्थान बनाया। यह पत्र अंग्रेजी भाषा में था। गिरीशचंद्र घोष ने अपने भाइयों के सहयोग से इसका प्रकाशन आरंभ किया था। उनका उद्देश्य एक ऐसे पत्र का प्रकाशन करना था, जो अपने देश के हित में आवाज उठा सके और देशवासियों की आवाज बन सके। सत्तावन की क्रांति के बाद देश का संपूर्ण वातावरण बदल चुका था। अंग्रेजी स्वामियों द्वारा प्रकाशित पत्रों का स्वर भारतवासियों के लिए और भी कटुतापूर्ण हो गया था। ऐसी स्थिति में भारतीय पत्रकारिता का दायित्व बढ़ गया था। 'हिंदू पेट्रियट' ने इस दायित्व का निर्वहन किया। इस पत्र ने नील और चाय की खेती करने वाले मजदूरों, किसानों के अधिकारों के लिए संघर्ष किया। अंग्रेजी सरकार के अन्यायों का खुलासा किया। पत्र का 'संपादकीय' विशेषरूप से उल्लेखनीय होता था। संपादकीय के स्वतंत्र विचारों ने देश में राजनीतिक चेतना जाग्रत् की। यह एक साप्ताहिक पत्र था, जो १८९२ में दैनिक पत्र हो गया।

बंगाल के सर्वाधिक प्रभावशाली व्यक्ति सुरेंद्रनाथ बनर्जी ने १८६२ में अंग्रेजी भाषा में 'बंगाली' पत्र का प्रकाशन आरंभ किया। इसके संपादक गिरीशचंद्र घोष थे। १८७८ में स्वयं सुरेंद्रनाथ बनर्जी ने संपादन-कार्य सँभाला। इस पत्र ने १९०५ के बंगाल-विभाजन का विरोध किया था; क्रांतिकारी आंदोलन के पक्ष में समाचार प्रकाशित किए थे। इस कारण सुरेंद्रनाथ बनर्जी को सरकार की नाराजगी का सामना करना पड़ा। १८८३ में उन्हें दो माह की सजा हुई।

'अमृत बाजार पत्रिका' के बिना इस गंगोत्तरी की चर्चा अधूरी रहेगी। १८६८ में इस पत्र का प्रकाशन बंगाली भाषा में अमृत बाजार गाँव से हुआ था। १८७१ में इसका प्रकाशन कलकत्ता से होने लगा। बाद में इसका प्रकाशन अंग्रेजी भाषा में हुआ। इस पत्र ने सदैव अंग्रेजी शासन का विरोध किया, देश की आत्मा और स्वाभिमान को आहत करने वाली प्रत्येक घटना का प्रतिवाद किया। पत्र ने संसदीय शासन प्रणाली की भी माँग की। अंग्रेजों की न्याय-व्यवस्था के अन्याय का, उसके विकृत स्वरूप का खुलासा किया, देश के राष्ट्रीय आंदोलन को सही दिशा दी; प्रशासनिक सेवाओं में भारतवासियों के समुचित प्रतिनिधित्व की माँग की जाती रही।

यह समाचार-पत्र अत्यधिक लोकप्रिय हुआ। इसका कार्यालय राजनीतिज्ञों के विचार-विमर्श का केंद्र बना। बंगाल जब राजनीतिक उथल-पुथल, सरकार के विरोध और स्वदेशी आंदोलन का केंद्र बना हुआ था, उस समय 'अमृत बाजार' पत्रिका जनता के साथ थी। पत्र की आयु बढ़ने के साथ उसके कवरेज का क्षेत्र बढ़ता गया। विदेशों में भी इसके संवाददाता थे। पत्रिका ने न केवल देश की आजादी में साथ दिया, वरन् आजाद देश की आजाद हवा में भी एक लंबे समय तक अपनी उपस्थिति दर्ज की। अंग्रेजी सरकार-विरोधी स्वर के कारण पत्रिका के मुद्रकों और संपादकों को प्राय: जुर्माना या कारावास की सजा का सामना करना पड़ता था।

कलकत्ता से आरंभ हुआ पत्रकारिता का यह सफर फिर कभी रुका नहीं। जितनी बड़ी संख्या में यहाँ से अनेक भाषाओं में पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ, उसे देखना और जानना सुखद आश्चर्य है। पूर्व से उठे इस हवा के झोंके देश की सभी दिशाओं में पहुँचे। १८३२ में बंबई से मराठी और अंग्रेजी भाषा में 'दर्पण' पाक्षिक पत्र का प्रकाशन हुआ। शीघ्र ही यह साप्ताहिक हो गया। इसके संपादक गंगाधर शास्त्री थे। १८३३ में मद्रास (अब चेन्नई) से 'कर्नाटक क्रॉनिकल' और इसी वर्ष आगरा से 'आगरा अखबार' निकला। १८३३ में शिमला से 'शिमला अखबार' १८३६ में दिल्ली से 'देहली उर्दू अखबार' और १८३८ में मुंबई से अंग्रेज स्वामियों द्वारा 'बॉम्बे टाइम्स' का प्रकाशन हुआ। कलकत्ता (अब कोलकाता) नगर रूपी गंगोत्तरी से निकलकर पत्रकारिता रूपी गंगा नदी भारत के विभिन्न नगरों तक पहुँची। आज भी देश के कोने-कोने से हजारों की संख्या में समाचार-पत्र, पत्रिकाओं का प्रकाशन जारी है। अंतर केवल इतना है कि पहले पत्रकारिता एक मिशन थी और आज केवल व्यवसाय है।

७४, कैंट, कानपुर-२०८००४
दूरभाष : ९७९२७३३७७७

राम झरोखे बैठ के

वर्तमान में उल्लू का महत्त्व

● गोपाल चतुर्वेदी

उल्लू के विषय में हमारे मन में कई भ्रांतियाँ रही हैं। मसलन उल्लू मूर्खता का प्रतीक है, काठ का उल्लू, बज्रमूर्खता का। यह तो गूगल विश्वविद्यालय की कृपा है कि हम वास्तविकता से परिचित हो पाए हैं। इस विश्वविद्यालय की विशेषता है कि यहाँ ज्ञान अर्जित नहीं करना पड़ता है। बस यदि किसी के पास स्मार्ट फोन है तो सिर्फ प्रश्न करना है, उत्तर मिल जाता है। अपनी इस जानकारी के आधार पर अब हम यह कह सकते हैं कि उल्लू रात्रिजीवी पक्षी है। वह सामिष है, कीड़े-मकोड़े उसका आहार हैं। वह अँधेरे में देखने में समर्थ है। दिन में उसके सोने और विश्राम का समय है। तब उसे नजर भी कम आता है। उसकी आँखें बड़ी और नाक झुकी हुई है, जो बहुधा रोमन नाक कहलाती है। कुछ देशों में उल्लू दिखे तो सौभाग्यसूचक माना जाता है। भारत में उल्लू का अच्छे बुरे से लेना-देना नहीं है, बस वह बुद्धिहीनता की निशानी है।

कई मुल्कों में ऐसा नहीं है। हमने इस बारे में कई विद्वानों से सिर खपाया। उन्होंने हमें ज्ञान तो न दिया, उल्टे कइयों ने सवाल कर लिया, "आपको उल्लू में इतनी रुचि क्यों है?" हम क्या उत्तर देते इसके सिवाय कि हमें ऐसी कोई रुचि नहीं है, केवल अकादमिक जिज्ञासा है। हम सिर्फ इतना जानना चाहते हैं कि उल्लू को अक्ल का दुश्मन मानने का क्या कारण है? विद्वत्ता चतुर इनसानों का गुण है। उनसे आशा करना कि वह अपना अज्ञान किसी भी क्षेत्र में प्रगट करेंगे, व्यर्थ है। सबने विषय से हटकर इधर-उधर की चर्चा की। कुछ ने चमगादड़ के गुण गिनाए, कुछ ने गौरैया के, जैसे उल्लू पर बोलने से उन्हें परहेज हो। यह भी संभव है कि ऐसे ज्ञानी मूर्खता की जीती-जागती मिसाल के बारे में सोचे भी क्यों? ऐसे ज्ञानी सुकरात, अरस्तू, होमर, शेक्सपीयर आदि का ज्ञान देंगे, उन्हें तुलसी, कबीर, सूरदास, नानक वगैरह का नाम लेना तक नहीं सुहाता है, फिर उल्लू तो एक पंछी है। उसकी हैसियत ही क्या?

रात को इसी उधेड़-बुन में हमें नींद आ गई। हमारे मोहल्ले में एक पंसारी की दुकान है, नाम है—लक्ष्मी स्टोर। इसके स्वामी का नाम क्या पता, लक्ष्मी कुमार हो? ऐसे यह भी एक अनौपचारिक परंपरा है कि यदि स्वामी का नाम धनराज है तो पान की दुकान भी 'धनराज पान भंडार' होगी। यह एक स्वाभाविक मानवीय महत्त्वाकांक्षा है। सब चाहते हैं कि उनका नाम चले। लेखक से लेकर राजनेता तक सब यही अरमान पालते हैं। नश्वर जीवन में कुछ अमरता का भ्रम तो रहे? यह प्रवृत्ति, हिंदी साहित्य में इक्कसीवीं सदी की पहचान है। न प्रेमचंद ने अपने नाम का कोई पुरस्कार चलाया, न निराला ने, न परसाई, शरद जोशी या त्यागी ने। पर इधर वर्तमान की यही प्रवृत्ति है। कुछ अपने नाम का पुरस्कार चलाते हैं, वह भी चंदा लेकर, इसे फायदे का सौदा बनाकर। कुछ युग-प्रवर्तक होने के मुगालते में अपना देशव्यापी जन्मदिन मनाते हैं। ये महान् साहित्यिक हस्तियाँ पुरस्कार की जुगाड़ भी योजनाबद्ध तरीके से करने की विशेषज्ञ हैं। पुरस्कार मिले तो खुद को या अपने किसी गुट भाई को। यह गुट बनाना या समर्थक जुटाना भी वर्तमान समय का द्योतक है। कभी-कभी लगता है कि सियासत अब साहित्य को भी प्रदूषित अधिक या सुशोभित कम कर रही है। जैसे राजनीति में चुनाव का टिकट दल के नेता अपने गुट वालों को ही देते हैं, वैसे ही साहित्य में परंपरा भी है। इसमें सुपात्र या कुपात्र का अंतर नहीं है। फर्क है तो बस अपने या पराए का। बहुत से ऐसे योग्य हैं, जो इस चक्कर में न पुरस्कार पाते हैं न पहचान। इस प्रवृत्ति से संपादक-प्रकाशक भी अछूते नहीं हैं। वह भी विज्ञापन से धन कमाने की जुगाड़ में हैं। कुछ लेखकों को वह पैसे लेकर प्रकाशित कर उपकृत करते हैं।

हमारा संपर्क लक्ष्मी कुमारजी से स्वप्न के माध्यम से हुआ। हमें लगा कि इनकी शक्ल कुछ कुछ उल्लू से मिलती है, खासकर उनकी नाक। उनकी आँखें तो उल्लू भी नहीं बल्कि बटन जैसी हैं। फिर भी कुछ साम्य तो है ही। यह भी मुमकिन है कि उनके चेहरे का भाव कुछ उल्लू जैसा हो। उन्होंने हमें अपने आदर्श और निष्ठा के विषय में बताया, "देखिए, बड़ी सीधी सी बात है। हमारी आराध्य लक्ष्मी मैया हैं। हम तो उन्हीं की पूजा-आराधना करते हैं। या तो घर के मंदिर में करें या बाहर। घर में छोटा सा पूजालय, राम-सीता हनुमानजी का है। अब कैसे कहें सबसे कि हम तो सिर्फ लक्ष्मी मैया के उपासक हैं? सब जानते हैं कि उनकी सवारी उल्लू है। दीवाली वर्ष में केवल एक बार आती है, तभी हमें लक्ष्मीजी के पूजन का सार्वजनिक अवसर मिलता है। हम धमूधाम से उसका लाभ उठाते हैं।

"जाने आपको पता है कि नहीं? सरकार में छोटा बाबू या क्लर्क सबसे महत्त्वपूर्ण होता है। अफसर से काम उसे साधने के बाद ही

निकलता है, वरना उसके बनाए नोट या टिप्पणी पर बीच के सेक्शन अफसर या अवर सचिव सिर्फ चिड़िया बनाते हैं। लिहाजा, हम बाबू को ही पटाते हैं। निजी उद्योग में बड़े उद्योगपतियों की भी यही परंपरा है। जिस व्यक्ति या व्यापारी का चयन स्थानीय दफ्तर करता है तो वह ऊपर तक मान्य है। हमने तो इसी मंत्र का जाप कर कई थोक एजेंसियाँ ले रखी हैं। उनका वितरण हमारा ही दायित्व है। इसमें लाभ भी है और प्रभाव भी। बाजार में अपना महत्त्व है, ग्राहक हमारे माल की गुणवत्ता के प्रशंसक हैं। लक्ष्मी मैया की कृपा और आशीर्वाद पाने के लिए हमने उनकी सवारी उल्लू-पूजन का निश्चय किया है।"

पहले हमने घर के मंदिर में सोने के उल्लू की स्थापना की। उल्लू की स्थापना और पूजा से सिर्फ सेठानी ही नहीं, हमारा बड़ा लड़का भी आपत्ति करने लगा, "कोई आप को उल्लू की आराधना करते देखेगा तो हँसेगा? आप भी जानते हैं कि उल्लू कमअक्ली की निशानी है। मूर्खता का प्रतीक है। आप और हमारे बारे में लोग क्या सोचेंगे? कहेंगे कि सेठ लक्ष्मीकुमार की बुद्धि को क्या हो गया है, यह उल्लू पूजक इस देश के इकलौते अपवाद हैं। भारत में शायद यह पहला और अंतिम घर है, जहाँ राम-सीता, शंकर-पार्वती और हनुमानजी के साथ उल्लू की भी सोने की मूर्ति है।"

पहले हमने घर के मंदिर में सोने के उल्लू की स्थापना की। उल्लू की स्थापना और पूजा से सिर्फ सेठानी ही नहीं, हमारा बड़ा लड़का भी आपत्ति करने लगा, "कोई आप को उल्लू की आराधना करते देखेगा तो हँसेगा? आप भी जानते हैं कि उल्लू कमअक्ली की निशानी है। मूर्खता का प्रतीक है। आप और हमारे बारे में लोग क्या सोचेंगे? कहेंगे कि सेठ लक्ष्मीकुमार की बुद्धि को क्या हो गया है, यह उल्लू पूजक इस देश के इकलौते अपवाद हैं। भारत में शायद यह पहला और अंतिम घर है, जहाँ राम-सीता, शंकर-पार्वती और हनुमानजी के साथ उल्लू की भी सोने की मूर्ति है।"

कौन कहे क्या हुआ? घर वालों के द्वेष और डाह से हमारे सोने के उल्लू चोरी हो गए। फिर भी हमने हार नहीं मानी और चाँदी के उल्लू बनवाकर अपने कमरे में रखे। दु:खद तथ्य है कि वहाँ भी उनका भविष्य सुरक्षित न रहा, कोई फिर उनको ले उड़ा। पर पुलिस में चोरी की रिपोर्ट लिखाने के पहले हमें शक हुआ कि जग-हँसाई के अलावा होना ही क्या है?

हमें यह भी डर लगा कि वर्दीधारी घर के नौकर, यह सेठानी और बड़े पुत्र से भी कुछ-न-कुछ वसूली तो कर ही लेंगे? परिणाम कुछ सार्थक निकले न निकले, किंतु वसूली से तो वर्दी चूकती नहीं है, जैसे व्यापारी मुनाफे से?

इन दो दुर्घटनाओं में विचलित लक्ष्मीकुमारजी ने काठ के उल्लू की मूरत बनवाकर अपने बक्से में क्या, घर में रखी तिजोरी में स्थापित की है। इससे क्या अंतर पड़ता है कि काठ चाहे चंदन की लकड़ी का हो या शीशम का? काठ तो काठ ही है। अब काठ का उल्लू उनकी तिजोरी का शृंगार है। वह नियम से उसके सम्मुख अगरबत्ती जलाकर लक्ष्मीमैया का ध्यान करते हैं। जैसे काशी के एक राजा के प्राण तोते में वास करते थे, उनकी जान अब इस काठ के उल्लू में बसी है।

भले देश के एकल अपवाद हों, वह उल्लू के उपासक हैं। यह भी सोना-चाँदी गँवाकर। पर वास्तव में उनकी पूजा की देवी लक्ष्मी हैं। सबसे नीचे के व्यक्ति को पकड़कर पटाना उनकी सफलता का राज है। चाहे वह सरकार के दफ्तर में हो या किसी निजी संस्थान के कार्यालय में। उसी के माध्यम से उनका काम सस्ते में हो जाता है। ऐसे बाद में वह अधिकारी को भी महँगी भेंट गिफ्ट देने में पीछे नहीं हैं। पर प्रारंभ तो सबसे नीचे के कर्मचारी से ही होता है। जैसे लक्ष्मी देवी की सवारी उल्लू की साधना में।

वह अपनी सफलता के इस रोचक रहस्य में किसी को भागीदार क्यों बनाते? बात सपने की है वरना हमारी क्या बिसात, उनसे बात करने की। परिचय तो खैर है ही नहीं। बात स्वप्न की है, तो उसमें सब संभव है वरना वह अपने उल्लू-पूजन का रहस्य कैसे बताते? उन्हें आशा है कि जैसे वह सरकारी-निजी बाबू, अफसर को अपनी उँगली पर नचाते हैं, वैसे ही उल्लू लक्ष्मी मैया से उनकी सिफारिश कर देगा, प्रशंसा भी। वह अपने काठ के उल्लू का वंदन कर उससे रोज प्रार्थना करते हैं कि उन पर कृपा बनाए रखे। उसी के माध्यम से धन-धान्य की देवी भी उन्हें आशीर्वाद देंगी। उनकी तिजोरी और भरेगी। उन्हें अपनी नश्वरता का आभास है। वह यही चाहते हैं कि उनका नाम चले। वह इतना सोना, चाँदी, कोठी, बँगले छोड़कर विदा हों कि उनकी पीढ़ियाँ पलें, बिना किसी काम-काज के। उल्लू-पूजन के बाद उनके थोक के धंधे में इजाफा हुआ है। उनका मानना है कि सब में उल्लू की भूमिका है। उनका विश्वास है कि उल्लू का दर्शन और पूजा सौभाग्यसूचक है। दुनिया में किसी के बारे में मतैक्य कठिन है तो उल्लू के विषय में कैसे हो? यह तो वैसा ही है, जैसे प्रजातंत्र और पारिवारिक प्रजातंत्र का मसला है। कुछ अपने परिवार को देशहित और जन-कल्याण का पर्याय मानते हैं। प्रजातंत्र को ढोया तो उन्हीं के परिवार ने। यदि दल जातिवादी है तो क्या हुआ? ऐसों का आपस में समझौता है कि यह सब सैक्युलर हैं। कहने में क्या जाता है? अल्पसंख्यक वोट तो दल के खाते में जाना ही जाना। अपनों के मत के साथ एक-दो और जातियाँ जुड़ें तो सत्ता पक्की। यही ऐसों की मंजिल है, ध्येय है और चाहिए ही क्या? एक बार सत्ता पाएँ तो गंगा नहाएँ! उनका उसूल है कि 'कुरसी की कमाई, परिवार पर लुटाई।' तभी तो हर चुनाव में वह अपने दस-बारह बंधु-बांधव चुनाव में उतारते हैं। परिवार के प्रति अपना कर्तव्य पूरा कर, वह अपने हवा-हवाई सैक्युलर वादों में लग जाते हैं।

हमें अचानक खयाल आया कि उल्लू सा दिखने वाले धन्ना सेठ लक्ष्मीकुमार कितनों को दिन-प्रति-दिन उल्लू बनाते हैं? उनकी उलूक-मुद्रा देखकर कोई शक-संदेह भी नहीं करता कि वह वास्तव में कितने चतुर-चालाक हैं? उनका सिद्धांत है कि सबसे नीचे वालों को पकड़ो,

ऊपर वाला तो पट ही जाएगा, उन्हें करोड़पति बना चुका है। कहना कठिन है कि वह कब तक अरबपति बन जाए? या हो भी तो कौन जानता है वरना आयकर वाले अपनी खुद की कमाई की खातिर उनके घर-दफ्तर, दुकान पर कब के छापे डाल चुके होते? यों उनकी दया की पात्र उल्लू मुख मुद्रा, सादगी भरा रहन-सहन और बातचीत का विनम्र अंदाज सदा उनकी रक्षा करता है। उनका उल्लूपन दूसरों को उल्लू बनाने में सहायक है।

इस संदर्भ में गूगल यूनिवर्सिटी की काठ का उल्लू, यानी मूर्खता का प्रतीक होने के कथन से सहमत होना हमें तर्कसंगत नहीं लगता है। हमें कभी-कभी भ्रम होता है कि जीवन के हर क्षेत्र में उल्लुओं का आधिपत्य है। जो जितना बड़ा उल्लू है, वह उतना ही कामयाब भी। तभी तो एक शायर ने कहा भी है, "हर शाख पै उल्लू बैठा है, अंजामे-गुलिस्ताँ क्या होगा?" यदि यह सच भी है, जैसा हम मानते हैं, तो भारत में गुलिस्ताँ का हाल-चाल पड़ोसी से बेहतर है। यह भी सच है कि एक विभाजन देश का अवश्य हुआ, पर उसके बाद फिर ऐसी नौबत नहीं आई है। दूसरे देशों से हमारे मित्रता के संबंध हमारी नियति के साक्ष्य हैं। तभी तो रूस और अमेरिका दोनों भारत के दोस्त हैं। चीन ने हमेशा क्या, प्रारंभ से ही हमें धोखा दिया है। वह एक विस्तारवादी देश है। पहले उसने तिब्बत को हड़पा। अब वह पाकिस्तान के साथ पूर्वोत्तर क्षेत्र की घुसपैठ में लगा है। नेहरूजी के समय में उसने पंचशील की दुहाई दी, फिर सीमांत के सैकड़ों-हजारों मील का क्षेत्र हड़प लिया। पाकिस्तान भले उसकी दोस्ती पर इठलाए, सच यह है कि वह दिन दूर नहीं है कि जब वह उसके प्रभुत्व के चंगुल में होगा। ऐसे भी समय के साथ उसके दीवालिया होने की नौबत आने के दिन दूर नहीं है। बकरे की माँ कब तक खैर मनाएगी? चीन जब चाहेगा, उसकी खाट खड़ी कर देगा।

हमने भरसक प्रयास किया है यह पता लगाने का कि हमारे देश में उल्लू के प्रति इतनी दुर्भावना क्यों है? वह बेचारा तो नन्हा सा निरीह प्राणी है। रात भर जागता और दिन भर सोता है। कहीं ऐसा तो नहीं है कि चोरी-डकैती, अपहरण, बलात्कार जैसे अपराध अधिकतर रात के अँधेरे में ही होते हैं, इसलिए हमने उल्लू से उन्हें जोड़ रखा है? जबकि सच्चाई यह है कि रात को उल्लू अपने जीवन-यापन के धंधे में व्यस्त रहता है। उसे फुरसत ही कहाँ है कि इनसानों की उल्लुई प्रवृत्ति का जोड़ीदार बनने की?

ऐसे बदमुज्जना किस्म के लोगों की प्रेरणा होना भी उल्लू के वश का नहीं है। उसका पेट कीड़े-मकोड़ों से भर जाता है, वह सोने-चाँदी, मानवीय आभूषणों में रुचि क्यों लेगा? दिन में वह 'वह आँख का अंधा, नाम नैनसुख' है। कोई भी साजिश रचने में इसीलिए वह असमर्थ है। ऐसे भी शारीरिक क्षमता में बालिश्त भर का उल्लू कोई शेर तो है नहीं? जान-बूझकर वह इनसानों से लुक-छिपकर रहता है। इनसानों का क्या भरोसा? कब कोई उसे पैरों से न कुचल दे और आश्वस्त हो कि उसने एक उल्लू के पट्ठे का विनाश कर दिया? यों उल्लू हो न हो, उल्लूपन देश में सर्वव्यापी है। तभी तो जो सफाई-अभियान चलाते और झाड़ू लिए फोटू खिंचवाते हैं, वही सड़क पर पीक करते पाए जाते हैं। यों पान का एक विकल्प पान मसाला भी है। उसमें तंबाकू मिली होती है। वह भी सड़क पर 'पिच्च' की आवाज के साथ सफाई अभियान की खिल्ली उड़ाती है। कथनी-करनी का अंतर भारतीय चरित्र की खासियत है। जनसेवकों से लेकर साहित्यकारों तक में नजर आती है।

हमने भरसक प्रयास किया है यह पता लगाने का कि हमारे देश में उल्लू के प्रति इतनी दुर्भावना क्यों है? वह बेचारा तो नन्हा सा निरीह प्राणी है। रात भर जागता और दिन भर सोता है। कहीं ऐसा तो नहीं है कि चोरी-डकैती, अपहरण, बलात्कार जैसे अपराध अधिकतर रात के अँधेरे में ही होते हैं, इसलिए हमने उल्लू से उन्हें जोड़ रखा है? जबकि सच्चाई यह है कि रात को उल्लू अपने जीवन-यापन के धंधे में व्यस्त रहता है। उसे फुरसत ही कहाँ है कि इनसानों की उल्लुई प्रवृत्ति का जोड़ीदार बनने की?

सरकार हो या निजी क्षेत्र, देश के प्रशासन में उल्लुओं की बन आई है। जैसे उल्लुओं में भी कीड़े-मकोड़े के शिकार का हुनर है, वैसे ही इनमें पैसा बनाने का। मुद्रास्फीति के अनुसार यह उसमें वृद्धि-कमी करते रहते हैं। हमने तो अपने जीवन में किसी भी वस्तु के मूल्य में कमी नहीं देखी है, यदि कुछ भी होता है, मूल्य या कीमत में बढ़त ही नजर आती है।

मुर्गे की बाँग से सुबह होती है, पर सेठ लक्ष्मी कुमारजी अपने काठ के उल्लू-दर्शन से अपने दिन का शुभारंभ करते हैं। उनके लिए उल्लू की साधना लक्ष्मीजी की आराधना है। यदि हम देश का विकास चाहते हैं तो हमें चींटी की लगन और लक्ष्मीजी के वाहन, दोनों की कृपा चाहिए। चींटियों के झुंड में एक रानी चींटी होती है, हर चींटी उसका अनुकरण करती है। उल्लू की न टोली है न राजा-रानी। वह व्यक्तिगत अस्तित्व का अनूठा उदाहरण है। उसके अपने उसूल और सिद्धांत हैं, जिनका वह लगन व दृढ़ता से पालन करता है।

वर्तमान की जिस सदी में हम जीवित हैं, वह भौतिक श्रेष्ठता की अनूठी सदी है। इसमें न वकत नैतिक मूल्यों की है, न अध्यात्म की या फिर शांतिप्रिय सामाजिक आचरण की। मान-सम्मान सिर्फ धन-दौलत का है। देवी है तो लक्ष्मी है। पूजन है तो उनका है। इस संदर्भ में हमें क्या किसी को भी आश्चर्य न होगा कि यदि सोने, चाँदी, पीतल, ताँबे या हीरे, मोती के उल्लू न पूजे जाने लगें? लक्ष्मी देवी के शानदार मंदिर बनाए जाएँ और उल्लुओं के वाहन के साथ उनकी शानदार प्राण-प्रतिष्ठा वित्तमंत्री या शीर्ष धनपति करें? किस धातु का और कितना मूल्यवान जिस का उल्लू हो, यही उसकी सामाजिक श्रेष्ठता का मापदंड हो। जहाँ तक निर्धन का प्रश्न है, वह काठ के उल्लू के पूजन का अभ्यस्त है, वही करता रहेगा और हर दल का शीर्ष नेता उसे सोने-चाँदी के स्वर्ण उल्लू के सपने दिखाता रहेगा तथा उसे उल्लू युग के स्वर्ण काल से लुभाता-बहलाता रहेगा।

साअ

९/५, राणा प्रताप मार्ग,
लखनऊ-२२६००१
दूरभाष : ९४१५३४८४३८

गजल सरा

● **भरत दीप माथुर**

: एक :

अनुसरण तो कर रहे हैं काम से अनभिज्ञ हैं
भज रहे हैं राम लेकिन राम से अनभिज्ञ हैं

लोग जिनका राम के विपरीत है हर आचरण
वह सभी लंकेश के अंजाम से अनभिज्ञ हैं

कर रहे हैं आप यदि इनसान में छोटा-बड़ा
आप केवट के दिए पैगाम से अनभिज्ञ हैं

हम किसी भूखंड को श्री धाम बतलाते हुए
उस अगोचर के अपरिमित धाम से अनभिज्ञ हैं

भाई चारे की महत्ता वे भला समझेंगे क्या
जो भरत, शत्रुघ्न, लक्ष्मण नाम से अनभिज्ञ हैं

'दीप' जो इन नफरतों के हर गरल का तोड़ है
आप प्रियवर प्रेम के उस जाम से अनभिज्ञ हैं

: दो :

हो मन में आक्रोश तो कविता होती है।
कलम दिखाए रोष तो कविता होती है॥

सुनता हूँ जब घुटी-घुटी सी चीख कोई।
रोए जब निर्दोष तो कविता होती है॥

जब आँसू गिरते हों कोरे पृष्ठों पर।
शब्द न हों खामोश तो कविता होती है॥

जब ममता के आँचल में बचपन खेले।
मिले आत्म संतोष तो कविता होती है॥

दिखे कहीं जब सच सलीब पर टँगा हुआ।
प्रस्फुट हो आक्रोश तो कविता होती है॥

हरे-भरे खेतों में जब पुरवाई चले।
मनवा हो मदहोश तो कविता होती है॥

जब निधिवन में कान्हा रास रचाते हैं।
हृदय करे जयघोष तो कविता होती है॥

: तीन :

जिन के अंतर्मन दूषित हो जाते हैं
वो पल-पल में उद्वेलित हो जाते हैं।

निर्धारण कर लेते हैं जो मंजिल का
उनके रस्ते निर्धारित हो जाते हैं।

कान्हाजी के श्री-विग्रह में आते ही
आभूषण भी आभूषित हो जाते हैं।

कैसे हम उन पर विश्वास करें जिनके
लक्ष्य हमेशा परिवर्तित हो जाते हैं।

ज्ञानार्जन होता है कुछ लोगों का ध्येय
और अधिकतर बस शिक्षित हो जाते हैं।

सच्चरित्र सत्कर्मी सद्व्यवहारी लोग
अकसर मानस पर अंकित हो जाते हैं।

: चार :

गोरे हैं वो काले भी हैं, हैरत है!
दो किरदार सँभाले भी हैं, हैरत है!

शाम सवेरे जो हँस-हँस के मिलते हैं
मैल दिलों में पाले भी हैं, हैरत है!

इज्जत घट जाती है इज्जत देने से
ऐसा कहने वाले भी हैं, हैरत है!

मौका देख पड़ोसी से मिल जाते हैं
कुछ ऐसे घरवाले भी हैं, हैरत है!

सच्चाई की चाह उन्हें भी है लेकिन
मुँह पर मोटे ताले भी हैं, हैरत है!

कहने भर को त्यागी हैं, संन्यासी हैं
लेकिन तख्त सँभाले भी हैं, हैरत है!

मंजिल पर जो सबसे पहले पहुँचे थे
उन पैरों में छाले भी हैं, हैरत है!

भारतीय जीवन बीमा निगम में प्रशासनिक सहायक के पद पर कार्यरत। अब तक दोहा-संग्रह 'जप ले नमः शिवाय' व गजल-संग्रह 'कहाँ चले आए' प्रकाशित। हरिवंश राय बच्चन स्मृति पुरस्कार, जियालाल अग्रहरि सम्मान, साहित्य गौरव सम्मान, आचार्य पंकज स्मृति सम्मान, सुखनवर इंटरनेशनल अवार्ड से सम्मानित। दूरदर्शन दिल्ली तथा कई टीवी चैनलों पर काव्यपाठ।

: पाँच :

अभिमानी जंजाली दुनिया तुमको रास नहीं आएगी
ऐसी वैभवशाली दुनिया तुमको रास नहीं आएगी।

बंदूकों की फसल उगाकर शांतिदूत कहलाने वालो
इनसानों से खाली दुनिया तुमको रास नहीं आएगी।

खूब पिलाओ उन्मादों की हाला तुम भोले भालों को
लेकिन वो मतवाली दुनिया तुमको रास नहीं आएगी।

हिंसा नफरत झूठ जलन का बेशक कारोबार करो पर
इन साँचों में ढाली दुनिया तुमको रास नहीं आएगी।

चेहरों पर चेहरे चिपके हैं गोरे तन और दिल हैं काले
जाली है! यह जाली दुनिया तुमको रास नहीं आएगी।

जिनके उत्तर ज्ञात नहीं हों ऐसे प्रश्न खड़े मत करना
वरना 'दीप' सवाली दुनिया तुमको रास नहीं आएगी।

४० अरविंदपुरम-ए
सिकंदरा, आगरा-२८२००७ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९९२७८५९२४३

परिक्रमा : आत्मनिवेदन की यात्रा

• श्रीराम परिहार

नर्मदेहर। माँ नर्मदा हर्ष प्रदान करती है। वह 'नर्म' 'दा' है। वह रेवा है। वह 'रव' करती हुई प्रवहमान है। नर्मदा शिवकन्या है। शिव और नर्मदा एक ही शिवत्व के दो रूप हैं। शिव कल्याण-स्वरूप हैं। नर्मदा आनंद-स्वरूप है। शिव नर्मदेश्वर हैं। नर्मदा शांकारी है। नर्मदा रुद्रांग-उद्भवा है। यह रुद्र के श्रम से निकले श्रम-बिंदुओं का परमार्थ-स्वरूप है। यह अमरकांठी है। यह शिवगंगा है। यह माहेश्वरी है। यह मेकलसुता है। यह सोमेद्भवा है। यह महानद है। यह सरसा है। यह चित्रोत्पला है। यह विपाशा है। यह विमला है। यह दक्षिण गंगा है। यह बालुवाहिनी है। यह रंजना है। यह कृपापात्री है। यह विंध्य-सौंदर्या है। यह संस्कृति-स्रष्टा है। यह अमृता है। इसके दर्शनमात्र से कल्याण है।

पुण्या कनखले गङ्गा कुरुक्षेत्रे सरस्वती।
ग्रामे वा यदि वारण्ये पुण्या सर्वत्र नर्मदा॥
त्रिभिः सारस्वतं तोयं सप्ताहेन तु यामुनम्।
सद्यः पुनाति गाङ्गेयं दर्शनादेव नार्मदम्॥

(मत्स्य पुराण, १८५/१०-११)

माँ नर्मदा की परिक्रमा की जाती है। नर्मदा की प्रदक्षिणा की जाती है। नर्मदा की परकम्मा की जाती है। परिक्रमा शब्द परि+क्रम+घञ् से व्युत्पन्न है। भ्रमण करना, इच्छानुसार टहलना, इर्द-गिर्द घूमना, चारों ओर चक्कर लगाना, आसपास चौतरफा भ्रमण करना, सोद्देश्य प्रदक्षिणा करना, आराध्य के चारों ओर सश्रद्ध परिरंभण करना, अपने हृदय में स्थित, शरीर रूपी देवल में बैठे हुए आत्मस्वरूप देव का अपने ही स्थान पर खड़े-खड़े परिरंभण करना, प्रदक्षिणा करना आदि अर्थ प्रकट होते हैं। यह सनातन अनुष्ठान है। पूजन-अर्चन के उपरांत, मंदिर की, प्रतिमा की, देवता की, लोकदेवता की, गुरु की, माता-पिता की, पूज्य की, श्रद्धेय की, यज्ञवेदी की, यज्ञस्थल की, जीवनदात्री नदी की, सौंदर्यशाली पावन पर्वत की देव स्थानम् की, ग्राम की, पूज्य वृक्ष की, चित्रकूट में कामदगिरि की, ब्रज में गिरिराज गोवर्धन की, वृंदावन में चौरासी कोस की परिक्रमा द्वारा श्रीकृष्ण लीलाधाम के पुण्य-स्थलों की, वल्लभाचार्य की बैठकों की, पंचक्रोशी यात्राओं के द्वारा अपने श्रद्धास्पद स्थलों की, नदियों के सीमित दूरी तक जल-प्रवाह के तटों की, गणगौर घणीपर राजा की विदा वेला में प्रतिमाओं की, जवारों की, गौमाता की, पुण्य-सलिलानर्मदा की परिक्रमा-प्रदक्षिणा-परकम्मा की जाती है।

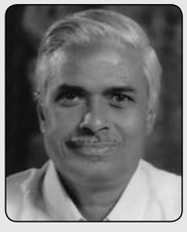

जाने-माने ललित-निबंधकार। ग्यारह ललित-निबंध संग्रह, एक नवगीत, एक यात्रा-वृत्तांत आदि पुस्तकें प्रकाशित तथा पत्रिका 'अक्षत' का संपादन। 'आचार्य रामचंद्र शुक्ल अखिल भारतीय पुरस्कार', 'साहित्य भूषण सम्मान', 'सारस्वत सम्मान', 'चक्रधर पुरस्कार', 'राष्ट्रधर्म गौरव सम्मान', 'ईसुरी पुरस्कार', 'दुष्यंत कुमार राष्ट्रीय अलंकरण' सहित अनेक सम्मान प्राप्त।

यानि कानि च पापानि, जन्मान्तर कृतानि च।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति, प्रदक्षिणायां पदे पदे॥

परिक्रमा में आत्मनिवदेन, आत्मविगलन, आत्मावलोकन, आत्मलघुता, आत्मकृतज्ञता की भावधारा ही अनरुके और अनटूटे सरक रही है। भारतीय संस्कृति की बहुत टणकी और रुनझुन बजती हुई प्रतिदान की बान रही है। भारतीय संस्कारों को जिससे जो कुछ मिला, उसके प्रति संस्कारशील मनुष्य और जीव विनत खड़े होते रहे हैं। संस्कृति के सपूतों को जहाँ से भी, जिससे भी जीवन की ऊर्जा, जीवन की सीख, जीवन की विधि, जीवन की निधि, जीवन का उपहार, जीवन का सौभाग्य, जीवन की वाणी, जीवन की भाषा, जीवन की परिभाषा, जीवन का बोध, जीवन का प्रभात, जीवन का पुण्य, जीवन का सुफल मिला; उसके प्रति वे श्रद्धा से भर गए। नयनों में प्रणति, हाथों में पान-फूल, शीश में नमन, वाणी में आराधन, पाँवों में यात्राएँ, हृदय की झारी में प्रेमजल भरकर प्रदक्षिणा करने निकल चले। आत्म-परमात्म, निर्गुण-सगुण, देव-देवी, सर्ग-निसर्ग, प्रकृति-संस्कृति सब उसकी श्रद्धा-आस्था की परिधि में पहले आये। फिर केंद्र में उन्हें आदर मिला। अभिषेक हुआ। उनका वंदन-पूजन-अर्चन-अभिनंदन हुआ। प्रदक्षिणा हुई। सत्पुरुष ऋषि-ऋण और देव-ऋण से उऋण हुए। श्रद्धा-केंद्र तीर्थ बन गए और कृतज्ञ सज्जन तीर्थयात्री। पृथ्वी माता प्रदक्षिणा करके भुवन-भास्कर के प्रति कृतज्ञता प्रकट करती है। आत्मा अनेक-अनेक रूपों में पुनः-पुनः स्वरूप धारण कर सृष्टि की कर्म-परिक्रमा पूरी करती है। चंद्रमा धरती की परिक्रमा कर और-और उजला होता रहता है। बूँद, सरिता, सिंधु, मेघ का अनुपम पथिक जल

धरती-नभ के बीच अचरज रच-रचकर प्रदक्षिणा करता है। सृष्टि उत्पत्ति, स्थिति, लय के त्रिक बिंदुओं में शाश्वत प्रदक्षिणा करती है। सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग, कलियुग अपनी अपरूप कालावधि में महाकाल की प्रदक्षिणा करते हैं। नदी संस्कृति द्वारा पालित-पोषित-पुष्पित-फलित-संस्कारित-उल्लसित मानुष नर्मदा माई की परकम्मा करते हैं।

निष्ठा, आस्था, श्रद्धा, भावना, सामर्थ्य, साहस, संकल्प के आधार पर नर्मदा परिक्रमा करने की अनेक विधियाँ हो गई हैं। पहले प्रकार की दंडवत् परिक्रमा है। इसमें पूरी परिक्रमा साष्टांग दंडवत् प्रणाम कर धरती पर लेटकर पथ पर आगे बढ़ते हुए पूरी की जाती है। पुराने समय में तपस्वी ऐसी परिक्रमा किया करते थे। यह बहुत ही कठिन और दुसाध्य होती है। दूसरी जलेरी परिक्रमा है। इसमें अमरकंटक से लेकर रत्नाकर सागर, नर्मदा-सागर-संगम तक जाकर पुन: उसी मार्ग या उसी तट से वापस आना होता है। फिर दूसरे तट से अमरकंटक से लेकर सागर-संगम तक जाकर वापस आया जाता है। इस परिक्रमा में नर्मदा को कहीं भी पार नहीं किया जाता है। लाँघा नहीं जाता है। सागर-संगम पर नाव या जहाज से भी उस पार नहीं जाया जाता है। यह भी एक प्रकार से कठिन परिक्रमा है। इसमें नर्मदा की दुगनी लंबाई और दुगना समय पार करना होता है। तीसरे प्रकार की हनुमत्परिक्रमा है। इसमें हनुमान की तरह उछल-उछल कर या कूद-कूदकर परिक्रमा की जाती है। इसमें उछल-कूदकर नर्मदा को इधर-उधर से पार भी किया जा सकता है। परिक्रमा पथ पर निरंतर आगे भी बढ़ते जाना होता है। चौथी सामान्य परिक्रमा है। इसमें नर्मदा मैया के किसी भी तट से एक इच्छित स्थान से परिक्रमा आरंभ की जाती है। एक ओर से १३१५ और दूसरी ओर से १३१५ इस तरह २६३० किमी. की परिक्रमा-पथ पर चलकर परिक्रमा उसी स्थान पर पूरी की जाती है। सिंधु-संगम-स्थल पर नाव या जहाज से ७० किमी. समुद्र को पारकर इस पार से उस पार जाया जाता है। दक्षिण तट का स्थान अंकलेश्वर और उत्तर तट का मीठी तलाई है। सामान्यत: पहले तो परिक्रमावासी पैदल ही परकम्मा करते थे। वर्षा के दिनों में चतुर्मास बीताते थे। सत्संग करते थे। देव-दर्शन करते थे। देशवासियों के विविध रूपों, अनुष्ठानों, पर्वों; उत्सवों, रीति-रिवाजों, लोक अनुभवों, लोक संस्कृति से परिचित होते थे। अब भी कई परकम्मावासी इसी विधि से परकम्मा करते हुए अपनी आस्था और समर्पण के पुष्प मैया को अर्पित करते हैं।

अब तो परिक्रमा का रूप बदल गया है। अनेक भक्त वाहनों से परिक्रमा करते हैं। कुछ भक्त थोड़ी दूर पैदल यात्रा करते हुए, फिर वाहन द्वारा यात्रा करते हुए, कुछ थोड़े समय परिक्रमा को एक स्थान पर छोड़कर, फिर दूसरे वर्ष सुविधा से उसी स्थान से आरंभ कर अनेक या चार-पाँच वर्षों में पूरा करते हैं। अधिकांश श्रद्धालु अब तो वाहन द्वारा परिक्रमा पर निकलते हैं। धर्मशालाओं में रुकते हैं। भोजनालायों में भोजन करते हैं। समाज में प्रचारित करते हैं, हमने नर्मदा-परिक्रमा की है। पहले परकम्मावासी किसी गाँव में किसी के घर के एक कोने में, आश्रम में, मंदिर में, सत्संग भवन में, तीर्थस्थल पर ही रुकते थे। चौमासा बिताते थे। भिक्षा माँगकर लाते थे। हाथ से भोजन बनाते थे। भूमि पर सोते थे। रात्रि विश्राम के पहले भजन-कीर्तन करते थे। सत्संग करते थे। जीवन जीने का अर्थ और जीवन पाने का मर्म समझने का एकाग्र चिंतन करते थे। उठते थे, नर्मदेहर के साथ। सोते थे तो नर्मदेहर को प्रणाम करके। चलते थे तो नर्मदेहर की करताल के साथ नाचते हुए। वे जीवन-पर्यंत कहते हैं नर्मदेहर।

पुनरपि जनमम्, पुनरपि मरणम्, पुनरपि जननी जठरे शयनम्। का क्रम निरंतर है। कौन किसका ऋण इस धरा धाम पर आकर चुका रहा है? कौन कहे। हिसाब-किताब बराबर करके यहाँ से जाने वाले तो कबीर, तुलसी, मीरा, रैदास, धना, सेन, पीपा, सावत माली, संत ज्ञानेश्वर, संत बसवेश्वर, नामदेव, तुकाराम, एकनाथ, समर्थ रामदास, नानक, नरसी मेहता, संत सिंगाजी, अनेक परमहंस विरले ही हुए हैं। आने-जाने, ऋण-शोधन का क्रम कर्म की गति और स्थिति के अनुसार चलता रहता है। ये परकम्मा पर पिछले जनम में निकले होंगे। वर्तमान परकम्मावासियों ने उन्हें अन्न-जल दिया होगा। अगले जन्म में ऐसा करने का अवसर नर्मदा माई देगी। अविगत की गति कौन जाने? कौन कहे?

शारीरिक थकान का भी अंशत: संबंध मानसिकता से है। शारीरिक थकान होती भी है। तो थोड़ा सुस्ताने, नर्मदाजी का जल पीने, किनारे पर हैं, तो स्नान करने या हाथ-पाँव-मुँह धोने से दूर हो जाती है। रात्रि विश्राम के बाद तो पुन: शरीर स्फूर्त होकर परकम्मा के लिए आतुर हो जाता है। जहाँ गहरी खाइयाँ, नदी-नालों का नर्मदा मैया में मेळ-स्थल आता है। आसपास के गाँव वाले सचेत कर देते हैं। वे सही और सुगम मार्ग बता देते हैं। भूखे को भोजन कराते हैं। रात्रि विश्राम के लिए अपने घर में रुकवाते हैं। सेवा करते हैं। पाँव छूते हैं। कुछ तो दस-पाँच, पचास रुपए की दक्षिणा भी देते हैं। वन पथ में एक-दो स्थानों पर हिरण, मयूर, सियार, बारहसिंगा, नीलगाय और अनेक पक्षियों के अनेक स्थानों पर दर्शन होते हैं। नर्मदा तटवासियों का सेवाभाव पूरे प्रदक्षिणा पथ में अजब-गजब देखने मिलता है। अभी भी बहुत कुछ बचा हुआ है। वृद्धों, अधेड़ों, युवाओं, किशोरों और बच्चों के व्यवहार तथा श्रद्धा-आस्था में किंचित् अंतर दिखाई देता है; पर सेवाभाव, मार्ग दिखाने, भूले को राह बताने, उसकी सहायता करने, परकम्मावासियों का सामान उठाने-धरने, नर्मदेहर कहने और छटपट उन्हें भोजन सामग्री देने के भाव और तत्परता में कोई अंतर नहीं दिखाई देता है। पूरे प्रदक्षिणा पथ में नर्मदा माई किसी को भूखा नहीं रहने देती है। भूखा नहीं सोने देती है। परकम्मावासियों को किसी न किसी गृहस्थधर्मी के यहाँ पुकारकर भोजन कराया जाता है। किसी आश्रम में भोजन व्यवस्था हो जाती है। कहीं-कहीं सदाव्रत चलते हैं, वहाँ भोजन-प्राप्ति हो जाती है। भोजन करने का पैसा कहीं नहीं लिया जाता है। परकम्मावासियों को भोजन का पैसा नहीं देना पड़ता है। न भोजन का, न रुकने का दाम कहीं नहीं लगता है। नर्मदा मैया के प्रति आस्था और परकम्मावासियों के प्रति

श्रद्धा के कारण अभी नर्मदा प्रदक्षिणा-पथ बाजार की दाढ़ और दहाड़ से अछूता है।

पुनरपि जनमम्, पुनरपि मरणम्, पुनरपि जननी जठरे शयनम्। का क्रम निरंतर है। कौन किसका ऋण इस धरा धाम पर आकर चुका रहा है? कौन कहे। हिसाब-किताब बराबर करके यहाँ से जाने वाले तो कबीर, तुलसी, मीरा, रैदास, धना, सेन, पीपा, सावत माली, संत ज्ञानेश्वर, संत बसवेश्वर, नामदेव, तुकाराम, एकनाथ, समर्थ रामदास, नानक, नरसी मेहता, संत सिंगाजी, अनेक परमहंस विरले ही हुए हैं। आने-जाने, ऋण-शोधन का क्रम कर्म की गति और स्थिति के अनुसार चलता रहता है। ये परकम्मा पर पिछले जनम में निकले होंगे। वर्तमान परकम्मावासियों ने उन्हें अन्न-जल दिया होगा। अगले जन्म में ऐसा करने का अवसर नर्मदा माई देगी। अविगत की गति कौन जाने? कौन कहे?

मैंने भी जन्म-जन्मांतर के संचित फलों से नर्मदा मैया के सौंदर्य को, उसके प्रपातों को, उसके तटों की वन-सुषमा को और उन वनों, तटों, घाटों पर अपने जीवन को उजला बनाने वाले वनवासियों, भोले भारतवासियों के दिन-रात लिखी जाने वाली कर्म की किताब को बाँचने के उद्देश्य से माँ रेवा की परकम्मा की है। बहुत पाया है मैंने। रीता-रीता गया था। भरा-भरा लौटा हूँ। मैया बहुत देती है। सबको भरती है। सबको पूरण करती है। वह पयस्विनी है। सदानीरा है। कामधेनु है।

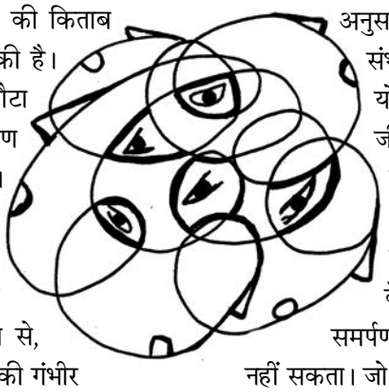

परकम्मावासी में से किसी उदास आँखों वाले साथी से, किसी अन्य परकम्मावासी से बात करने उसके मन को कुरदने से अलग-अलग उद्देश्यों का पता चलता है। कोई संतान कामना से, कोई संतान की खुशहाली के लिए, कोई पुत्र-पुत्री की गंभीर बीमारी से मुक्ति के लिए, कोई कुष्ठ रोग दूर करने के लिए, कोई पुत्री के विवाह की मानता के लिए, कोई बेटे-बेटी की नौकरी के लिए, कोई अपने संन्यासी गुरु के साथ उनकी सेवा के लिए और कोई दोनों लोक सुधारने की आकांक्षा लिये नर्मदा-प्रदक्षिणा पर निकलता रहा है। निकल रहा है। पहले तो परकम्मा बहुत कठिनाइयों से भरी थी। पहले के लोगों का, भक्तों का संकल्प भी उतना ही कठोर-दृढ़ हुआ करता था। 'करतल भिक्षा, तरुतल वास' का प्रण लेकर परकम्मा की जाती थी। मैया नर्मदा उनकी नैया पार लगाती थी। नर्मदा किनारे रहने वाले अनेक सामान्य जन, गृहस्थ, साधु-संन्यासी भी परकम्मा करते हैं। जो परकम्मा कर आते हैं; उनमें श्रद्धाभाव और सेवाभाव अन्य से विशेष होता है। वे मार्ग की विपदाओं-बाधाओं से दो-दो हाथ करके आए हैं। सेवाभाव का तो ऐसा है कि भारतीय जन के मूल संस्कार में ही पल्लवित है। इस भूमि के बेटे की प्रकृति में ही दया, करुणा, प्रेम, सदभाव, शांति, परदु:खकातरता, सौजन्य, पारस्परिकता, समन्वय और समरसता अंतर्निहित है। यह उसे सिखाना नहीं पड़ता है। फिर नर्मदा जो परोपकारी है। उसी की तरलता, निर्मलता, निरंतरता, उदारता, सर्वतृप्तता प्रवृत्ति से वह अनेक सद्गुण सीखता है। कर्म में साकार करता है।

भूमितल पर केवल नर्मदा माँ की ही परिक्रमा की जाती है। हमारे यहाँ सिंधु/ब्रह्मपुत्र और शोणभद्र को 'नद' कहा गया है। शेष सबको नदियाँ या माता कहकर पुकारा जाता है। माँ की परकम्मा करना पावन-पुण्य कार्य है। हमारी भारतीय परंपरा में अनेक शक्तियों की देवी रूप में प्रतिष्ठा हुई है। माँ नर्मदा जलशक्ति की साक्षात् देवी प्रतिमा प्रवाह रूप में है। उसे भी एक देवी शक्ति मानकर परकम्मा श्रद्धालु जनों ने प्रारंभ की होगी। यह प्रदक्षिणा जन-जन से मिलने, प्रत्येक क्षेत्र के भूगोल के साथ-साथ मानवीय व्यवहार को जानने, संस्कृति की एकसूत्रता को परखने और राष्ट्र की अखंडता को साकार देखने के उद्देश्य से आरंभ हुई है। पुण्य कमाने का भाव तो सर्वोपरि रहता ही है। घुमक्कड़ प्रकृति भी हमारे संस्कृति-चेता महापुरुषों, ऋषियों-मुनियों में रही है। नारद तो विभिन्न लोकों में निरंतर घूमा करते हैं। रामकथा का पात्र बालि सभी समुद्रों और पवित्र स्थानों पर संध्या-पूजन करता रहा है। अंगिरा, धौम्य, लोमश और पुलस्त्य ऋषियों की भ्रमण-यात्राओं के प्रसंग हमारे वाङ्मय में हैं। स्कंद, बलराम और प्रह्लाद भी बड़े तीर्थयात्रियों में से रहे हैं। वामन पुराण के अनुसार प्रह्लाद तो विंध्याचल में स्थित शिव के दर्शन करने संभवत: ओंकारेश्वर क्षेत्र में भी आए हैं—'ततो जगाम योगात्मा द्रष्टुं विन्ध्ये सदाशिवम्'। पुण्य फल प्राप्ति, जीवन के उज्ज्वल दिनों की आस और धरा-धाम पर जनम लेने की सार्थकता के लिए माँ नर्मदा की परकम्मा की जाती रही है, की जाती रहेगी। सिद्धि भी मिलती है। नाना रूप में किसी भी क्षण, किसी भी हेतु माँ नर्मदा के दर्शन भी होते हैं। यह प्रगाढ़ आस्था और एकनिष्ठ समर्पण का विषय है। जिसे दर्शन या अनुभव होता है, वह कह नहीं सकता। जो कहता है, उसे अनुभव नहीं होता है। यह गूँगे का गुड़ है। यह गिरा अनयन, नयन बिनु वाणी की दशा है। पर हाँ, दर्शन भी होते हैं। सिद्धि भी मिलती है—आत्मकल्याण और समदृष्टि के लिए।

परिक्रमा करते-करते सबसे पहला परिवर्तन तो स्वयं में ही आता है। दृष्टि विस्तार होता है। समाज के बड़े और विविध रूपों वाले आकार से सीधे जुड़ने, संवाद करने का अवसर मिलता है। देश, धरम, रीति, नीति, मर्यादा, काण-कायदा, पर्व, उत्सव, त्योहार, घर, घाट, वाट, खेत, खलिहान, पशु, पक्षी, जीव, जंतु, नदी, नद, सरोवर, वन, पर्वत, पहाड़, खाई, खंदक, गुफा, संत, तपस्वी, संन्यासी, वैरागी, मँगता, भिखारी, दानी, परमार्थी, योगी, यति, ऋषि, मुनि, गृहस्थ, व्यापारी, नाव, जहाज, आश्रम, धर्मशाला, मंदिर, कुटिया, महल, झोपड़ी, नगर, ग्राम, लकुटी, कामरी, दंड, कमंडल, माला, तिलक, अंग भभूति, अलख निरंजन, बम भोले, हर नर्मदे। यह सब एक प्रदक्षिणा से फोकट में मिलता है। है कोई ऐसा दाता? कोई नहीं। शिव और शिवकन्या रेवा ही पतित पावन है। अधम उद्धारक हैं।

चित्त की चंचलता कम होती है। मन की पवित्रता विहँसती है। व्यवहार में परिवर्तन आता है। कर्म का उद्देश्य बड़ा, पुण्य शिखर की ओर और आत्मोषर्ग की बान लिये किसी अनजान किंतु प्रकाशमय दिशा की

ओर सहज ही बारंबार उन्मुख होता है। जीवन का लक्ष्य बड़ा होने पर तथा लौकिक को जोड़ते हुए पारलौकिक होने पर धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का पुरुषार्थ चतुष्ट्य स्पष्ट होने लगता है। समरस समाज, संतुलित अर्थाकांक्षा, संयमित कामनाएँ, धर्मसम्मत कर्म करते हुए शिव के परमधाम पहुँचने की अभिलाषा ही शेष रहती है। वह भी नि:शेष हो जाए। माँ नर्मदा से यही प्रार्थना है। देवादिदेव शिव से यही प्रणति है। पुरुषार्थ का एक आयाम यह भी है कि हम अपनी आस्था को प्रबल करने हेतु सांस्कृतिक स्थलों के प्रति नमन करते हुए, उनके संरक्षण और सवर्धन का उपक्रम करें। जीवन-सरिता को माँ रेवा की प्रवहमान धारा की तरह निरंतर अग्रसर करते रहें। माँ नर्मदा जल के रूप में भगवान् शिव की सौंदर्य-तरल सृष्टि है। यह धरती का सौंदर्य और गौरव दोनों है। "नमामि देवी नर्मदे।"

मेरा गाँव नर्मदा के दक्षिण तट पर नर्मदा से १५ किलोमीटर दूर बसा था। वह अब नर्मदा सागर बाँध के पानी में डूब गया है। मेरी बड़ी जीजी (बहन) का गाँव नर्मदा के दक्षिण तट पर ०३ (तीन) किलोमीटर की दूरी पर बसा था। वह भी डूब गया है। मेरी कक्षा ९वीं और १०वीं की पढ़ाई वहीं रहते हुए हुई। जीजी के घर से (गाँव से) ही ०५ किलोमीटर दूर बलड़ी नामक कस्बे में स्थित विद्यालय में रोज आना-जाना पड़ता था। नर्मदा परकम्मा करने वालों का पुराना परिक्रमा पथ वहीं से पुनघाट, बलड़ी, बंधानिया, सरई होकर दक्षिण तट के किनारे-किनारे पश्चिम की ओर जाता था। बाँध के पानी में वह पथ भी डूब गया है। जीजी के गाँव से विद्यालय जाते समय रास्ते में अनेक और अलग-अलग बोली-बानी, वेश-भजन वाले परकम्मावासी मिलते थे। उनके हम पाँव छूते। 'नर्मदेहर' कहते-करते। मन बड़ा उत्साह और कौतूहल से भर जाता था।

किसी-किसी परकम्मावासी को चलते-चलते जीजी के गाँव में साँझ हो जाती थी, तो वह वहीं रुक जाता था। जीजी के घर में उनके ससुर ने परिकम्मावासियों के लिए रुकने के लिए एक दालान बनवा रखा था। उनके भोजन आदि की व्यवस्था भी थी। देर रात में पहुँचकर रुकने वाले परकम्मावासियों को हम हमारे ही साथ घर पर ही भोजन कराते थे। चौमासा में कुछ परकम्मावासी हमारी जीजी के गाँव में ही रुक जाते थे। वे बरसात के मौसम में चार महीने देवशयनी ग्यारस से देवउठनी ग्यारस तक वहीं रहते थे। उनसे बड़ी आत्मीयता हो जाती थी। वे रोज सुबह-शाम नर्मदाजी की आरती करते थे। कोई-कोई तो रोज तीन किलोमीटर दूर बह रही नर्मदाजी में रोज स्नान करने जाता था। माँगकर खाना, जमीन पर सोना, हर व्यक्ति से 'नर्मदेहर' कहकर अभिवादन करना, परिचय करना, रोज देर रात तक भक्ति करना उनका स्वभाव बन जाता था। यह मेरे बालमन को बहुत अच्छा, कौतुक भरा, आस्था जगाने वाला, नर्मदाजी के धरती पर महत्त्व और महिमा को जानने-समझनेवाला, मनुष्य की नदी संस्कृति के निर्माण में विनम्र रचनात्मकता सिद्ध करने वाला और परकम्मा के द्वारा सैकड़ों-हजारों लोगों से संपर्क, मेल-जोल, संबंध और आत्मीयता रखने वाला गतिवान संकल्प अनुभव हुआ। तब से ही मन में कौतूहलमय संकल्पना पलने लगी। कभी नर्मदा मैया की कृपा हुई, तो मैं भी परकम्मा करूँगा।

बड़ा हुआ। नाना कारज, नाना जंजालों में उलझा रहा। पर मन में एक साध नर्मदा परकम्मा करने की बराबर पलती रही है। माँ-पिताजी के साथ बचपन में हर अमावस्या को नर्मदा मैया में स्नान करने जाना, पिताजी, माँ, क्षेत्रवासियों, साधु-संन्यासियों, नर्मदा के प्रति आस्था, परकम्मावासियों का उत्साह और समर्पण इन सबने मेरी साध को और पुष्ट किया। माँ नर्मदा ने मुझे प्रेरणा देकर नवंबर-दिसंबर २०११ में मेरा परकम्मा-पथ-प्रशस्त किया। मेरे मन में केवल नर्मदा प्रदक्षिणा की ही कामना रही है।

पश्चिम के परिक्रमा पथ में आगे सतपुड़ा पूर्व से पश्चिम की तरफ सौंदर्य के महाप्रतिमान की तरह लेटा है। कोई दीया-बाती नहीं। कोई हलचल नहीं। कहीं-कहीं दूर बिजली के लट्टू अँधेरे की आँखों के समान चमकते दिखाई देते हैं। अस्ताचलगामी सूर्य की लालिमा संपूर्ण वन प्रांत और वनवासी अंचल में हरिद्रा-कुंकुम एक साथ छिटक रही है। संझा-वेला में शिव और नर्मदा दोनों का स्मरण हो आता है। इन्हीं शैल-शिखरों पर भोले बाबा धूनी रमाकर बैठे होंगे। उनकी जटाओं-सी फैली पहाड़ियाँ एक उलझाव भरा सम्मोहन रचती हैं। उन जटाओं से टपकती जल-बूँदों के एकत्रीकृत स्वरूप से ही छोटी-छोटी पहाड़ी नदियाँ कल-कल करती हैं। वे इस वन-प्रांतर को सौंदर्य और पशु-पक्षियों की प्यास को तृप्ति देती हैं।

नर्मदा परिक्रमा में प्राप्त अनुभव अद्‌भुत और अनुपम हैं। माँ नर्मदा के संग-साथ चलने वाले ये तट के अनुभवों की प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति ही इसका सौंदर्य है। परिक्रमा में प्राय: चिड़ियों की चहचहाट के साथ और पक्षियों के आँख खुलने से पहले ही नींद खुल जाती है। उठते ही माँ नर्मदा के दर्शन होते हैं। प्राणों के संपुट से ध्वनि निकलती है—'नमामि देवी नर्मदे' हे माँ मैं तेरा बालक हूँ। तेरे आँचल की रेत पर चलकर अपनी यात्रा को सार्थक करने की अभिलाषा लेकर चल रहा हूँ। हथेलियों को खोलकर स्मृति दोहराती है—'कराग्रे वसते लक्ष्मी:, करमध्ये सरस्वती। कर मूले तु गोविन्द:, प्रभाते कर दर्शनम॥' साथ ही धरती को प्रणाम कर प्रार्थना करता हूँ—'समुद्र वसने देवि, पर्वतस्तनमण्डले। विष्णुपत्नि! नमस्तुभ्यं पादस्पर्शम क्षमस्वे॥' याद आती है वैदिक ऋषि की वाणी—'माता भूमि: पुत्रोऽम् पृथिव्या:।' मैं हाथ जोड़े नर्मदाजल में डुबकी लगाकर खड़ा हूँ। हाथ में अर्घ, मन में भाव, प्राणों में आस्था, आँखों में आँसू और वैखरी में 'मातु नर्मदे' एक साथ अंकुरित होते हैं। प्राची में नर्मदाजल में से भगवान् भुवन भास्कर लाल-लाल अमृत कलश लिए उभरते हैं। पत्र-पत्र नमन मुद्रा में ब्रह्मांड प्रकाशक को भावांजलि देने लगता है। माँ रेवा अपने हृदय में सूर्य-बिंब को धारण कर रक्ताभ हो उठती है। अर्चन-वंदन मेरे भीतरी कक्ष में (अंतस में) प्रकाश-उजास की सुवास भर देते हैं।

परिक्रमा पथ में व्यापक समाजबोध भी होता है। प्रकृति की गोद में किलोल करते गाँव अभी भी भारत की पहचान बने हुए हैं। परंपरागत

व्यवहार और जीवन के संसाधन अभी भी मूल रूप में देखे जा सकते हैं। बैलगाड़ी अभी भी औद्योगिक युग, मोटरसाइकिल की सवारी, ट्रैक्टर की गुर्राहट के बीच निमाड़ का पुष्पक विमान बनी हुई है। कार्तिक पूर्णिमा के समय ओंकारेश्वर के मेले में आते-जाते समय इन पंक्तिबद्ध सवारी बैलगाड़ियों का सौंदर्य निहार सकते हैं। वही और उसी तरह के सुंदर दृश्य गाँवों से मंडियों में कपास बेचने के लिए बेड़े बैलगाड़ियों के देखे जा सकते हैं। गाड़ियों की गतिमानता, बैलों का रूप-सौंदर्य, किसान का श्रम और पुरुषार्थ कर्म की निरंतरता के रूप में पा सकते हैं। परकम्मा के रास्तों में अधिकांश स्थलों पर चारों तरफ का प्राकृतिक दृश्य बहुत दूर-दूर तक फैला है। ऊँची-नीची भूमि, वृक्षहीन पहाड़ियाँ, वृक्षाच्छादित पहाड़ और उनमें से बीच-बचाव कर बहने वाली छोटी-बड़ी नदियाँ, छोटे-छोटे नाले, हरी-भरी मनोरम दृश्यावली का सृजन करते हैं। उनके पास पानी है। जिनके पास पानी होता है, जीवन का हरापन भी उनके पास रहता है। बीच-बीच में आदिवासियों के बने झोंपड़े जीवन की संघर्ष-कथा कहते हैं। झोंपड़ी के बाहर खेलते धूल-धूसरित बच्चे, तीतर, मुर्गी, बकरियों की रेलमपेल और घूँघट में से झाँकती दो आँखें जीवन के रूखेपन की भागवत-कथा को सरस बनाने का उपक्रम करती-सी प्रतीत होती हैं।

पश्चिम के परिक्रमा पथ में आगे सतपुड़ा पूर्व से पश्चिम की तरफ सौंदर्य के महाप्रतिमान की तरह लेटा है। कोई दीया-बाती नहीं। कोई हलचल नहीं। कहीं-कहीं दूर बिजली के लट्टू अँधेरे की आँखों के समान चमकते दिखाई देते हैं। अस्ताचलगामी सूर्य की लालिमा संपूर्ण वन प्रांत और वनवासी अंचल में हरिद्रा-कुंकुम एक साथ छिटक रही है। संझा-वेला में शिव और नर्मदा दोनों का स्मरण हो आता है। इन्हीं शैल-शिखरों पर भोले बाबा धूनी रमाकर बैठे होंगे। उनकी जटाओं-सी फैली पहाड़ियाँ एक उलझाव भरा सम्मोहन रचती हैं। उन जटाओं से टपकती जल-बूँदों के एकत्रीकृत स्वरूप से ही छोटी-छोटी पहाड़ी नदियाँ कल-कल करती हैं। वे इस वन-प्रांतर को सौंदर्य और पशु-पक्षियों की प्यास को तृप्ति देती हैं। विशेष बात यह है कि पहाड़ी तलहटी में कृषि योग्य भूमि में खेती करते वनवासियों के खेतों के अन्नकणों में ये नदियाँ अपने जल से दूध और मिठास भरती हैं। सतपुड़ा की इन्हीं पहाड़ियों से निकलकर बहती ये असंख्य लघु सरिताएँ नर्मदा के अक्षय जल-भंडार में श्रीवृद्धि करती हैं। मैं परकम्मावासी साँझ के झुरमुटे में सतपुड़ा की इस मानवीय सांस्कृतिकता को गुन रहा हूँ। व्यक्ति का पुरुषार्थ और निरंतर प्रयास उसे अपने लक्ष्य तक पहुँचाते हैं। परकम्मावासी साथी राधू भाई पढ़े-लिखे नहीं हैं। वे अनुभव संपन्न शिक्षित सामान्य व्यक्ति हैं। सतपुड़ा के पत्र-पत्र झरते सन्नाटे और भयद अँधेरे में वे एक सूक्ति बोलते हैं। मैं बाहर-भीतर प्रकाशित हो उठता हूँ।

मौत, बुढ़ापा, आपदा, सब काहू को होय।
ज्ञानी काटे ज्ञान से, मूरख काटे रोय॥

परिक्रमा में मैया का आधार है। मैया की जय है। परिक्रमा में सागर संगम पर नर्मदा माई को दक्षिण तट से उत्तर तट तक नाव से पार किया जाता है। बहुत सुबह-सुबह सूर्योदय से पहले नाव पर सवार हो जाना होता है। यह अद्‌भुत और अनूठा अनुभव है। रात्रि ढल रही है। आकाश में चंद्रमा है। तारे हैं। धरती पर मिट्‌टी है। माटी के पुत्र हैं। नर्मदा है। नर्मदा के बेटे हैं। वाणी का अलौकिक उत्साह-स्वर है। उस स्वर में माँ नर्मदा की जय है। जय की गूँज भोर में जागते हुए महासिंधु की लहरों पर तैरती हुई दूर-बहुत-दूर तक चली जाती है। नाव चल पड़ती है। चंद्रमा के साक्ष्य में मैं समुद्र पर तैर रहा हूँ। सब कुछ रोमांचक है। किनारा पीछे छूट रहा है। समुद्र का विराट-विशाल वक्षस्थल सामने आ रहा है। ठंडी हवा चल रही है। हवा ताजगी देने वाली है। नींद को भगाने वाली है। वह नींद से बोझिल पलकों का भार कम कर रही है। नाव चलती जा रही है। आकाश में जिस ओर हल्की लालिमा फैलने लगती है, भान होता है, पूर्व इधर ही है। सूरज इसी रास्ते से आकर हमारी रात को सुबह में बदलने वाला है। किनारे पीछे, बहुत पीछे छूट गए हैं। खाड़ी से निकलकर नाव समुद्र में आ जाती है। माँ नर्मदा समुद्र में आकर विसर्जित हो जाती है। समुद्र में जहाँ आकर मिलती हैं, वहाँ बहुत दूर तक नर्मदा-जल समुद्र में अपनी छवि और अस्तित्व रेखांकित करता रहता है।

चारों ओर पानी ही पानी है। मटमैला पानी है। ज्वार के कारण या पानी के उतार पर होने के कारण किनारों की माटी घुली हुई है। नौका घर्रघर्र करती दक्षिण से उत्तर की ओर बढ़ी जा रही है। बीच-बीच में लहरें नौका से टकराकर पवित्र कर देती हैं। तन भीगता है तो मन भी अंशत: ही सही भीगता तो है। मैं देखता हूँ कि पानी में से, समुद्र में से सूर्य भगवान् निकल रहे हैं। यह मेरे जीवन का पहला और निसर्गपूरित चमत्कार से भरा विस्मय-क्षण है। मेरी आँखें तरल हो जाती हैं। दोनों हाथ जुड़ जाते हैं। वैखरी सूर्य-गायत्री उच्चारित करने लगती है। 'ॐ भास्कराय विद्‌महे, दिवाकराये धीमहे, तन्नो सूर्य: प्रचोदयात्।'

तत्क्षण नाविक कहता है—यहीं माँ नर्मदा सागर में इधर पूर्व से आकर समाती है और स्वयं को सागर बना लेती है। पानी ही पानी है। समुद्र ही समुद्र है। कौन जल नर्मदा का, कौन समुद्र का, कुछ भी सूझ नहीं पड़ता है। बूँद समानी समुद्र में। नदी समानी समुद्र में। माँ नर्मदा समानी सिंधु में। सूर्योदय और नर्मदा-सागर-संगम पर पहुँचने की समान वेला है। आँखों से अश्रुधारा बहने लगती है। मैं अश्रुजल से माँ नर्मदा का जलाभिषेक करता हूँ। हे माँ नर्मदे! तेरे चरणों की वंदना करता हूँ। माँ! तेरा यह बेटा कितने दिनों की साध लेकर तेरी ममत्व-तरलता को प्रणाम करने आया है। ओ माँ! तेरी ही अक्षय जलराशि वनस्पति, फसलों, जलस्रोतों में निस्रत होकर हमारे प्राणों को पोषित और पुष्ट कर रही है। माँ! जीवन के अशेष क्षणों का तुझे समर्पण है। माँ! यह जन्म यदि सौभाग्य है, तो तेरे दर्शन, तुझमें स्नान, तेरा वंदन और तेरी परिक्रमा परम सौभाग्य है। ओ माँ! मैं अमृत्व के पथ पर चुटकी-चुटकी पुण्य-कुंकुम बिखेरते चले जाना चाहता हूँ। इति शुभम्।

साअ
आजाद नगर
खंडवा-४५०००१ (म.प्र.)
दूरभाष : ९४२५३४२७४८

लेखनी के तपस्वी साधक : आनंद मिश्र 'अभय'

● **विजय कुमार**

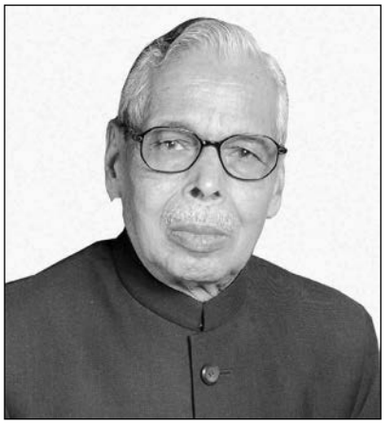

उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ से प्रकाशित हो रही मासिक पत्रिका 'राष्ट्रधर्म' का प्रकाशन रक्षाबंधन (३१.८.१९४७) से प्रारंभ हुआ था। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, उ.प्र. के तत्कालीन प्रांत प्रचारक श्री भाऊराव देवरस तथा सहप्रांत प्रचारक श्री दीनदयाल उपाध्याय ने इसके लिए 'राष्ट्रधर्म प्रकाशन लिमिटेड' की स्थापना की थी। 'राष्ट्रधर्म' के प्रथम संपादक थे श्री अटल बिहारी वाजपेयी और श्री राजीवलोचन अग्निहोत्री। अटलजी आगे चलकर देश के प्रधानमंत्री बने। 'राष्ट्रधर्म' को श्री रामशंकर अग्निहोत्री, श्री भानुप्रताप शुक्ल, श्री वचनेश त्रिपाठी, श्री वीरेश्वर द्विवेदी जैसे यशस्वी संपादकों का साथ मिला। इसी कड़ी में एक थे श्री आनंद मिश्र 'अभय'।

अभयजी का जन्म ग्राम सहजनपुर (हरदोई, उ.प्र.) में चार दिसंबर, १९३१ को देश, धर्म एवं साहित्य के प्रेमी श्री रामनारायण मिश्र 'विशारद' तथा श्रीमती रामदेवी के घर में हुआ था। बी.ए. तथा 'साहित्य रत्न' की शिक्षा पाकर वे सरकारी सेवा में आ गए तथा प्रदेश शासन में विभिन्न जिम्मेदारियाँ निभाते हुए ३१ दिसंबर, १९८९ को वरिष्ठ पी.सी.एस. अधिकारी के पद से सेवानिवृत्त हुए। लेखन में रुचि होने के कारण वे लखनऊ के 'विश्व संवाद केंद्र' से जुड़ गए। १९९७ में उन्हें 'राष्ट्रधर्म' के संपादन का गुरुतर दायित्व दिया गया।

अभयजी का ननिहाल कट्टर आर्यसमाजी था, जबकि पिताजी सनातनी विचारों के मानने वाले थे। अत: उन्हें हिंदू धर्म की सभी प्रमुख धाराओं को समझने का अवसर मिला। पिताजी हिंदी, उर्दू, संस्कृत एवं फारसी के विद्वान् थे। वे ३५ वर्ष तक लगातार एक ही विद्यालय में प्रधानाचार्य रहे। इस दौरान उन्होंने कभी प्रोन्नति नहीं ली; क्योंकि इससे होने वाले स्थानांतरण से उन्हें अपने वयोवृद्ध पिताजी की सेवा से वंचित रहना पड़ता। वे १५ वर्ष तक मासिक पत्रिका 'शिक्षा सुधा' और 'शिक्षक बंधु' के संपादक रहे। अत: अभयजी को अध्ययन, लेखन व संपादन की कला घुट्टी में ही प्राप्त हुई।

सरकारी सेवा में उन्हें कई जगह रहने का अवसर मिला। साथ में पत्नी तथा पाँच बच्चों का परिवार भी था। यदि वे चाहते, तो इस दौरान बहुत धन बटोर सकते थे; पर वे अनैतिक साधनों से सदा दूर रहे। उनका एक ही शौक था, अच्छी पुस्तकें खरीदना और पढ़ना। उनके घर में ५,००० से भी अधिक पुस्तकों का एक समृद्ध पुस्तकालय है, जिसकी सब पुस्तकें उन्हें हृदयंगम थीं।

अभयजी को हिंदी, संस्कृत, अंग्रेजी तथा उर्दू का अच्छा ज्ञान था। संपादन करते समय कोई तथ्य गलत न चला जाए, इसका वे विशेष ध्यान रखते थे। देश-धर्म पर हो रहे हमलों और हिंदुओं की उदासीनता से वे बहुत खिन्न रहते थे। अपने लेखों में वे इसके बारे में बहुत उग्रता से लिखते थे। वर्तमान चुनाव प्रणाली को वे अधिकांश समस्याओं की जड़ मानते थे। उनके लेखन एवं संपादन से समृद्ध साहित्य में हमारे दिग्विजयी पूर्वज, हमारे वैज्ञानिक, समय के हस्ताक्षर, शिवा बावनी, विश्वव्यापी हिंदू संस्कृति, राष्ट्रधर्म के पथ पर, श्रीराम सेतु आदि प्रमुख हैं। उन्होंने कविता, कहानी, व्यंग्य, निबंध आदि विधाओं में प्रचुर लेखन किया, जो अनेक प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ है।

अभयजी 'उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान' के अनेक महत्त्वपूर्ण पदों पर रहे। २००३ में साहित्य मंडल (श्रीनाथद्वारा, राजस्थान) ने उन्हें 'संपादक शिरोमणि' की उपाधि से अलंकृत किया। श्री छोटीखाटू पुस्तकालय (राजस्थान) से २००७ में 'दीनदयाल स्मृति सम्मान' प्राप्त हुआ। वर्ष २०११ में म.प्र. शासन ने भी उन्हें सम्मानित किया। शारीरिक और मानसिक कष्टों के बीच भी दृढ़ रहते हुए उन्होंने २०१६ तक 'राष्ट्रधर्म' का संपादन किया। २८ मार्च, २०२४ को वृद्धावस्था के कारण परिजनों के बीच बाराबंकी में घर पर ही उनका देहांत हुआ।

सु.अ.

सुदर्शन कुंज, सुमन नगर, धर्मपुर
देहरादून-२४८००१ (उत्तराखंड)

हिंदी कहानियों में वर्णित वृद्ध जीवन

• राहिला रईस

मुश्ताक अहमद यूसुफी की पंक्ति से मैं अपनी बात आरंभ करना चाहूँगी—'उम्र भी जमीर और जूते की मानिंद है, जिनकी मौजूदगी का अहसास उस वक्त तक नहीं होता, जब तक वो तकलीफ न देने लगें।'

जैसा कि इस पंक्ति से समझा जा सकता है कि बढ़ती उम्र तभी समझ आती है, जब तकलीफ होना आरंभ हो जाती है। यह तकलीफ न सिर्फ शारीरिक होती है, अपितु मानसिक भी होती है। हिंदी कहानियों में बूढ़ों की इसी अवस्था का चित्रण विविध रूप में किया गया है। वृद्ध कहानी के आरंभ से ही उसका विषय रहे हैं, पहले यह विमर्श के रूप में स्थापित नहीं था, किंतु समाज का महत्त्वपूर्ण अंग होने के नाते अनेक कहानीकारों ने स्वत: ही वृद्ध जीवन को विषय बनाकर कहानियाँ लिखी हैं। वृद्धों के जीवन के विविध पहलुओं की पड़ताल हमें हिंदी कहानी में मिलती है। जहाँ न सिर्फ वृद्धों की शारीरिक क्षमताओं के चूक जाने का आख्यान लिखा गया, बल्कि समाज में उन्हें अनुपयोगी समझे जाने की मानसिकता का भी विशद विवेचन किया गया है। वृद्धों की अपनी मानसिकता और अंतर्द्वंद्व को भी समझने का प्रयास जहाँ इन कहानियों में मिलता है, वहीं युवा वर्ग की वृद्धों के प्रति सोच और व्यवहार की भी पड़ताल की गई है।

वृद्ध समाज की नींव हैं। ये वही हैं, जिन्होंने अपनी जवानी लुटाकर किसी दूसरे को जवानी प्रदान की है। इनके चेहरे और शरीर की झुर्रियाँ और कमजोरी किसी दूसरे के शरीर के गठन और चेहरे की रौनक की कहानी बयान करती हैं। ये वही हैं, जिन्होंने अपने बच्चों के भविष्य के लिए अपने वर्तमान की आहुति दी है। और आज जब वे निशक्त अवस्था में हैं तो वे उसी संतान से, जिनके पालन-पोषण और सुख-सुविधाओं के लिए उन्होंने अपनी हड्डियाँ गला दीं, क्या चाहते हैं, सिर्फ उनका थोड़ा सा समय, थोड़ी सी देखभाल और थोड़ा सा मान-सम्मान। अपने इस शोध पत्र में उनके इसी दंश का आभास कराने वाली कहानियों को मैंने चुना है। हिंदी कहानी साहित्य में वृद्ध जीवन पर अनेक कहानियाँ लिखी गई हैं, उन सभी की चर्चा यहाँ संभव नहीं है, अत: विषय विशेष और काल को आधार बनाकर यहाँ कुछ चुनिंदा कहानियों की ही चर्चा की गई है, ताकि विषय के दोहराव से बचा जा सके।

सुपरिचित लेखिका। प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में लेख, कहानी, शोध-पत्र, अनुवादित कहानियाँ प्रकाशित। नाथद्वारा की प्रसिद्ध संस्था 'साहित्य मंडल' द्वारा सम्मानित। संप्रति अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में सहायक प्रोफेसर (हिंदी) के रूप में कार्यरत।

मुंशी प्रेमचंद ने अपने समकालीन समाज की लगभग समस्त समस्याओं पर अपनी लेखनी चलाई है। प्रेमचंद की कई कहानियों में वृद्ध जीवन एवं उनकी वेदना का चित्रण मिलता है, जैसे मंत्र, ईदगाह, बूढ़ी काकी, अलग्योझा, बेटों वाली विधवा, विध्वंस, महातीर्थ आदि। यहाँ उनकी दो कहानियों की चर्चा आवश्यक प्रतीत होती है। प्रेमचंद की 'बूढ़ी काकी' कहानी एक ऐसी विधवा और निस्संतान ब्राह्मणी की कथा है, जिसने अपनी समस्त संपत्ति भतीजे के नाम कर दी और अपने पालन-पोषण के लिए अब उसी पर आश्रित है। 'बूढ़ी काकी में जिह्वा स्वाद के सिवा और कोई चेष्टा शेष न थी और न अपने कष्टों की ओर आकर्षित करने का रोने के अतिरिक्त कोई दूसरा सहारा ही।' संपत्ति लिखवाते समय भतीजे के किए हुए सारे वादे केवल सब्जबाग थे, वास्तविकता यह थी कि काकी भरपेट खाना भी न पाती थी। घर में दावत है, किंतु काकी को यह आज्ञा नहीं कि वह अपनी भूख को शांत करने के लिए दो पूड़ियाँ महमानों से पहले खा ले। बल्कि उन्हें मिलता है बहू का ताना—'ऐसे पेट में आग लगे, पेट है या भाड़?' कहानी अपने चरम पर तब पहुँचती है, जब बूढ़ी काकी को खाने के लिए कुछ नहीं दिया जाता और अपनी उद्वेलित होती क्षुधा शांत करने हेतु वह झूठी पत्तलों से पूड़ियों के टुकड़े खाने लगती है। प्रेमचंद की यह कहानी आदर्शवाद से प्रेरित है, जहाँ पात्रों का हृदय परिवर्तन हो जाता है, बूढ़ी काकी की यह दुर्दशा देखकर बहू का हृदय द्रवित हो उठता है और वह उनके लिए भोजन की थाली परोसकर लाती है काकी को खाते देख उसकी भी तृप्ति होती है।

किंतु प्रेमचंद की दूसरी कहानी 'बेटों वाली विधवा' की फूलमती संभवत: इतनी भाग्यशाली नहीं है। पति के जीवित रहते वह जिस घर

की मालकिन थी, जहाँ उसकी आज्ञा के बिना पत्ता भी नहीं हिलता था, बहू-बेटे आदर्श संतान के रूप में उसकी सेवा करते थे, वही पति की मृत्यु के बाद उनकी तेरहवीं से ही अपने ही घर में बेगानी बना दी गई, मानो अस्तित्वविहीन। तेरहवीं के भोज के लिए उससे कोई सलाह-मश्विरा नहीं लिया गया, न्योते में आई कोई वस्तु उसे न दिखाई गई। धीरे-धीरे फूलमती को अहसास होता गया कि वह अब फिजूल है, बड़ी बहू मालकिन की पदवी पर विराजमान हो चुकी है। पुत्र बेकहे हो गए हैं, यहाँ तक कि उसकी एकमात्र पुत्री के विवाह में पैसा बचाने के लिए पुत्र उसका विवाह बड़ी आयु के व्यक्ति से करवा देते हैं। फूलमती को मूर्ख बनाकर उसका सारा जेवर भी पुत्र हथिया लेते हैं। फिर भी फूलमती आत्मसमान का त्याग नहीं करती; वह प्रश्न उठाती है, विद्रोह करती है। बेटों द्वारा यह कहने पर कि कानून यही है कि बाप के मरने के बाद जायदाद बेटों को मिल जाती है, माँ का हक केवल रोटी-कपड़े का है। वह विफरकर कहती है, "मैंने घर बनवाया, मैंने संपत्ति जोड़ी, मैंने तुम्हें जन्म दिया, पाला और आज मैं इस घर में गैर हूँ। मनु का यही कानून है। वाह रे अंधेर! मैंने पेड़ लगाया और मैं ही उसकी छाँह में खड़ी नहीं हो सकती; अगर यही कानून है तो इसमें आग लग जाए।"

जमीन-जायदाद के लालच में वृद्धों पर जुल्म ढाना तो मानो अब आम बात हो गई है। अमृतलाल नागर ने अपनी कहानी 'मल्का टूरिया का बेटा' में एक ऐसे ही वृद्ध चौबे बनारसीदास की अपमान और प्रताड़ना भरी दास्तान को प्रस्तुत किया है, जहाँ उसका युवा पोता राधेबिहारी इस भय से कि बाबा अपनी जायदाद बेच न दे, उन पर अत्याचार करता है। वह बाबा को डरा-धमकाकर कागज पर हस्ताक्षर करवाने का प्रयास भी करता है। ऐसे में एक स्त्री मल्का टूरिया बाबा की शरणदाता बनकर सामने आती है।

जमीन-जायदाद के लालच में वृद्धों पर जुल्म ढाना तो मानो अब आम बात हो गई है। अमृतलाल नागर ने अपनी कहानी 'मल्का टूरिया का बेटा' में एक ऐसे ही वृद्ध चौबे बनारसीदास की अपमान और प्रताड़ना भरी दास्तान को प्रस्तुत किया है, जहाँ उसका युवा पोता राधेबिहारी इस भय से कि बाबा अपनी जायदाद बेच न दे, उन पर अत्याचार करता है। वह बाबा को डरा-धमकाकर कागज पर हस्ताक्षर करवाने का प्रयास भी करता है। ऐसे में एक स्त्री मल्का टूरिया बाबा की शरणदाता बनकर सामने आती है।

बढ़ती उम्र के साथ ही विभिन्न बीमारियाँ, शारीरिक दुर्बलताएँ, अशक्तता, विस्मृति और एकाकीपन स्वत: ही प्रकट हो जाते हैं। ये कमजोरियाँ वृद्धों के जीवन को अवसाद से भर देती हैं। कृष्णा सोबती की कहानी 'दादी अम्मा' का मूल ही है कि 'बुढ़ापे की बीमारी से कोई दूसरी बीमारी बड़ी नहीं होती।' वह दादी अम्मा, जिन्होंने कभी ढीलापन जाना ही नहीं, जिनकी कही बात कोई टाल नहीं सकता था, आज उनकी बातों पर बच्चे हँसते हैं। वह 'सचमुच उठते-बैठते बोलती है, झगड़ती है, झुकी कमर पर हाथ रखकर वह चारपाई से उठकर बाहर आती है तो जो सामने हो, उस पर बरसने लगती है।' दादी-अम्मा को शिकायत है कि उससे (बेटे से) इतना नहीं हो पाता कि बूढ़ी अम्मा की सुध ले। कोई पूछता नहीं, जानता नहीं। घर के सबसे बड़े और हवादार कमरे से दादी-अम्मा और उनके पति पीछे की घुटन भरी छोटी सी कोठरी में निष्कासित कर दिए जाते हैं। उनका कसाव और रोब अब ढीलेपन और निरीहता में परिवर्तित हो चुका था। इसी कोठरी में वह प्राण त्याग देती हैं।

वृद्ध अकसर अपने वर्तमान से भागते हैं, वह नास्टेलजिया में जीते हैं, जहाँ उनके अतीत का सुनहरा महल होता है। सारा रॉय की कहानी 'भूलभूलैया' की नायिका कूलसूम बानो ऐसा ही चरित्र है। वह ८० वर्षीय अविवाहित स्त्री है, जिनके लिए समय वहीं रुका हुआ है, उन्हें अपनी वही शानो-शौकत वाली नूर मंजिल दिखती है। लंबे-चौड़े सुंदर पिता की छवि दिखती है, वह कहती हैं, "इक्कीसवीं सदी मेरी बला से। मैं तो अपने ही वक्त में जीती हूँ।" यह एक बहुत बड़ा कारण है युवा पीढ़ी और वृद्ध पीढ़ी के बीच दूरी का। युवा पीढ़ी को पुरानी बातों में दिलचस्पी नहीं और वृद्धों को वर्तमान समय को कोसने और बुरा कहने से परहेज नहीं है।

माता-पिता संतान के लिए एक सायेदार वृक्ष के समान होते हैं, जो उन्हें जमाने की धूप-सर्द से बचाने को सदैव तत्पर रहते हैं, भले ही संतान उनको अपनी लज्जा का कारण समझें। इस दृष्टि से भीष्म साहनी की प्रसिद्ध कहानी 'चीफ की दावत' उल्लेखनीय है। जहाँ एक पुत्र अपनी माँ की कमजोर देह और देहाती परिवेश के कारण अपने बॉस और ऑफिस के साथियों से मिलवाने में हेठी अनुभव करता है, किंतु रोकने के लाख प्रयत्न के बाद भी माँ की भेंट चीफ से हो ही जाती है और वह चीफ को प्रभावित भी कर जाती हैं। वहीं पुत्र अब उन पर गर्व अनुभव करता है। पुत्र के द्वारा किए गए अपमान के बावजूद पुत्र की तरक्की के लिए माँ सबकुछ करने को तत्पर हो जाती है। यही है वृद्धों का बड़प्पन। संतान के लाख दोषों को माफ कर उनकी मंगलकामना ही करते रहना मानो उनका स्वभाव ही हो जाता है। इसीलिए कहा गया है कि माँ चंदन के समान है जीवित है तो छाँव है, मर जाए तो खुशबू है।

पुष्पिता अवस्थी की कहानी 'देहिया' एक दूसरा ही पक्ष प्रस्तुत करती है। यह विदेशी धरती पर रहने वाली ८५ वर्षीय बूढ़ी स्त्री के अकेलेपन की कथा है। पुत्र आनंद तथा बहू सावित्री उनकी देखभाल करना चाहते हैं, करते भी हैं। प्रतिदिन बहुत दूर से यात्रा करके आते हैं, माँ का खयाल रखते है, उनके लिए भोजनादि का प्रबंध करते हैं। बहू वृद्धा के स्नानादि में भी सहायता करती है, किंतु वह उन्हें अपने साथ रखने में असमर्थ हैं, कारण घर छोटा और बाथरूम ऊपरी मंजिल पर होने के कारण सुविधा बन ही नहीं पाती। यहाँ बेटा और बहू के प्रेम में कमी नहीं, सास माँ के हृदय में भी भावनाओं का विस्तार है, किंतु यहाँ आर्थिक स्थिति संबंधों में रुकावट बनती है।

वहीं कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी 'यह क्या जगह है दोस्तो' की वृद्धा नायिका का पुत्र उसके इलाज पर उसी का पैसा खर्च करना नहीं चाहता, वह कहता है कि "बैंक में दो लाख व पोस्ट ऑफिस में एक लाख हैं, अब क्या माँ ही पर दो लाख खर्च कर दें?" यह जीवन की विडंबना है। संतान की धन-लोलुपता और निर्दयता की पराकाष्ठा है।

ज्ञानरंजन की 'पिता' कहानी अलग ही कलेवर की कहानी है। इसमें नायक अपने पिता को आधुनिक सुख-सुविधाओं का लाभ पहुँचाना चाहता है। वह उनके लिए वह सबकुछ जुटा देना चाहता है, जो वह कभी अर्जित नहीं कर सके, किंतु पिता अपने जिद्दी स्वभाव और फकीरी मिजाज के कारण ए.सी., कूलर यहाँ तक पंखे को भी फिजूलखर्ची समझते हैं। यह दो पीढ़ियों का टकराव है, संतान अपने पिता के लिए कुछ करना चाहती है, परंतु पिता अपने उसूलों पर अडिग खड़े हैं। पुरानी और नई पीढ़ी के इस अंतर्द्वंद्व ने इन दोनों के मध्य भयंकर असंतुलन उत्पन्न किया है, जिसे दोनों ही नहीं समझना चाहते।

कहते हैं, उम्र क्या है, एक आँकड़ा भर च्यवनप्राश के एक विज्ञापन की टैग लाईन है 'साठ साल के बूढ़े या साठ साल के जवान।' सत्य है कि व्यक्ति अपनी मानसिकता से अधिक बूढ़ा होता है। शैल अग्रवाल की कहानी 'फ्री पास' की नायिका ने सच ही कहा है, "बच्चों की शादी हुई नहीं कि आदमी बूढ़ा हो गया और रिटायर होते ही मानो कब्र में पैर लटक गए।" इस कहानी की नायिका इस विचार को बदलने का प्रयास करती है। वह स्वयं तथा अपने पति आफताब को बुढ़ापे के अवसाद में घिरने से बचाती है। रिटायरमेंट के बाद के जीवन को वह अकेलेपन या अशक्तता का समय नहीं स्वीकार करती, अपितु जीवन को अपनी इच्छा से जीने का एक मौका मानती है। सरकार द्वारा दिए गए फ्री पास से वह लाभान्वित होना चाहती है। वह कहती है, "अपनी पारी खेल ली है हमने, अब चाहे पवेलियन के अंदर से देंखे या दर्शकों के साथ बाहर जाकर बैठ जाएँ। मरजी हमारी अपनी है। कोई रोक-टोक नहीं, कोई बंधन नहीं, जब तक जिंदगी मौका देती है, हर रंग बदलते दृश्य का पूरा आनंद लो। लेना सीखो, भरपूर जिओ। घूमो-फिरो मौज करो।" वह बुढ़ापे को एक नए दृष्टिकोण से देखती है। जिंदगी वास्तव में चलने का नाम है।

हिंदी कहानियों में वृद्धावस्था से जुड़े प्रत्येक पहलू को उठाने का प्रयास किया गया है। वृद्धों के एकाकीपन और उदासीनता के साथ-साथ उनकी जिंदादिली और दूसरों की खुशी में अपनी खुशी ढूँढ़ने की आकांक्षा को भी यहाँ स्थान मिला है। चित्रा मुद्गल की कहानी 'गेंद' के नायक सचदेवा जी ओल्ड ऐज होम में रहते हैं, जहाँ अपने इलाज के लिए वह पिछले कई माह से अपने पुत्र द्वारा भेजे जाने वाले रुपयों की प्रतीक्षा कर रहे हैं, जो कि सिर्फ आश्वासन ही दिए जा रहा है और साथ में बहुत सी हिदायतें भी, पर रुपए नादारद। वृद्धाश्रम के बाहर सैर पर निकलते हुए उन्हें एक बच्चे की आवाज आकर्षित करती है। यह बच्चा बिल्लू बाद में उनके विचारों का केंद्र बन गया, अब उनकी सारी कोशिशें बिल्लू के लिए क्रिकेट किट खरीदने में लग गईं। आश्रम की एक साथिन वृद्धा की अंत्येष्टि में न जाकर वह अट्टा बाजार जाने के लिए बस से उतर जाते हैं। पराए बच्चे से इतना मोह केवल इसीलिए कि उसमें उन्हें अपना पोता नजर आता है। यह मोह ही उनकी जिजीविषा शक्ति बन जाता है।

हंसा दीप की कहानी 'एक मर्द एक औरत' भिन्न कहानी है। सास-ससुर के साथ बहुओं के संबंध बहुत नाजुक होते हैं, अधिकतर यह संबंध कटु ही होते हैं। पर इस कहानी में ससुर और बहू के मध्य भावनात्मक बॉण्डिंग देखने को मिलती है। केशव बाबू ने अपनी पत्नी की मृत्यु के पश्चात् यश को बिना दूसरा विवाह किए पाला है। उन्हें देह की आवश्यकताओं का गुमान भी नहीं है। पुत्र यश के विवाह के बाद उन्होंने बहू सिया को अपनी पुत्री ही माना और सदैव उसके साथ वही संबंध रखा। गर्भावस्था में देखभाल से लेकर किचन के कामों तक वह उसके सहायक रहे। किंतु समाज की गंदी सोच और मानसिकता तथा बहू और ससुर के रिश्ते पर आपत्तिजनक टिप्पणियाँ उन्हें तोड़ देती हैं। वह प्रश्न उठाते हैं कि "दो रिश्तों की पवित्रता का निर्णय कोई तीसरा आदमी कैसे कर सकता है। क्यों यह समाज स्त्री और पुरुष के किसी भी संबंध को एक ही नाम देता है।" कहानी का अंत किंतु सुखांत है, केशव बाबू और सिया दोनों ही घर छोड़कर जाने का विचार त्याग देते हैं, यश भी अपनी सोच पर शर्मिंदा है और तीनों का मिलाप संबंधों की गरमाहट को और बढ़ा जाता है।

जैसे सिया ससुर की सेवा और उनसे प्रेम करने वाली बहू है, वैसे ही संतोष श्रीवास्तव की कहानी 'बाढ़' के सरदार जसवंत सिंह की बहू भी उनका बहुत ध्यान रखती है, परंतु उनका पुत्र काके यश की तरह संवेदनशील नहीं, बल्कि अपनी ही फिक्र करने वाला लालची व्यक्ति है। बूढ़े बाप को भूखा-प्यासा बाढ़ में मरने के लिए छोड़कर एकमात्र पुत्र काके जेवर समेट अपनी पत्नी के साथ चला जाता है। कथा का अंत सरदारजी के मित्र रहीम के रेस्क्यू टीम के साथ आने से होता है, जो कि यह समझते हैं कि काके बाढ़ में मारा गया और सरदारजी भी अपने पुत्र की इज्जत बनाए रखने की खातिर कुछ नहीं कहते। यह भी विडंबना ही कही जाएगी कि जो संतान बूढ़े माता-पिता को मरने के लिए छोड़ देती है, उनका कोई खयाल नहीं रखती, माता-पिता फिर भी उस संतान को ही याद करते हैं, अपनी संपत्ति भी उन्हीं को देना चाहते हैं। 'गेंद' कहानी की सावित्री बहन का कथन सर्वथा सोचने को विवश कर देने वाला है—"वृद्धाश्रम में रहकर भी बुजुर्ग अपनी बची-खुची संपत्ति अंत में अपनी उन्हीं नालायक औलादों के नाम लिख जाते हैं, जिन्होंने उन्हें तिरस्कृत कर घर से बाहर कर दिया।" संतान के प्रति बुजुर्गों का अतिरिक्त मोह और आसक्ति ही उनकी सबसे बड़ी कमजोरी बन जाती है। वह अपने बच्चों का जीवन सुधारने में स्वयं को ही भूल जाते हैं।

अंजना वर्मा की कहानी 'सिमरन आंटी' की नायिका सिमरन का कथन दृष्टव्य है—"कभी-कभी सोचती थी कि बच्चों के लिए इतना सोचा कि बच्चे आगे जाएँ, पर यह न सोच पाई कि जब बच्चे आगे चले जाएँगे तो उनके माता-पिता तो पीछे ही छूट जाएँगे न?" ऐसी ही पीछे छूटी हुई माँ की व्यथा-कथा है उर्मिला शिरीष की कहानी 'वानप्रस्थ'।

पढ़-लिखकर बड़ा अफसर बन चुका अशोक अपनी बूढ़ी माँ को साथ नहीं रख पाता, किंतु जब उनकी स्थिति ज्यादा ही खराब हो जाती है तो वह उन्हें शहर लाने का निश्चय करता है। अशोक की पत्नी शिल्पा को "अपने व्यवस्थित घर में अम्मा का रहना बड़ा अव्यवस्थित लग रहा था।" अम्मा इतनी अशक्त थी कि वह उठने तक में असमर्थ थी। एक पैर में एक्जिमा था, जिससे शिल्पा को बहुत घिन आती थी। यह उनके बेटे का घर था, किंतु वहाँ उन्हें कोई स्वतंत्रता नहीं थी। ठंड से बचने के लिए उनके पास कोई गरम कपड़ा तक नहीं था, वहीं शिल्पा की कुतिया डिंगी के पास कई स्वेटर थे। खाने के लिए उन्हें मसालेदार भोजन दिया गया, जो उनसे नहीं खाया जा सकता था। दूध उनकी अपेक्षा कुतिया को दिया जाना ज्यादा आवश्यक था। सास भानुमती का अंतर्द्वंद्व यहाँ विशेष उल्लेखनीय है—"यह अपमान, यह दुत्कार मैं सहन नहीं कर सकती, जिस शान से निरवलंब होकर जीती आई हो, उसी शान से अंतिम क्षणों तक जीने का धैर्य रखो, इसलिए जिस जगह मेरी इज्जत नहीं, वहाँ मैं क्यों रहूँ।" सास के साथ बेगाना रवैया रखने वाली शिल्पा अपनी भाभियों द्वारा उसकी माँ के साथ किए जा रहे ऐसे ही व्यवहार से बहुत दु:खी है। कथा का अंत भानुमती के इस निश्चय के साथ होता है कि वह वापस लौट जाएगी और इस बार अकेली नहीं, समधिन को साथ लेकर। वही स्त्री जब बहू है तो अपनी सास के साथ उसका व्यवहार नितांत उपेक्षापूर्ण है, पर जब बेटी है तो माँ के दु:ख पर उसके आँसू छलछला उठते हैं। यह दोहरापन ही वृद्धों के अनेक दु:खों का कारण बन जाता है।

प्राथमिक विद्यालय से सेवानिवृत्त सुशीला अपने पुत्रों की उपेक्षा का शिकार हैं, उनके बच्चों के पास माँ के इलाज और जरूरी ऑपरेशन कराने का भी समय नहीं है। दूसरी ओर डॉक्टर मेहरा भी विदेश में रह रहे बच्चों के बिना एकाकी जीवन बिता रहे हैं। अपने इस अकेलेपन से वह डरती है कि कहीं ऐसा न हो, वह घर में मरी पड़ी रहे और किसी को खबर ही न हो। यह डर उसे खाए जाता है, अंत में वह और डॉक्टर साहब दो अधूरे और एकांगी जीवन बच्चों के विरोध के बावजूद एक साथ मिलकर एक-दूसरे का सहारा बन जाते हैं। समाज के लिए यह नई मिसाल है। विवाह सिर्फ शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ही नहीं, अपितु आपसी सहारे और संबल के लिए भी होता है। यह विवाह दोनों के ही जीवन की संध्या को सुनहरा बना देता है।

वही संतान, जो जीते जी माता-पिता को एक बूँद पानी के लिए तरसाती है, उनकी मृत्युपरांत लोक-लाज और अपनी वाहवाही के लिए तेरहवीं पर बड़े स्तर पर ब्रह्मभोज का आयोजन करती है। सुधा थपलियाल की कहानी 'ब्रह्मभोज' इसी विडंबना को उजागर करती है। सुभद्रा मौसी के पुत्रों ने उनका घर बेचकर उन्हें बेघर कर दिया। उनके जीवन की शांति भंग कर दी। 'आत्मा की शांति के विषय में सोचने वाले पुत्रों ने कभी उनके शारीरिक और मानसिक शांति के विषय में क्यों नहीं सोचा।' यह प्रश्न वास्तव में झकझोर देने वाला है।

शांति की तलाश में भटकते दो उपेक्षित बूढ़े साथ मिलकर अपने जीवन को नया आयाम दे सकते हैं। जीवन की संध्या में अपने लिए एक सहारा और खुशियाँ ढूँढ़ सकते हैं। जीवन की तपती साँझ उनके लिए सुनहरी भी हो सकती है। लवलेश दत्त की कहानी 'सुनहरी साँझ' इसी विषय पर आधारित है। प्राथमिक विद्यालय से सेवानिवृत्त सुशीला अपने पुत्रों की उपेक्षा का शिकार हैं, उनके बच्चों के पास माँ के इलाज और जरूरी ऑपरेशन कराने का भी समय नहीं है। दूसरी ओर डॉक्टर मेहरा भी विदेश में रह रहे बच्चों के बिना एकाकी जीवन बिता रहे हैं। अपने इस अकेलेपन से वह डरती है कि कहीं ऐसा न हो, वह घर में मरी पड़ी रहे और किसी को खबर ही न हो। यह डर उसे खाए जाता है, अंत में वह और डॉक्टर साहब दो अधूरे और एकांगी जीवन बच्चों के विरोध के बावजूद एक साथ मिलकर एक-दूसरे का सहारा बन जाते हैं। समाज के लिए यह नई मिसाल है। विवाह सिर्फ शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ही नहीं, अपितु आपसी सहारे और संबल के लिए भी होता है। यह विवाह दोनों के ही जीवन की संध्या को सुनहरा बना देता है।

वर्तमान समय में समाज में ओल्ड ऐज होम, अर्थात् वृद्धाश्रम का चलन तेजी से बढ़ रहा है। वृद्धाश्रम विदेशी संस्कृति है। भारत में माता-पिता को भगवान् तुल्य मानने की परंपरा रही है, किंतु 'हैप्पी बर्थ डे गोल्डन होम' कहानी में अर्चना पैन्यूली ने सत्य ही कहा है कि "आज विदेश की क्या चीज हमारे देश में नहीं मिलती।" यह वृद्धाश्रम जहाँ एक ओर निराश्रित और एकाकी जीवन जीते वृद्धों का सहारा बनकर उभरे हैं, वहीं उनकी संतानों को उनके प्रति बिल्कुल ही लापरवाह और विमुख भी कर रहे हैं। माता-पिता की जो थोड़ी-बहुत देखभाल का दायित्व संतान अनुभव भी करती थी, वह अब उन्हें वृद्धाश्रम में भरती कराके सर्वथा मुक्त हो गए हैं। बस कुछ पैसे भेजकर वह अपने कर्तव्य की इतिश्री कर लेते हैं और अगर 'गेंद' कहानी की आश्रम संचालिका सावित्री की मानें तो दो-चार महीने नियमित पैसे भेजने के बाद संतान पलटकर भी नहीं देखती, यहाँ तक मृत्यु पर दाह संस्कार के लिए भी नहीं आते। 'हैप्पी बर्थ डे गोल्डन होम' में बताया गया तथ्य कि भरती के लिए रजिस्ट्रेशन पहले से करवाना होता है, दाखिले के लिए लंबी वेटिंग लिस्ट है, बहुत कुछ सोचने पर विवश कर देता है। कर्नल गावकर के दोनों बेटे उन्हें वृद्धाश्रम में छोड़कर विदेश में हैं। शहर में ही रहने वाली बेटी अपने परिवार से मजबूर है और वह तो स्वयं ही वृद्धाश्रम में रजिस्ट्रेशन करवाने वाली है। यह समाज किस ओर बढ़ रहा है। क्या यही प्रगति है ?

माता-पिता चार संतानों को पाल-पोसकर बड़ा कर सकते हैं, उन्हें बेहतरीन सुविधाएँ प्रदान कर सकते हैं, उनके सुनहरे भविष्य के लिए अपना सर्वस्व लुटा सकते हैं, वहीं चार संतानें मिलकर भी उन्हें छत

तक नहीं दे पातीं। वृद्धाश्रम भेजने के कारण अलग-अलग हो सकते हैं, कहीं समय की तंगी तो कहीं भावनात्मक लगाव की। मेरी अपनी कहानी 'ओल्ड ऐज होम/हॉस्टल' में मैंने इसी भावनात्मक लगाव के अभाव को चित्रित किया है। माता-पिता कई बार अपनी स्वतंत्र जीवन-शैली को बनाए रखने के लिए बच्चों को हॉस्टल भेज देते हैं। बच्चा सदैव उनसे दूर रहा, सिर्फ पैसे भेज दिए जाते रहे, वह उन्हीं में अपनी खुशियाँ तलाशता रहा, उसे माता-पिता का सान्निध्य मिला ही नहीं, वह लगाव, वह अपनापन, वह आत्मीयता उसने जानी ही नहीं तो फिर उससे यह आशा कैसे की जा सकती है कि बुढ़ापे में वह उनकी सेवा करेगा। वह भी उन्हें वृद्धाश्रम भेजकर, कुछ पैसे देकर और फोन पर ही हालचाल जानकर अपने कर्तव्य की पूर्ति कर लेगा।

पेंच बहुत हैं, व्यथा गहरी है, आवश्यकता है कि वृद्धजन स्वयं अपने को निशक्त न समझे, अपने को आश्रित न समझें और सबसे बढ़कर अपने को आर्थिक रूप से असहाय तो बिल्कुल न बनाएँ। अपने अधिकारों के लिए आवाज उठाएँ, हो सके तो अदालत का दरवाजा खटखटाने से भी गुरेज न करें। कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी 'बदमिजाज' की हेमवती बेटा-बहू से परिवार में अपनी हैसियत पूछती हैं, वह बेटे का थप्पड़ खाने के बाद अपना अधिकार सुरक्षित रखने को लेकर सचेत हो जाती हैं, बेटे को अपनी जायदाद से बेदखल करने के लिए नोटिस भिजवाती हैं और कहती हैं, "जब संतान अपना धर्म छोड़ दे तो उसके साथ ऐसा ही व्यवहार होना चाहिए। अब तुम्हें मेरी-सी बदमिजाज बूढ़ी के साथ रहने की कोई आवश्यकता नहीं, तुम स्वयं कमाओ और स्वतंत्र जिओ।" इसी प्रकार कृष्णाजी ही की अन्य कहानी 'मैं जिंदा हूँ' कि नायिका रागिनी भी पुत्र के अत्याचार को सहन कर रही है। पुत्र उनकी पेंशन भी छीन लेता है, बहू उन्हें पागल करार देती है, बच्चे उनका मजाक बनाते हैं। रागिनी की पुत्री उसकी निरीह स्थिति के लिए उसे ही कसूरवार ठहराती है, उसकी फटकार से रागिनी का आत्मसम्मान जाग उठता है और वह अपने बेटे से कहती है, "मुझे मेरी पूरी पेंशन लाकर दो, मैं युवाओं जैसे फिजूल की महत्त्वाकांक्षाएँ तो नहीं पाले हूँ, पर वृद्ध होना तो जीवन की प्रक्रिया है। मुझे मेरा अधिकार दो, वरना मैं चैक पर साइन नहीं करूँगी।" वह अपना ए.सी. लगा और अटैच्ड बाथरूम वाला कमरा भी वापस माँगती है, साथ ही यह धमकी भी देती है कि यदि ऐसा नहीं किया तो वह बैंक अपना 'मैं जिंदा हूँ' का फार्म भरने भी नहीं जाएँगी, क्योंकि पुत्र ने उन्हें जीवित रखने का धर्म नहीं निभाया है।

यशपाल की कहानी 'दु:ख का अधिकार' नितांत भिन्न कहानी है। यह एक बूढ़ी बेसहारा औरत की जिम्मेदारियों की व्यथा-कथा है। २३ वर्षीय जवान पुत्र की अकाल मृत्यु के तीन दिन पश्चात् ही पोते-पोती को भूख से तड़पते देख वह बाजार में खरबूजे बेचने आ बैठती है। समाज की आलोचना के बावजूद वह कार्य करने को विवश है। उसे अपने पुत्र का शोक मनाने का भी अवकाश नहीं है। यह कहानी प्रमाणित करती है कि वृद्ध सिर्फ कमजोर और निरीह ही नहीं होते, वक्त आने पर वह अपने दु:ख पर काबू पाकर परिवार का पालन-पोषण करने का दायित्त्व भी उठा सकते हैं।

हिंदी कहानी में वृद्ध जीवन के अनेक आयामों पर चर्चा की है। उनके हृदय को टटोला है, उनके विचारों को मथा है, उनके अंतर्द्वंद्व को वाणी दी है। संभवत: वृद्ध जीवन का कोई ही ऐसा पहलू होगा, जो हिंदी कहानीकारों से छूट गया हो। उनकी पीड़ा, उनकी व्यथा, उनका एकाकीपन, उनकी अपेक्षाएँ, उनकी उपेक्षा, उनकी आवश्यकताएँ, उनकी शक्ति, उनकी जिजीविषा, उनके जीवन के रस, आनंद तथा संताप और अवसाद—सभी को मुखर रूप से हिंदी कहानी में चित्रित किया गया है। मुट्ठी से रेत के सदृश फिसलते उनके स्वामित्व के क्षरण से हताश और अवसादग्रस्त बूढ़ों को उसने अपना नायक बनाया है तो समय के साथ चलने की और टेक्नोलॉजी फ्रेंडली होने की कवायद को भी हिंदी कहानी में स्थान मिला है, जिसका उदाहरण दिव्या माथुर की कहानी 'ग्रैंड माँ' की वृद्ध नायिका है।

वृद्ध अनुभव और ज्ञान का भंडार हैं। उनके चेहरे की झुर्रियों में अनगिनत कहानियाँ छिपी हुई हैं। उन्होंने जीवन के उतार-चढ़ाव देखे हैं। जमाने की सर्द-गरम को सहा है। उनके जीवन की इस अवसान वेला में उन्हें निरोपयोगी और अशक्त जान दुत्कारा जाना उनके आत्मसम्मान को ठेस पहुँचाने वाला है। वृद्ध हताश और चिड़चिड़े होते जा रहे हैं। अपनी विवशता पर वे बड़बड़ाने के अतिरिक्त कुछ नहीं कर पाते हैं। उनके सारे ठाट और अधिकार ध्वस्त होते जाते हैं और वे उनके दर्शक मात्र बने रह जाते हैं। वृद्धों के जीवन के इस संताप को हिंदी कहानी में बखूबी उभारा गया है। एक विशेष बात, जो अधिकतर हिंदी कहानियों में दिखाई देती है, वह है बेटियों का माँ-बाप के प्रति अतिरिक्त लगाव। कई कहानियों में बेटियाँ ही उनका सहारा बनती दिखाई गई हैं। सरोजनी नौटियाल की कहानी 'बेटियाँ थीं उनकी' इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। माता-पिता के प्रति बेटियों के हृदय में जो प्रेम और दायित्व की भाव होता है, उसे भी हिंदी कहानी में उभारा गया है। वस्तुत: हिंदी कहानियाँ वृद्ध जनों की समस्त समस्याओं को समझने और कई बार उनका निराकरण करने में भी सक्षम हैं। शोधपत्र का निष्कर्ष है कि वृद्धों को अपने जीवन में सुधार के लिए स्वयं प्रयास करना होगा। युवा पीढ़ी के दृष्टिकोण को समझना होगा, टेक्नो फ्रेंडली होना होगा, आर्थिक और शारीरिक निर्भरता को घटाना होगा, अपने बुढ़ापे के लिए सुनियोजित रूपरेखा बनानी होगी, संतान को भी अपने माता-पिता के प्रति अपने उत्तरदायित्वों का निर्वहन करना होगा, इस संबंध में सरकार और कानून भी सख्त निर्णय ले सकते हैं। कई मामलों में कोर्ट ने ऐसे निर्णय दिए हैं, जिसमें संतान को अपने वृद्ध माता-पिता के पालन-पोषण करने को बाध्य किया गया है। वृद्ध जन समाज की संपदा हैं। उनका आदर-सम्मान बनाए रखना आवश्यक है।

सा अ

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़
दूरभाष : ७५०३३८५९२४

काली टोपी

मूल : **पोनकुन्नम वर्की**

अनुवाद : **संतोष अलेक्स**

केरल के चर्चित कहानीकार व नाटककार। श्री पोनकुन्नम वर्की ने अपने साहित्यिक जीवन की शुरुआत कविता से की। उनका पहला कविता-संग्रह 'तिरुमुलकाषचा' काफी चर्चित रहा। इसके बाद उन्होंने कहानियाँ और नाटक लिखना शुरू किया। उनके २४ कहानी-संग्रह, १६ नाटक, २ कविता-संग्रह एवं १ निबंध-संग्रह प्रकाशित हुए। उनकी कहानी 'शबदीकुन्न कलप्प' मलयालम कहानी साहित्य में सबसे चर्चित कहानियों में से एक मानी जाती है। १९७३ में उन्हें केरल साहित्य अकादमी का अध्यक्ष चुना गया। उन्हें कई पुरस्कारों से सम्मानित किया गया, जिनमें प्रमुख हैं—वल्लत्तोल पुरस्कार, एषुतच्छन पुरस्कार, ललितांबा साहित्य पुरस्कार एवं मुटत्तु वर्की पुरस्कार। यहाँ उनकी एक चर्चित कहानी 'काली टोपी' का हिंदी रूपांतर दे रहे हैं।

आम लोग उस केस की ओर आकर्षित हुए थे। फैसला सुनने के लिए अदालत में लोगों की भीड़ थी। जज ने फैसला सुनाया, "यह मृत्युदंड है।"

भीड़ आश्चर्यचकित थी।

कुट्टन अदालत में जज के सामने खड़ा हो गया। उसके हृदय की धडकनें तेज हो गईं। कुछ क्षण तक उसके कान में कुछ गूँजता रहा।

पुलिस उसे जेल ले गई। रास्ते में वह व्यथित भाव से परिचित चेहरों को देखता रहा। वह जानता था कि यह आखिरी मौका है और इसके बाद वह उन्हें नहीं देख पाएगा। उसने सड़क पर खड़े परिचित लोगों को उसी तरह देखा, जैसे कोई मरणासन्न व्यक्ति आसपास खड़े लोगों को देखता है।

यह वह समय था, जब लोग कानून का उल्लंघन करते थे। भाषण सुनने के लिए मैदान में हजारों की संख्या में लोग जमा थे। एक हेड कांस्टेबल भीड़ को तितर-बितर करने के लिए वहाँ आया था और फँस गया। बदला लेने की क्या जरूरत है? लोगों ने सिपाही पर चारों तरफ से हमला बोल दिया। उनमें से कई ने उसे मारा। निर्दोष सिपाही की मौत हो गई। भीड़ में से एक व्यक्ति पकड़ा गया, जिसका नाम कुट्टन था। उन्होंने पुलिसकर्मी से कोई बदला नहीं लिया, लेकिन गवाह और सबूत तैयार किए गए। कुट्टन फाँसी दिए जाने की प्रतीक्षा कर रहा था।

एक दिन कुट्टन कोठरी में बैठा था। जेल के कर्मचारी आकर बोर्ड ठीक करके चले गए। बोर्ड पर फाँसी देने का दिन और समय का विवरण अंकित किया गया था। कुट्टन के पास केवल चार दिन बचे थे। चार दिन और चार रातें।

जेल अधिकारियों ने कुट्टन को सूचना दी। वह मौत के झूले पर है और उसे यह राहत मिली—

"मौत के बदले तुम्हें बीस साल जेल में बिताने होंगे।" जेलर ने कहा।

कुट्टन के विरोध का कोई फायदा नहीं हुआ। वह रंगीन दुनिया में वापस आ जाएगा, यह सोचकर उसने खुद को शांत किया।

सेंट्रल जेल खतरनाक अपराधियों की जगह थी। वहाँ बहुत सारी इमारतें थीं और विभिन्न कार्य सीखने की सुविधाएँ थीं। लेकिन हर अपराधी को चार चाबियों, ऊँची दीवारों, अलग-अलग कोठरियों, चौकीदार, लुँगी, हथकड़ी, टोपी और कोड़ों का सामना करना पड़ता था।

एक बार जेल अधिकारियों को कुट्टन के पास से एक उपन्यास मिला। उसकी किताब खो गई और चार दिन का राशन भी खो गया। अगली बार उन्हें उसके पास से बीड़ी के दो टुकड़े मिले और उसे दंडित किया गया।

एक दिन एक हेड वार्डन और दो अन्य वार्डन कुट्टन के पास गए और उसे एक काली टोपी दी और कहा, "इसे अपने सिर पर पहनो।"

"नहीं, मैं अपनी लाल टोपी के साथ ठीक हूँ।" कुट्टन ने नफरत भरी नजरों से काली टोपी की ओर देखते हुए कहा।

"आप नियम भूल रहे हैं!" वार्डन को गुस्सा आ गया। उन्होंने कहा, "आपको काली टोपी पहननी होगी, यह हमारी इच्छा है। आप कहते हैं कि आप चोर नहीं हैं। हम यह सुनिश्चित करेंगे कि आप काली टोपी पहनें।" ऐसा कहकर हेड वार्डन चला गया।

मैं चोर नहीं हूँ, कुट्टन के लिए इसे स्थापित करना आसान नहीं था। उन्होंने एक वकील के कार्यालय में काम किया था। वकील की बेटी सावित्री उससे प्रेम करने लगी। वह बलि का बकरा बन गया और वकील ने उसे नौकरी से निकाल दिया। उनके पास यात्रा करने के लिए पैसे नहीं थे, इसलिए सावित्री ने उन्हें एक हार उपहार में दिया। पुलिस ने कुट्टन को चोरी के अपराध में पकड़ लिया और उसे सात महीने तक जेल में रहना पड़ा।

सेंट्रल जेल में उन अपराधियों को काली टोपी पहननी पड़ती थी, जो

सजा से मुक्त हो गए थे, लेकिन किसी अन्य अपराध के लिए जेल में थे।

उस रात उनके दाँत में बहुत दर्द हुआ। मुसीबत के बीस लंबे साल! यह सोचकर उसे परेशानी हो रही थी। वह सोच रहा था कि वह इकतीस साल का है। उन्हें बीस वर्ष का कठोर कारावास पूरा करना पड़ा। यदि बीच में उनकी मृत्यु नहीं हुई तो उन्हें इक्यावन वर्ष की आयु में जेल से रिहा कर दिया जाएगा। वह चाँदनी में मुर्गे की तरह बाहर आएगा। मेरा देश कहाँ है? भूरे बालों वाला बूढ़ा आदमी, उसे जेल से एक पाई भी नहीं मिलेगी और अब उन्हें काली टोपी पहनने पर मजबूर होना पड़ रहा है। अगर मैं मर भी जाऊँ तो भी मैं यह टोपी नहीं पहनूँगा। दाँत का दर्द मुझे परेशान कर रहा है, यह कैसी यातना है? इससे तो अच्छा था कि फाँसी हो जाए। इस यातना से तो मर जाना ही अच्छा है।

किसी तरह कुट्टन उस रात सोने में कामयाब रहा। दाँत के दर्द के कारण उसके गाल फूल गए थे और वह बात नहीं कर पा रहा था। सुबह वह दलिया नहीं खा सका। वह हर दिन बुक बाइंडिंग स्टोर पर जाता था, क्योंकि वह वहाँ काम करता था। लेकिन आज उन्होंने वहाँ न जाने का फैसला किया। वार्डन ने आकर सभी कैदियों को काम पर बुलाया।

"मैं आज कुछ नहीं कर सकता, लगता है मेरा दाहिना गाल फटने वाला है और मुझे बुखार भी आ रहा है।" उसने अपना दाहिना गाल पकड़कर व्यथित स्वर में कहा।

मुख्य वार्डन आया। वह कुट्टन को अधीक्षक के पास ले गया, जो दूसरी मंजिल पर था। वे एक सुंदर मेज के सामने बैठ हुए थे।

जब पंखे की हवा उसके गालों पर लगी तो उसे थोड़ी राहत महसूस हुई। अधीक्षक किसी फाइल के पन्ने पलट रहा था। उसने मुख्य वार्डन से पूछा—

"क्या यह कुट्टन है?"

"जी श्रीमान।"

"आपके साथ क्या गलत हुआ है? आप काली टोपी क्यों नहीं पहनते?" उसने पूछा।

कुट्टन चुप रहा। वह बहुत कुछ कहना चाहता था।

"क्या तुम काली टोपी नहीं पहनोगे?" अधीक्षक ने फिर पूछा।

कुट्टन फिर चुप रहा। अधीक्षक नाराज हो गए।

उन्होंने कहा, "बेवकूफ, मैं तुमसे पूछ रहा हूँ! क्या तुम गूँगे हो?"

"काली टोपी ले लो।"

उन्होंने वार्डन को निर्देश दिए। उसने काली टोपी ली और कुट्टन को दे दी। कुट्टन की ओर गुस्से से देखते हुए सुपरिंटेंडेंट ने कहा, "टोपी लेकर अपने सिर पर पहन लो।"

कुट्टन फिर भी चुप रहा, अधीक्षक कहता रहा, "इसे अपने सिर पर पहन लो। चोर, बदमाश। लो और पहन लो।"

जो अपराधी अधीक्षक के आदेशों का पालन नहीं करते, वे दुर्भाग्यशाली हैं।

"लो और उसे बेंत मारो।" उसने क्रोध से दाँत पीसते हुए आदेश दिया—"उसे बारह कोड़े मारो।"

लेखक, अनुवादक। अंग्रेजी, हिंदी, मलयालम और विदेशी भाषाओं में ६६ पुस्तकें; हिंदी और मलयालम में तीन कविता-संग्रह प्रकाशित और एक का अंग्रेजी अनुवाद। कविताओं के अनुवाद वैश्विक स्तर पर ३२ भाषाओं में हुए हैं। पंडित नारायण देव पुरस्कार, द्विवागीश पुरस्कार, वैली ऑफ वड्र्स अनुवाद पुरस्कार, साहित्य रत्न पुरस्कार अंतरराष्ट्रीय विट्रुवियो कविता पुरस्कार सहित कई सम्मानों से सम्मानित। संप्रति कोचिन में संयुक्त निदेशक (राजभाषा) के कैडर में कार्यरत।

आदेशानुसार वार्डन उसे ले गया।

"यह निश्चित है कि मैं चोर नहीं हूँ।"

अगर हूँ भी तो अब मैं कातिल हूँ। यह काली टोपी पहनने से बेहतर है मर जाना। उसने बार-बार ये शब्द दोहराए। जेल के साथी उसका मजाक उड़ाते थे। उनमें से एक ने कुट्टन से पूछा, "तुम जिद्दी क्यों हो? एक बार जब तुम जेल में हो तो तुम्हें उनके आदेशों का पालन करना होगा। क्या तुम एक मूर्ख हो?"

"मैं काली टोपी नहीं पहनना चाहता। लाल टोपी हत्यारों के लिए है। भाड़ में जाए इन दुष्टों का राज।"

कुछ अन्य अपराधियों की राय अलग थी। इस तरह काली टोपी चर्चा का विषय बन गई। वहाँ काली टोपी वाले कई अपराधी थे, लेकिन उनमें से किसी को भी काली टोपी पहनना पसंद नहीं आया। जब वे अपना काम करते हैं तो उसे छिपाते हैं। उनमें से कई लोगों के लिए चोरी उनके जीवन की पहली गलती थी। काली टोपी के कारण उन्हें हमेशा के लिए चोर कहा जाने लगा। जो चोरी करता है, वह किसी दूसरे की धोखाधड़ी में फँस जाता है और चोर कहलाना पसंद नहीं करता।

काली टोपी वाले की कोई इज्जत नहीं, उसके दोस्त भी नहीं हैं।

कुट्टन को फिर से अधीक्षक के पास भेज दिया गया। अधीक्षक ने वार्डन के हाथों में काली टोपी की ओर इशारा करते हुए कहा, "चलो, अब बिना किसी नखरे के जल्दी से टोपी पहनो। चलो, जल्दी करो।"

"सर, उसने करुणा भरी आवाज में विनती की। मैं लाल टोपी पहनूँगा, काली टोपी नहीं।"

"क्या? क्या तुम काली टोपी नहीं पहनोगे?"

"मुझे यहाँ हत्या के आरोप में लाया गया है…"

"बदमाश! इसे ले जाकर बाँध दो और कड़ी सजा दो। तीन दिन तक उसे केवल चावल और नमक ही देना। मैं भी देखता हूँ यह कैसे टोपी नहीं पहनाता है।"

उन्हें प्रतिदिन चार घंटे तक अपने पैर के अँगूठे के बल पर अपना हाथ आसमान की ओर उठाकर खड़ा रहना पड़ता था। ऐसा लग रहा था। मानो कोई धरती पर पैर के अँगूठे की एकमात्र अंगुलियों के साथ आकाश में उड़ने वाला हो। काली टोपी वालों ने कुट्टन का मजाक उड़ाया। वह उनमें से कुछ को देखना नहीं चाहता था। एक दिन तीन-चार वार्डनों ने

मिलकर उसे हथकड़ी लगा दी और उसके सिर पर काली टोपी रख दी। यदि एक घंटे तक यह टोपी उसके सिर पर न रखी जाए तो यह अधीक्षक का अपमान होगा। कुट्टन अपने हाथ-पैर नहीं हिला पा रहा था। उसे अपमान महसूस हुआ, जब उसके हाथ-पैर आजाद हो गए तो उसने काली टोपी उतारकर फेंक दी।

एक दिन वह कोठरी की सफाई कर रहा था और उसे फर्श पर एक अँगूठी मिली। चमचमाती सोने की अँगूठी। कई बार उसका मन हुआ कि अँगूठी को दीवार के बाहर फेंक दे, क्योंकि वह अँगूठी शैतान जैसे लोगों की थी, जो उसे हर समय परेशान कर रहे थे। लेकिन फिर उसने ऐसा नहीं किया।

अगले दिन एक वार्डन दौड़ता हुआ कुट्टन की कोठरी में आया। उसका चेहरा देखकर कुट्टन को उसके आने का उद्देश्य समझ में आ गया।

"क्या तुमने मेरी अँगूठी देखी?" वार्डन ने पूछा।

वह उसका अधिक आदर करने लगा।

अगले दिन जब सुपरिंटेंडेंट परेड के लिए आया तो कुट्टन के सिर पर टोपी नहीं थी। वह क्रोधित हो गया। उस दिन दो-तीन वार्डन ने मिलकर उसकी पिटाई कर दी।

बिना टोपी पहने उसका जीवन समस्याग्रस्त हो गया। वह इसे पहनना नहीं चाहता था। दोनों गुट चिंतित थे।

काली टोपी पहने लोगों के कक्ष में एक बिल्ली आती थी, जिसके सिर पर काला धब्बा था। कभी-कभी वह कुट्टन के पास आ जाती थी। उसे बिल्ली पसंद नहीं थी। सिर पर इसका काला धब्बा काली टोपी जैसा दिखता था। एक दिन कुट्टन बड़े सोच में पड़ गया। बिल्ली अपनी पूँछ लहराती हुई आई और अपना शरीर धनुष जैसा बनाकर कुट्टन के पास पहुँची और उसके पैरों को चाट लिया। कुट्टन ने क्रोध में तमतमाकर उसे लात मार दी। वह दीवार से टकराई और धड़ाम से नीचे गिर गई। उसके बाद काली बिल्ली कभी कुट्टन के पास नहीं गई।

कुट्टन को ठीक से भोजन नहीं मिला, करी नहीं मिली। उसे तेल नहीं मिला। उसे पीने के लिए बीड़ी भी नहीं मिलती थी। उसे काली टोपी की जरूरत महसूस नहीं हुई।

कुट्टन वर्कशॉप में काम कर रहा था। वार्डन का एक समूह उसके पास आया। अधीक्षक निरीक्षण के लिए आ रहे थे। वर्कशाप में काम कर रहे लोगों ने यह ठान लिया कि अधीक्षक कुट्टन को काली टोपी के बिना नहीं देखना चाहिए। इसलिए उन लोगों ने उसे पकड़ लिया और जबरदस्ती टोपी उसके सिर पर रख दी और यह निर्णय लिया कि अधीक्षक के जाने के बाद उसे टोपी उतार लेने दीजिए, हम नाराज नहीं होंगे। कोई परेशानी की बात नहीं।

कुट्टन के सिर पर काली टोपी थी। उसके दोस्तों ने मुँह फेर लिया और खिलखिला पड़े। सिर पर टोपी रखने के बाद उसे ऐसा महसूस हुआ, मानो उसके सिर पर कोई भारी चीज रख दी गई हो।

अधीक्षक जेल में अपने कुछ रिश्तेदारों के साथ घूम रहे थे। वे जेल देखने के लिए इतने उत्साहित थे कि आगे बढ़ गए और अधीक्षक अकेले रह गए। कुट्टन ने चारों ओर देखा। सुपरिंटेंडेंट उसकी ओर आ रहा था। उसे खुशी महसूस हुई। वह सम्मान के साथ खड़ा था और साथ ही काली टोपी के साथ खुद को असहाय महसूस कर रहा था। अधीक्षक ने उसकी ओर देखा और उसके पास आ गया। कुट्टन ने सुपरिंटेंडेंट का पीछा करते हुए उसकी छाती पकड़ ली, जहाँ सभी पदक बड़े करीने से रखे हुए थे और उसे दो से तीन मिनट तक रोके रखा। काली टोपी वाला व्यक्ति कृतज्ञता से भर गया।

अधीक्षक का निश्चल शरीर पड़ा था, उसने उसकी छाती पर काली टोपी फेंक दी। फोन की घंटी बजी। उसे पुलिस ने घेर लिया था। वह डरा-सहमा खड़ा रहा। कुट्टन ने हाथ फैलाकर कहा, "मुझे आप लोगों से कोई शिकायत नहीं है। अगर आप चाहें तो मुझे गिरफ्तार कर सकते हैं।"

कुट्टन एक अच्छा इनसान बनना चाहता था। लेकिन वह फिर से हत्यारा बन गया। उसने सोचा कि अब वह इकतीस साल का है, पहली हत्या के लिए बीस साल की सजा हुई, फिर वह इक्यावन साल का होगा और इस हत्या के लिए और बीस साल की सजा हुई, इस तरह यह इकहत्तर साल हो गया। उन्हें ७० साल की उम्र तक जेल में रहना होगा। अब यह मेरी मिट्टी है, इस कीचड़ में ही मैं···

एक दिन कुट्टन ने जिद पकड़ ली और वार्डन से कहा, "मुझे सेल में जाने का मन नहीं है।" वह कोठरी के सामने चुपचाप बैठा रहा। इसकी जानकारी जेलर को वार्डन के माध्यम से हुई। वह उसकी कोठरी में गया और मैत्रीपूर्ण ढंग से बोला, "कुट्टन, यह क्या है? सेल में जाओ।" वह किसी शुभचिंतक के अनुरोध जैसा लग रहा था। कुट्टन चुप रहा। जेलर के साथ २० वार्डन भी थे।

उन्होंने कहा, "बेवकूफ, मैं कहता हूँ, उठो!"

तुरंत कुट्टन ने जेलर की ओर देखा और प्रतिक्रिया व्यक्त की, "मुझे ऐसा नहीं लगता।" वह बहुत कठोर लग रहा था। इसमें उस व्यक्ति की भावनाएँ थीं, जिसे ७० साल तक जेल में रहना पड़ा। यह एक हत्यारे के भारी हृदय को दरशाता है। इस जीवन का कोई विशेष उपयोग नहीं है, यह बात उसे मालूम थी और वह अपने निर्णय के प्रति बहुत कठोर लग रहा था। कोई भी कानून उसे उसके बारे में कोई भी निर्णय लेने से डरा या भयभीत नहीं कर सकता। उसने फिर कहा, "मुझे ऐसा नहीं लगता।"

साअ

५७४/ए, कल्लुझाथिल हाउस
मालेकड रोड, वी टूल्स के पीछे, उदयंपेरूर पी.ओ.
एर्नाकुलम-६८२३०७
दूरभाष : ८२८१५८८२२९

चार लघुकथाएँ

• सत्य शुचि

घर-घर बसती भगवती

कमोबेश बीस बरस गुजर गए। वह मेरे घर आ-जा रही थी। भगवती की छवि अच्छी रही है। मतलब कि दो बच्चे थे उसके—एक विदेश में तथा दूसरा स्थानीय बाजार में बरतनों की शॉप पर; जिस पर प्राय: बच्चों का बखान करने में भगवती कतई नहीं थकती-चूकती थी।

मगर आजकल भगवती मेरे घर बिना सूचना के नदारद है, अत: मेरा चिंतित रहना-होना स्वाभाविक था। यहाँ एक खास बात और है कि भगवती मोबाइल नहीं रखती थी, वरना मैं कदापि उससे वार्त्ता कर अपनी जिज्ञासा को विराम कभी का दे देता···। उसकी अनुपस्थिति खलने लगी थी। घर गंदा-गंदा सा दिखने लगा था। उसकी कमी घर भर में हैरान किए जा रही थी और चौथे दिन मैं उसके घर धमक गया था।

"अरे, भगवती!" अचानक मुझे पाकर वह सिहर सी उठी। "तुम काम पर नहीं आ रही हो···! सब कुशल-मंगल तो है न।"

"हाँ, बाबूजी···!" स्वर में मायूसी झलकी, "अब मैं काम पर नहीं आऊँगी।"

"क्यों···आखिर क्यों?" मैं चौंका।

"मेरे लड़के की सगाई होते-होते रह गई, बाबूजी!"

"क्यों··? कैसे?"

"और उसकी वजह मैं हूँ, बाबूजी।"

"क्या कह रही हो, भगवती!"

"लड़की वालों ने मेरी जन्मकुंडली कहीं से ढूँढ़ निकाली थी, बाबूजी।"

"तुम बोलो तो···मैं तुम्हारी ईमानदारी-कर्तव्यनिष्ठा की पैरवी करने के लिए कहीं भी चलने को तैयार हूँ, भगवती!"

"बात दूसरी है, बाबूजी।"

"वह क्या है?"

"वह सब जगह कहते फिर रहे हैं कि लड़के की माँ घर-घर झाड़ू-पोंछा लगाती है।"

"इसमें कौन सा जुल्म-अपराध हो गया, भगवती?"

"और वह यह भी कह रहे कि झाड़ू-पोंछा उनकी शान-इज्जत से मेल नहीं खाता है।"

"पर उन लोगों से जाकर पूछो कि दुनिया में इनसान काम करना छोड़ देवे क्या?"

"बस-बस···बाबूजी! आगे से मैं नहीं आ पाऊँगी, मैं माफी चाहती हूँ, बाबूजी।"

"लेकिन···कल को शादी के पश्चात् अलग हो गया लड़का, तो-तो!"

"बाबूजी, माँ हूँ मैं···अगर ऐसा होगा तो मेरी सेहत पर क्या फरक पड़ना···!" और बोलते-बोलते वह हाँफ रही थी। आँखें आर्द्र थीं।

यक-ब-यक उसी समय मैं सोचने पर विवश था कि औलाद के वास्ते भगवती का तनिक ऐसा अंधफेथ या कि मोह आज कितना सार्थक-उचित है! और संजीदगी ओढ़े मैंने तत्काल महसूस किया, उसके निर्णायक कदम से औलाद का भविष्य जरूर सँवरेगा, परंतु भगवती का जीवन किसी अँधेरे मैं सिमटकर रह गया तो···! अनायास ही एक उदासी मुझ पर हावी हो चली थी। और निमिषमात्र में निढाल सा मैंने अपने घर जाने की सोची।

पंक्चर

अभी हाल ही में खरीदी नई बाइक की बुरी दशा से वह दु:खी था। उसे जुम्मा-जुम्मा दिन ही गुजारे थे। उस तल्ले में उसके अकेले का निवास था। वैसे भी बाइक को रोजाना ऊपर चढ़ाना संभव नहीं था, इसलिए उसे जीने के समीप ही रखनी पड़ती थी। असल में सारी गड़बड़ उसकी बाइक के साथ रात में ही हो रही थी। उसने इसका पता लगाने की बहुत बार कोशिश की, किंतु हर बार वह निराशा में फिसलकर चित्त हुआ था। उसकी आँखों में परेशानियों का सैलाब लहराता रहता था।

उस रात्रि को अप्रत्याशित ही उसकी नींद 'सुर्र-सुर्र' की आवाज से भाग गई। वह बेसब्री से उठ बैठा और एक साँस में वह फटाफट सीढ़ियाँ

उतर गया। उसी समय रोशनी में भीगी उसकी नंगी पीठ को पहचान गया। वह नीचे के पोर्सन में रहनेवाली महिला ही थी। वह अभी गुस्से से भरा-भरा था और तत्परता से उसके नजदीक पहुँचकर उसकी कलाई को मजबूती से जकड़ लिया; लेकिन वह बिल्कुल निश्चिंत सी बिना झेंपे-झिझके उसकी नजरों के सामने हो ली।

"मेरी बाइक के पीछे आप हाथ धोकर क्यों पड़ी हैं?"

"..."

"आखिर, आप चाहती क्या हैं?"

"बस यही चाहती थी कि आपसे बात हो।" उसने तृष्णा बुझाते हुए कहा।

उसकी आँखों की दहकती सुर्खी से एक दफे उसकी कँपकँपी छूट गई। तभी उसने जीने की तरफ वापस मुड़ने के लिए दो-एक डग भरे ही थे कि हवा का एक झोंका जोर से आया। एक क्षण को उसने गरदन घुमाते-घुमाते उसे अपनी निगाहों से भाँपा और उसने सीढ़ियों पर चढ़ने का अपना इरादा स्थगित कर दिया।

रैंप का दायरा

घर के दो प्रवेश-द्वार थे। दोनों भाई अपने-अपने हाल में बड़े मजे में थे; लेकिन अमूमन उनकी आपसी धड़कनें इन दिनों घटने-बढ़ने लगी थीं, जिसका समाधान-निदान एक कठिन डगर सा लग रहा था। दरअसल दो रैंप का होना वक्त की जरूरत समझी गई और एक रोज इसी मसले पर दोनों भाई गेट के समीप किंचित् उलझे-उलझे से दिखने लगे।

"...मैं तो चाहूँगा कि आप भी अपना अलग रैंप बनवा लीजिए भैया, जिससे आए दिन की कलह-कड़वाहट घरों में बंद हो।" आजिजी स्वर में छुटियल ने खलल-दखल पैदा की।

"अलग से मैं कैसे बनवाऊँ रैंप? और मेरा यहाँ तुमसे कुछ भी छिपा-छुपा नहीं है, बल्कि मेरा जीवन खुली किताब की तरह है तुम्हारे सामने!" अपनी लाचारगी को बड़ियल ने तुरंत परोसा।

"सच कहूँ, आपके वाहनों-गाड़ियों की रेत-मिट्टी-गंदगी को रोज की रोज कौन बुहारे या साफ करे!"

"जैसे तुम्हारे वाहनों की मिट्टी फर्श से साफ होती है, वैसे ही मेरी भी हो जाएगी। आखिर, मैं तुम्हारा बड़ा भाई हूँ, सगा!"

"हाँ-हाँ...भैया! मैं नकार थोड़े ही रहा हूँ आपकी इस बात को, किंतु, ऐसा कब तक चलेगा? ऐसे में तो आपको अब मेरे रैंप का विकल्प ढूँढ़ना ही पड़ेगा।"

"मैं कहाँ से ढूँढू विकल्प, छोटे!"

"भैया, आपको छह महीने के भीतर ही अपने पार्टीशन-हिस्से में रैंप का निर्माण करवाना होगा...और हाँ, छह महीने बाद मैं भी आपके वाहनों को मेरे रैंप से अंदर आने की कतई इजाजत नहीं दूँगा।" बोलते-बोलते एकाएक वातावरण में कसैलापन भर आया और तभी छुटियल उस जगह से किनारा करते हुए पलटा।

"छह महीने तो क्या, आने वाले कई वर्षों तक भी वह खुद का रैंप तैयार नहीं करवा सकता!" और एकांत में वह एक चिंतन-मनन के वशीभूत सिहर गया।

आहिस्ते-आहिस्ते खालीपन

पड़ोसी गैस सिलेंडर ले गया था, क्योंकि उसे आवश्यकता थी। एक दिन आकर बोला, "हमने गैस बुकिंग करवा रखी है, एक-दो रोज में वह सिलेंडर वापिस कर देंगे। आपकी बड़ी कृपा-मेहरबानी होगी, भाई साहब!" उसके गिड़गिड़ाने के अंदाज पर मैं पसीजा था।

आज एक सप्ताह बीत चुका था कि उसकी तरफ से गैस सिलेंडर का कोई अता-पता नहीं, इसीलिए काफी खिन्न सा था मैं, और उसके घर पर जाने का यही सबब रहा। चलते-चलते कदम उसके घर पर थम गए मेरे और एक मिनट में ही वह सामने आ गया।

"अरे...! मैं आपकी बाट जोहता ही रहा कित्ते दिनों से!" पड़ोसी को मैंने कड़क लहजे में उलाहना देने की कोशिश की।

"चलो, मैं नहीं आया तो क्या, आप चले आए, क्या फर्क पड़ता है।" उसने बात को हलके में लिया।

"आपको जरा शरम भी है! आज दुनिया इसी में मस्त है कि जब काम पड़े तो आदमी कुछ और हो, और फिर काम निकल जाए तो उसका चेहरा और तरह का रूप धारण कर ले, है न, कितनी मजे की बात है, समझे!" मैंने पुरजोर एतराज जताया।

"काहे को इत्ता गुस्सा होते हो, यह लो, आपका सिलेंडर!" संक्षेप में कहकर वह फौरन अंदर चला गया।

देखते-ही-देखते अनमना सा मैं अपनी मोटरसाइकिल पर सिलेंडर का बोझा लिये-लिये घर लौट आया, तत्पश्चात् मैं झल्लाया, "आदमी की औकात क्या मतलब तलक ही रह गई है!" मगर मुझे सबसे बुरा यही लगा कि गैस सिलेंडर उसने मुझे खाली सौंपा था, जबकि तत्काल मुझे गैस की सख्त जरूरत थी! मैं हाँफ सा गया, उसके द्वारा सिलेंडर की कीमत-राशि देने मात्र से मेरी समस्या ज्यों-की-त्यों रही, आखिर, कब मेरी गैस बुक होगी और कब वह मेरे घर दस्तक देगी!

और देर तक मैं चिंतित सा इसी मुद्दे पर माथा-पच्ची करता रहा कि फुर्र से मैं बेमन से बड़बड़ाया, 'अपने नाजुक वक्त-हालात में मुझे अब खुद के परिवार के साथ किसी होटल में खाने का लुत्फ-आनंद लूटना चाहिए।'

और यकायक मुझे अनुभव हुआ कि यहाँ सरेआम अभी-अभी मुझे किसी ने लूट लिया है।

सा.अ.
साकेत नगर,
ब्यावर-३०५९०१ (राज.)
दूरभाष : ९४१३६८५८२०

प्यादों की शहादत

● शशिकांत सिंह 'शशि'

शतरंज की बाजी खत्म हो चुकी थी। काले-सफेद सभी प्यादे एक ही डिब्बे में बंद थे। बिसात एक ओर शांति की साँसें ले रही थी। दोनों राजा प्यादों के बीच ही मुँह छुपाए पड़े थे। रानियाँ बेसुध-सी पड़ी थीं। काले प्यादे ने सफेद प्यादे से कहा, "एक बात समझ में नहीं आई। हमारा राजा तो तुम्हारे राजा के साथ ही डिब्बे में बंद है। तुम्हारी और हमारी पूरी सेना भी बेजान-सी पड़ी है, फिर यह जंग कौन लड़ रहा था? हम किसके लिए एक-दूसरे को काट रहे थे? तुम सफेद राजा की ओर से मुझे मारने आए थे, हालाँकि मैंने कब तुम्हें मार दिया, मुझे पता नहीं। मैं तो अभी सोच ही रहा था कि तुमपर हमला करूँ या नहीं, तब तक तुम डिब्बे में पड़े थे और पीछे से हाथी ने आकर मेरा भी काम तमाम कर दिया। मुझे लगा कि तुम्हारा राजा जीत गया होगा। उसके नाम पर बड़ा राज कायम हो जाएगा, लेकिन वह तो हमारे साथ ही पिटा पड़ा है।"

सफेद सिपाही सिर खुजा रहा था। वह खुद को अक्लमंद मानता था, जैसा कि सिपाही को मानना चाहिए और इसी मुगालते में वह अपने राजा के लिए जान लुटाने को तैयार रहता था, जैसा कि उसे तैयार रहना ही चाहिए। वह जान लुटा भी चुका था, मगर काले सिपाही के सवाल ने उसे सोचने पर मजबूर कर दिया। उसने सोचते हुए कहा, "देखो दोस्त, मुझे तो दो हाथ दिख रहे थे। दोनों में कोई अंतर नहीं था। एक हाथ आगे बढ़ता तो सफेद प्यादा कटता। दूसरा हाथ आगे बढ़ता तो काला प्यादा कट जाता। अंत में दोनों हाथ आपस में मिल गए और हम कटकर बिसात से बाहर हो गए। मैं तो अपने राजा की जीत के लिए लड़ रहा था, लेकिन अब लग रहा है कि हमारा राजा भी किसी का सिपाही ही था। उसे तो हिलने की इजाजत भी नहीं थी। बमुश्किल अपनी जगह से आगे-पीछे हो सकता था, लेकिन जंग उसी के नाम पर हो रही थी। अब देखो, राजा तो राजा बिसात भी यहीं पड़ी है, इसका मतलब कि जंग की तरह यह बिसात भी नकली थी। हमें तो कहा गया कि हम शहीद हो गए, मगर किसके लिए? यहाँ तो जंग भी नकली और बिसात भी।"

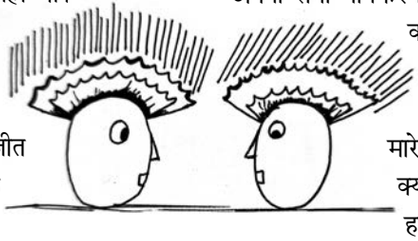

दोनों सिपाही थोड़ी देर चिंतन करते रहे, फिर उन्होंने सोचा कि बड़े प्यादे से पूछा जाए। छोटे प्यादों को तो अगले मोर्चे पर जान देनी होती है। बड़े प्यादे अंदर के मोर्चे पर जान लुटाते हैं, राजा के करीब भी होते हैं और करीबी भी, सो उन्हें जरूर अंदर की बात पता होगी कि यह जंग किसके लिए लड़ी जा रही थी? आखिर इस जंग से किसे फायदा हुआ? दोनों ने आगे बढ़कर हाथी को जगाया। हाथी चूँकि एक कोने पर डटा रहता है और पूरे देश की हिफाजत करता है, सो उसे राजा का खास माना जाता है। उसने यह सवाल सुना तो उसने सिपाहियों को घूरा—"तुम लोग अपनी औकात से अधिक अक्ल लगा रहे हो। भूल गए राजा का फरमान कि नमक और अक्ल उतनी ही लगाओ, जितनी बर्दाश्त हो जाए। सिपाही होकर सोचने लगे हो! कल फिर जंग होगी, फिर बिसात पर बिछा दिए जाओगे। फिर शहीद होकर डिब्बे में बंद हो जाओगे। सोचना छोड़ो और लंबी तानकर सो जाओ। प्यादे सोचा नहीं करते, शहीद हुआ करते हैं।"

चूँकि हाथी सफेद था, इसलिए खास था, सफेद सिपाही ने उसे अपना सगा मानकर फिर से सवाले किया—"दादा, बता दो न यह जंग कौन लड़ रहा था? दोनों राजा तो हमारी तरह मुँह छिपाए पड़े हैं। कल कौन किससे लड़ेगा? रोज बिसात क्यों बिछा दी जाती है। हम प्यादे ही क्यों मारे जाते हैं? वे हाथ जो राजा के पीछे होते हैं, उन्हें कोई क्यों नहीं मारता? जानते हो तो बता दो, नहीं तो अपनी हार स्वीकार कर लो।"

गुस्सा तो हाथी को बहुत आया कि एक पिद्दी सा प्यादा चुनौती दे रहा है, लेकिन बिसात के बाहर किसी को किसी से दुश्मनी नहीं थी। सब एक-दूसरे के मित्र थे, बस बिसात बिछते ही जान के प्यासे हो जाते थे, अलबत्ता उन्हें कारण पता नहीं होता था। उनकी तो अपनी इच्छा भी नहीं होती थी। एक हाथ पीछे से आया और उठाकर इसकी सीध में डाल गया। उसके पीछे लगा गया, किसी के घात में लगा गया। प्यादों को तो कटने के बाद ही पता चलता था कि कौन उन्हें काट गया, जबकि चालें बहुत पहले ही तय हो जाती थीं। उसने प्यार से प्यादे को पुचकारा—"प्यारे भाई,

सुपरिचित व्यंग्य लेखक। बटन दबाओ पार्थ, सागर मंथन चालू है, मंडी में ईमान (व्यंग्य संकलन) एवं विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। संप्रति पी.जी.टी. भूगोल, जवाहर नवोदय विद्यालय सुखासन, मधेपुरा, बिहार।

कटना और काटना हमारा धर्म है। हम प्यादे हैं, हमें मालिक के इशारों पर बिसात पर नाचना होता है। अपने दिमाग को क्यों कष्ट दे रहे हो? मालिक को पता चला कि तुम सोचने लगे हो तो तुम्हारी जगह नया प्यादा डाल देगा। तुम कचरे के ढेर पर फेंक दिए जाओगे। जहाँ कुत्ते आकर तुम्हें सूँघेंगे। मैं तो बस इतना ही जानता हूँ कि यह जंग शौकिया लड़ी जा रही थी। किसी बड़े आदमी को मनोरंजन करना था तो उसने बिसात बिछा दी और दूसरे बड़े आदमी को खेलने के लिए कहा।"

"यानी जंग नहीं, खेल हो रहा था? और वह भी मनोरंजन के लिए। हम बिना मतलब ही मारे गए। आप तो इतने शक्तिशाली हैं दादा, आप विरोध क्यों नहीं करते?"

हाथी ने मुँह ढककर ठहाका लगाया—"पगले हमारी जो ताकत है, वह उसी की दी हुई है। हम तो बस कठपुतलियाँ हैं, उसके इशारे पर हमें नाचना होता है। वह जब चाहे हमें कठपुतली से काठ बना दे। तुम अपने को सचमुच के सिपाही मत समझने लगना। नहीं तो कहीं के नहीं रहोंगे।"

हाथी मुँह ढककर सो गया। सिपाही को गुस्सा भी आया और रोना भी। उसके साथी काले सिपाही ने साहस करके पूछा, "क्यों न हम राजा साहब के पास जाकर अपनी फरियाद करें। आखिर हम उनके सिपाही हैं। उनसे ही पूछ लें कि हमारी शहादत से खेलने वाला सख्श कौन है? किसको सिपाहियों की लाशें बिछाकर इतना मजा आता है कि जब-तब बिसात बिछाकर दुनिया भर के सैनिकों को लड़ाने लगता है।"

हाथी मुँह ढककर सो गया। सिपाही को गुस्सा भी आया और रोना भी। उसके साथी काले सिपाही ने साहस करके पूछा, "क्यों न हम राजा साहब के पास जाकर अपनी फरियाद करें। आखिर हम उनके सिपाही हैं। उनसे ही पूछ लें कि हमारी शहादत से खेलने वाला सख्श कौन है? किसको सिपाहियों की लाशें बिछाकर इतना मजा आता है कि जब-तब बिसात बिछाकर दुनिया भर के सैनिकों को लड़ाने लगता है।"

सफेद सिपाही सिर झुकाए चुपचाप खड़ा था। उसको हाथी की बात याद आ रही थी कि हम सब कठपुतलियाँ हैं। आखिर राजा भी तो इसी डिब्बे में बंद है। उसकी औकात भी हमारे जितनी ही है। बस स्थान का अंतर है, वह राजा के खाने में है, राजा नहीं है। उसने काले सिपाही को यह बात बताई, लेकिन वह राजा से बात करने की जिद पर अड़ा रहा। हार मानकर सिपाही ने राजा के बगल में जाकर बैठना उचित समझा। जब वह जगेगा, तब बात होगी, लेकिन वह जगे तो तब, जब सोया हुआ हो। उसकी आँखों के आगे उसके बंधु-बांधव मार दिए गए थे। वह पूरी ताकत से लड़ रहा था। अभी उसके पास एक हाथी और दोनों घोड़े बचे हुए थे। बेगम शहीद हो चुकी थी। वह चाहता था कि बेगम का गम भुलाकर जी जान से जुट जाए, लेकिन तभी दोनों हाथों ने आपस में समझौता कर लिया। पता चला कि खेल ड्रॉ हो गया। ड्रॉ हुआ या कराया गया? जीत को हार में बदल दिया गया! अजीब खेल है, रोज कोई-न-कोई राजा अपने परिवार सहित मारा जा रहा है। रोज हजारों सैनिक शहीद हो रहे हैं और ये हाथ आपस में मिल जा रहे हैं। खेल ड्रॉ करा रहे हैं। उसको नींद नहीं आ रही थी। शुकून के लिए उसने धीरे से आँखें खोलीं तो उसने अपने सैनिकों को सामने देखा, जो एकटक उसे ही देखे जा रहे थे। वह हौले से मुसकराया, बिसात पर चाहे वह राजा हो, लेकिन यहाँ तो प्यादा ही है। एक पिटा हुआ प्यादा। उसको मुसकराता हुआ देखकार सिपाही की हिम्मत बढ़ी, उसने पहले तो झुककर सलाम किया, फिर बड़े अदब से बोला, "हुजूर कल की जंग हम जीत सकते थे। हमारे दोनों घोड़े बिल्कुल सुरक्षित दूरी पर हमले को तैयार थे। एक झपट्टे में जंग हमारी मुट्ठी में होती, लेकिन आपने समझौता कर लिया।"

"मैंने न जंग की, न समझौता किया। मुझे राजा के खाने में बिठा दिया गया। चालें पीछे से चली जा रही थीं। गोटियाँ पीछे से सेट की जा रही थीं। प्यादों को एक-दूसरे के सामने पीछे वाली ताकतें बिठा रही थीं दोस्त। मैं तो बस एक मुखौटा था, जिसका नाम राजा था, असली ताकतें परदे के पीछे थीं।"

सिपाही को अब असली झटका लगा। वह जिस राजा के लिए लड़ रहा था, वह बस मुखौटा था। यानी उसकी देशभक्ति, मातृभूमि के लिए मर मिटने का जज्बा सब निरर्थक था। उसका इस्तेमाल किया जा रहा था। उसने अपने साथी सिपाही को मार दिया और अपने देश का नारा लगाया, जो कि कहीं था ही नहीं। यह तो सरासर धोखा है। उसने साहस करके एक सवाल और किया—"हुजूर, इसका मतलब कि सामने वाला राजा भी अपनी मरजी से लड़ने नहीं आया था।"

"नहीं, वह भी कठपुतली ही है। उसे भी लाकर बिसात पर बिठा दिया गया था। देखो, सामने पड़ा है, मगर मरा नहीं है, कठपुतलियाँ मरा नहीं करतीं। उन्हें तो रोज तमाशा दिखाना होता है। कल फिर बिसात बिछेगी। कल फिर हमें मरना है अपने पूरे परिवार सहित।"

"आपको पता है तो आप विरोध क्यों नहीं करते? आप तो राजा हैं, हम अदने से सिपाही हैं तो हम विरोध नहीं कर सकते, लेकिन आप तो!"

राजा हँसा, जो वास्तव में रोने की तरह था। उसने धीरे से कहा, "तुम नहीं जानते दोस्त। हाथों की ताकत बेशुमार है। वह रोज हमारे-तुम्हारे जैसे हजारों प्यादों को बनाता और मिटाता है। मैंने यदि उसकी मरजी से हिलना छोड़ दिया तो मेरी जगह दूसरे को राजा के खाने में डाल देगा।"

"मगर राज तो आपका है, ऐसे कैसे कोई राजा बदल देगा?"

"राज भी उसी का और राजा भी। मेरा ही नहीं, पूरी दुनिया की बिसात पर उनके ताकतवर हाथ खेल रहे हैं। उनके इरादे से राजा बनते और हटते हैं। अधिक मत सोचो, तैयार रहो, कभी भी तुम्हें बुलाने आ जाएँगे। आज भी युद्ध का खेल होगा। सुना है, महीने भर तक खेल चलेगा। दुनिया भर के खिलाड़ी जमा हो रहे हैं। हमें रोज ही मरना और जीना है।"

"मतलब हमारी कोई इच्छा या अनिच्छा नहीं है।"

"हम बने ही बिसात के लिए हैं, दोस्त।"

सा.अ.

जवाहर नवोदय विद्यालय सुखासन
मधेपुरा-४५२१२८ (बिहार)
दूरभाष : ७३८७३११७०१

ज्योतिर्मयी

● संजय कुमार मालवीय

मार्च का महीना था। कालीपीठ पर ग्यारह दिवसीय शतचंडी यज्ञ चल रहा था। यज्ञ के निमित्त बड़े-बड़े तांत्रिक, संन्यासी एवं ज्योतिषी कालीपीठ पर विद्यमान थे। पीठाधीश्वर स्वामी अमृतपाद से दीक्षित अनेक शिष्य-शिष्याएँ यज्ञ में सम्मिलित होने के लिए आई थीं। पुरोहितगण, तांत्रिक, संन्यासी, ज्योतिषी, यजमान व पीठ से जुड़े अन्य साधक-साधिकाएँ दिन में शतचंडी का पाठ करते और रात्रि में जीवन के आध्यात्मिक अनुभवों की परस्पर चर्चा करते।

यज्ञ में शामिल होने पीठ का दीक्षित साधक नर्मदेश्वर भी गया था। उसकी वरिष्ठ गुरुबहन—चारुशीला, गुरुभाई—रामसमर्थ एवं ज्योतिर्विद्या के निष्णात अध्येता—साधक लिंगम स्वामी भी गए थे। वे ज्योतिषी के साथ-साथ हस्त-रेखा के मर्मज्ञ विद्वान् और कालीपीठ से ही दीक्षा-प्राप्त साधक थे।

यज्ञ में प्रतिदिन शताधिक श्रद्धालु सम्मिलित होते। जो लोग लिंगम स्वामी से पूर्व परिचित थे, अपनी जन्म-पत्रिका उनसे विचरवाते। कई अपना हाथ भी स्वामीजी के सामने पसार देते कि उनकी हस्त-रेखाएँ क्या कहती हैं!

"नर्मदेश्वर का हाथ देखकर बताइए, इसके हाथ की रेखाएँ क्या कहती हैं?" एक संध्या चारुशीला ने लिंगम स्वामी से कहा।

"इनका हाथ कल रात्रि में आराम से देखेंगे।" लिंगम स्वामी ने आश्वासन भरे स्वर में कहा।

नर्मदेश्वर उत्सुक तो था, किंतु उसने कोई विशेष उत्कंठा नहीं दिखाई।

अगली रात्रि स्वामीजी ने नर्मदेश्वर को अपने पास बुलाया और अपनी भौंहों से उसके हाथ की ओर इशारा किया। नर्मदेश्वर ने दोनों हाथ स्वामीजी के सम्मुख फैला दिए। स्वामीजी कभी दाहिनी और कभी बाईं हथेली की लकीरों को बागौर देखते।

"क्या मेरा कुछ आध्यात्मिक उत्थान होगा?" नर्मदेश्वर ने जिज्ञासा व्यक्त की।

स्वामीजी ने नर्मदेश्वर की हस्त-रेखाओं पर दृष्टि गड़ा दी। एक क्षण बाद वे बोले, "आपके ऊपर आपके गुरु की महती कृपा है।"

उनकी आँखों में दिव्य चमक थी। वे किन्हीं अलौकिक विचारों में खो गए।

सुपरिचित लेखक। 'प्रायश्चित्त', 'बदलते मौसम', 'गिरगिट' एवं 'अतीत लौट आया' आदि कहानियाँ व 'बर्फ और अंगारे' उपन्यास पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। संप्रति उत्तर प्रदेश की प्रशासनिक सेवा में कार्यरत।

"आज से तीन माह के अंदर आपको किसी उच्च-चेता मानवी का दर्शन प्राप्त हो सकता है, इस ओर आप सचेत रहें।" स्वामीजी ने आग्रह करते हुए दृढ़तापूर्वक कहा।

उनके नेत्रों की पुतलियाँ गोल और स्थिर थीं। इतना कहकर उन्होंने नर्मदेश्वर के हाथ छोड़ दिए और अन्य बातें करने लगे।

यज्ञ नित्यप्रति आगे बढ़ रहा था और पीठ पर श्रद्धालु-साधकों को नए-नए अनुभव होने लगे थे। पूर्णाहुति के दिन कालीपीठ पर सामूहिक हवन व विशाल भंडारे का आयोजन था। इसमें सहस्राधिक लोग सम्मिलित हुए। □

यज्ञ का विश्राम हुए लगभग दो माह बीत चुके थे। मई के प्रथम सप्ताह में नर्मदेश्वर अपने मित्र चिरायु के साथ उत्तराखंड की यात्रा पर निकल पड़ा। वह पहले हरिद्वार गया और हर की पैड़ी में स्नान-संध्या कर रात्रि विश्राम भी वहीं किया।

दूसरे दिन दोनों उत्तराखंड के दुर्गम पहाड़ी रास्तों से होकर प्रकृति के लुभावने दृश्यों का आनंद लेते हुए शाम ढले तक जानकी चट्टी-उत्तरकाशी पहुँच गए। उसी शाम वे वहाँ से खरसाली गाँव भी घूमने गए। यह नदी के उस पार ही था। खरसाली में यमुनाजी का एक छोटा सा मंदिर है, जहाँ शीतकाल में उनकी विग्रह-पूजा होती है। लोकमान्यता के अनुसार खरसाली यमुनाजी का मायका है।

सुबह लगभग सात किलोमीटर की खड़ी-कठिन चढ़ाई चढ़कर यमुनोत्तरी स्थित यमुना-मंदिर में दर्शन के बाद दोनों ने 'वानर पूँछ' ग्लेशियर देखा। यह पवित्र स्थान यमुनाजी का उद्गम-स्थल है।

यमुनोत्तरी से लौटकर दोनों उत्तरकाशी के लिए प्रस्थान कर गए।

प्रात: गंगनानी, हर्षिल, मुखबा और भैरवघाटी होते हुए दोनों गंगोत्तरी पहुँचे। गंगाजी गोमुख से निकलकर गंगोत्तरी आती हैं। गंगा के बर्फीले पवित्र जल से आचमन-स्नान के पश्चात् दोनों ने गंगा-दर्शन किया और रात्रि आठ बजे तक उत्तरकाशी वापस आ गए।

गंगनानी उत्तरकाशी से चौवालीस किलोमीटर दूर गंगोत्तरी-मार्ग पर स्थित एक छोटा सा कस्बा है। पौराणिक मान्यतानुसार भगवान् शिव ने बहुत वर्षों तक यहाँ तपस्या की थी। लोगों का यह भी मानना है कि गंगनानी में ऋषि वेद व्यास के पिता महर्षि पराशर ने तप करके उन्नत लोक प्राप्त किया था। गंगनानी में पराशरजी का एक प्राचीन मंदिर भी है। गंगोत्तरी से लौटते हुए नर्मदेश्वर ने पराशर-मंदिर में दर्शन भी किए। यह सुखद है कि उसका गोत्र भी पराशर ही था।

गंगनानी से लगभग बत्तीस किलोमीटर गंगोत्तरी-मार्ग पर ही भोज वृक्षों, देवदार के सघन वनों तथा पहाड़ी झरनों से आच्छादित हर्षिल गाँव भागीरथी नदी के तट पर बसा है। हर्षिल अत्यंत रमणीक हिल-स्टेशन है। यह सेब उत्पादन के लिए भी प्रसिद्ध है। माना जाता है कि हर्षिल की खोज ब्रिटिश सेना के भगोड़े सिपाही पैट्रिक विल्सन ने की थी। यहाँ सैनिक-छावनी भी है।

हर्षिल से प्राय: तीन किलोमीटर की दूरी पर मुखबा गाँव है। मुखबा-स्थित गंगाजी के मंदिर में उनकी शीतकालीन पूजा होती है। लोकमान्यता के अनुसार मुखबा गंगाजी का मायका है। गंगोत्तरी से छह किलोमीटर पहले ही भैरवघाटी है, जहाँ भैरवनाथ का प्राचीन मंदिर है। यह भागीरथी और जाह्नवी के संगम पर स्थित है। प्रसिद्ध जर्मन पर्वतारोही हेनरिक हैरियर भैरवघाटी से जाह्नवी के किनारे-किनारे चलता हुआ तिब्बत गया था और पवित्र दलाई लामा का शिक्षक बन बैठा।

अगले दिवस भोर में ही दोनों उत्तरकाशी से केदारनाथ-दर्शन हेतु निकल पड़े और देर शाम गौरीकुंड पहुँच गए। यहाँ से सुबह गौरीकुंड में स्नान करके उन्हें बाबा केदारनाथ के दर्शन हेतु लगभग चौदह किलोमीटर की दुर्गम चढ़ाई चढ़कर केदारघाटी पहुँचना था। सुबह नर्मदेश्वर और चिरायु घोड़े से केदारघाटी के लिए निकल पड़े। लगभग पाँच घंटे की श्रम-साध्य चढ़ाई के बाद केदारघाटी पहुँचकर उन्होंने बाबा केदारनाथ के दिव्य दर्शन किए।

अगली सुबह ऊखीमठ होते हुए दोनों जोशीमठ के लिए प्रस्थित हुए। शाम को जोशीमठ पहुँचकर ज्योतिर्मठ में शंकराचार्यजी का आशीर्वाद प्राप्त किया और तोटकाचार्य गुफा में दुर्लभ स्फटिक शिवलिंग का दर्शन प्राप्त कर तृप्त हुए।

सर्दियों में भगवान् केदारनाथ की उत्सव-डोली को केदारनाथ मंदिर से ऊखीमठ लाया जाता है। केदारनाथ की शीतकालीन पूजा और भगवान् ओंकारेश्वर की वर्ष भर चलने वाली पूजा, ऊखीमठ मंदिर में ही संपन्न होती है।

नर्मदेश्वर चिरायु के साथ जोशीमठ से भगवान् बदरीविशाल के दर्शन हेतु बदरिकाश्रम चला गया। बदरीनाथ मंदिर के कपाट खुले अभी तीन दिन ही बीते थे, फिर भी मंदिर में साधु-संन्यासियों व श्रद्धालु दर्शनार्थियों की अच्छी-खासी भीड़ थी। दर्शनोपरांत मंदिर के द्वार पर बाईं ओर बनी सीढ़ियों से दोनों नीचे उतरने लगे। चिरायु नर्मदेश्वर के आगे चल रहा था। वह सीढ़ियों से उतरकर मंदिर के मुख्य द्वार के सामने बह रही अलकनंदा की ओर बढ़ चला। नर्मदेश्वर सीढ़ियों से उतरकर कुछ ही कदम आगे बढ़ा था कि जाने क्यों, वह मुड़कर मंदिर की ओर देखने लगा। जैसे किसी ने बलात् उसकी दृष्टि का आकर्षण कर लिया हो। अचानक उसकी दृष्टि मंदिर के नीचे लंबित सीढ़ी के पास गई। वहाँ एक युवा संन्यासिनी खड़ी थी। वह बाईस-तेईस की रही होगी। उसने अपने शरीर पर गैरिक वस्त्र धारण कर रखा था और अपनी बड़ी जटाओं को लपेटकर सिर पर जूड़ा बना लिया था। संन्यासिनी का रंग साँवला और बदन कसा हुआ था। लंबाई छह फीट रही होगी। वह एक ही स्थान पर मूर्तिवत् अविचल खड़ी थी। उसके मुखमंडल पर एक दिव्य मोहक मुसकान की आभा विकीर्ण हो रही थी। नर्मदेश्वर को लगा, जैसे वह उसे ही एकटक निहार रही हो। शील-संकोचवश वह उधर से अपनी आँखें फेर लेता। तो भी मन बार-बार संन्यासिनी की ओर खिंच जाता। जब भी वह उसकी ओर देखता, संन्यासिनी की दृष्टि नर्मदेश्वर की आँखों से मिल जाती। यह क्रम पाँच-छह मिनट तक चलता रहा।

"नर्मदेश्वर, तुम यहाँ खड़े होकर क्या कर रहे हो? मैं कब से तुमको ढूँढ़ रहा हूँ!" अचानक चिरायु का स्वर सुनकर नर्मदेश्वर चौंक सा गया।

"तुम चलो, मैं आ रहा हूँ।" उसने चिरायु से अन्यमनस्क भाव से कहा।

चिरायु ने नर्मदेश्वर का हाथ पकड़ा और उसे लगभग खींचते हुए अलकनंदा की ओर लेता चला। वहाँ चिरायु ने अनेक तसवीरें लीं। नर्मदेश्वर बेमन चिरायु के साथ फोटो खिंचवा रहा था, क्योंकि उसका मन तो संन्यासिनी में लगा हुआ था। वह मन-ही-मन सोच रहा था कि फोटो खिंच जाने के बाद वह संन्यासिनी से मिलेगा और दक्षिणा-सहित उसका चरण-छूकर आशीर्वाद प्राप्त करेगा।

कुछ क्षणों के उपरांत नर्मदेश्वर ने जाकर देखा तो संन्यासिनी वहाँ नहीं दिखी। उसने उसे चारों तरफ ढूँढ़ा, वह नहीं दिखी। मंदिर-परिसर में उपस्थित साधु-संतों और पुजारियों से उसने उसके बारे में पूछताछ की। सभी ने अनभिज्ञता प्रकट की। फिर भी नर्मदेश्वर ने उसे बहुत देर तक तलाशा, पर निराशा ही हाथ लगी। वह संन्यासिनी के दिव्य मुखमंडल और मंत्रमुग्ध कर देने वाली मुसकान को भुला नहीं पा रहा था।

अपर दिवस बदरीनाथ के आस-पास घूमता हुआ नर्मदेश्वर माणा गाँव चला गया। माणा गाँव भारत-चीन सीमा का सीमावर्ती गाँव है, जहाँ से वह भीम पुल देखने गया। कहा जाता है, स्वर्गारोहण के लिए जाते समय भीम ने एक विशालकाय शिला-खंड उठाकर नदी के तट पर रखकर पुल का निर्माण कर दिया था। इसे ही 'भीम पुल' कहा जाता है और उस शिला को 'भीम शिला' कहा जाता है। भीम पुल से अलकनंदा को पार करके पांडव स्वर्ग-मार्ग पर अग्रसर हुए थे।

नर्मदेश्वर भीम पुल से अलकनंदा के उस पार गया और जिज्ञासा-वश स्वर्गारोहण-पथ पर भी कुछ दूर तक चला। मार्ग बर्फ से आच्छादित था। चारों तरफ बर्फ की चादर बिछी थी। आगे कुछ दूरी पर पड़ी शिला पर वह ज्योतिर्मयी संन्यासिनी ध्यान मुद्रा में स्थिर दीपशिखा-सी बैठी दिखी। नर्मदेश्वर की उत्सुकता बढ़ चली। धीरे-धीरे वह उसकी तरफ बढ़ने लगा। उसे लगा कि वह उस तक पहुँच नहीं सकेगा।

"आप कौन हैं?" नर्मदेश्वर ने ऊँची आवाज में पूछा।

नर्मदेश्वर के जोर से पुकारने पर उसकी आँखें खुल गईं। नर्मदेश्वर की ओर देखती हुई वह खिलखिलाकर हँस पड़ी।

नर्मदेश्वर ने फिर आवाज दी, "मैं आपके पाँव-छूकर आशीर्वाद प्राप्त करना चाहता हूँ।"

संन्यासिनी वहीं खड़ी हो गई और दाहिना हाथ उठाकर आशीर्वाद देती हुई कुछ बोली, जिसे नर्मदेश्वर समझ नहीं सका। संन्यासिनी ने नर्मदेश्वर को वहीं से लौट जाने का संकेत किया। नर्मदेश्वर ने घुटने टेककर उसे प्रणाम किया और आधे मन से वापस लौट आया।

नर्मदेश्वर बार-बार सोचता रहा कि आखिर वह थी कौन!

उत्तराखंड की अपनी यात्रा पूर्ण कर नर्मदेश्वर घर वापस आ गया। महीनों बाद उसने अपने वरिष्ठ गुरुभाई रामसमर्थ को फोन किया और उत्तराखंड की अपनी यात्रा की चर्चा की। तभी यकायक उसे बदरीनाथ में घटी घटना याद आ गई और उसने उस ज्योतिर्मयी संन्यासिनी की चर्चा कर डाली। संन्यासिनी की बात सुनकर रामसमर्थ जोर से हँसने लगे। बोले, "तुमको दर्शन हो गया।"

"किसका दर्शन हो गया?" नर्मदेश्वर ने विस्मित होकर पूछा।

"जिसका होना था···'महाविद्या' का।" रामसमर्थ ने कहा।

नर्मदेश्वर प्रश्नाकुल होकर उनकी बातें सुनता रहा।

"लिंगम स्वामी की वाणी मिथ्या हो ही नहीं सकती। वे एक प्रकांड ज्योतिषी हैं और उनके ऊपर गुरुदेव की महती कृपा है। संन्यासिनी वही थी, जिसके बारे में शतचंडी यज्ञ के समय तुम्हारी हस्त-रेखाओं को देखकर उन्होंने बताया था। वह संन्यासिनी के रूप में साक्षात् देवी थी।" रामसमर्थ ने अपना पूर्ण विश्वास व्यक्त किया।

उनकी बातों को सुनकर नर्मदेश्वर को लिंगम स्वामी द्वारा कही बातों की स्मृति जाग गई, जिसे वह प्राय: भूल गया था। अगली सुबह उसने लिंगम स्वामी को फोन मिलाया और बदरीनाथ की घटना बताई। घटना के बारे मे जानकर लिंगम स्वामी बहुत प्रसन्न हुए और बोले, "आपकी समर्पित अविरल गुरुभक्ति और नित्य साधना के परिणामस्वरूप ही आपको उस पराशक्ति का साक्षात्कार हुआ। भक्ति-विश्वासपूर्ण साधना एवं गुरु के प्रति अटूट समर्पण से ही जीवन में ऐसी घटनाएँ घटित होती हैं नर्मदेश्वर!"

यह सुनकर नर्मदेश्वर को अपने गुरु की नित्य कृपा का अहसास होने लगा और अतीत में कही उनकी बातें याद आने लगीं, 'इबादत का वो शऊरो-दस्तूर है कि जिंदगी में बड़े-बड़े मामले और हादसे आएँगे, आप उनको रौंदते हुए चले जाएँगे, रास्ते हमवार होते चले जाएँगे और आप समझेंगे कि पता नहीं क्या करिश्मा हो गया, कैसे हो गया और कहाँ से हो गया!' वह चिंतन करने लगा। कोई कैसे कह सकता है कि हाथ की रेखाएँ बोलती नहीं हैं और परमसत्ता प्रत्यक्ष और प्रकट नहीं होती है।

साअ

डी-१२०५/८, इंदिरा नगर,
लखनऊ-२२६०१६ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९८३८५३६६५१

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

दूब और गेहूँ का मामा

● सूर्य प्रकाश मिश्र

सुपरिचित कवि-लेखक। 'छुईमुई सी सुबह', 'वफा के फूल मुसकराते हैं', 'भोर का तारा न जाने कब उगेगा', 'दरबान ऊँघते खड़े रहे', 'सुरीले रंग', 'सूख रहा पौधा सुराज का' (छह गीत-संग्रह)। कौवा पुराण (कुंडली-संग्रह)। स्थानीय सम्मान प्राप्त। शतकाधिक पत्रिकाओं में गीत, कविता, कहानी, व्यंग्य प्रकाशित। संप्रति भारतीय स्टेट बैंक में प्रबंधक पद से सेवा-निवृत्त।

वोट का दम

बारह जने भैंस के जिम्मे
वही कमाने वाली है बस
और सभी के सभी निकम्मे

बिरादरी के जोड़-तोड़ में
अटक गया सारा विकास है
बारह वोटों का ये कुनबा
मुखियाजी का बहुत खास है

बिरादरी का संख्या बल ही
निर्णायक है नए नियम में

जिसकी जितनी आबादी है
उसका उतना ज्यादा हक है
जो पहले का होशियार था
आज वही सबसे बुड़बक है

फिर भी सबकुछ ठीकठाक है
जिए जा रहे सभी भरम में

खतम हो गई नेतागीरी
रोना-धोना काम बचा है
हुए पुरनिया बाबू साहब
पुरखों का बस नाम बचा है

धीरे-धीरे छोड़ रहे हैं
कलई अपनी सभी मुलम्मे

सोच रहे थे देश काल की
वो सारे ही बहुत दुःखी हैं
जो आबादी बढ़ा रहे थे
नए दौर में सूर्यमुखी हैं

चार वोट क्या कर पाएगा
बारह वोट बड़ा है दम में।

कंपोस्ट

कंपोस्ट सफाई साथ-साथ
कस लिया कमर पंचायत ने
खप जाएगी सब घास-पात

स्वच्छता नया अभियान बने
नारा जन-जन को भाया है
मुखियाजी ने मनरेगा से
गड्ढा विशाल खुदवाया है

गोबर की फेंका-फेंकी से
मिल जाएगी सब को निजात

तय हुआ भरी पंचायत में
बस कमियाँ नहीं निकालेगा
हर कोई पशुओं का गोबर
अब गड्ढे में ही डालेगा

कर गईं असर मन की बातें
है सौ बातों की एक बात

अवसर है लाभ उठाने का
मुद्दा इतना गरमाया है
मन-ही-मन खुश हैं मुखियाजी
क्या मौका हाथ में आया है

उस्तरा लिये निकला हजाम
तुम डाल-डाल हम पात-पात

इकलौती भैंस के गोबर से
कुछ-न-कुछ तो मिल जाता है
चिंतित है मड़ई बेचारी
पर मुखिया भाग्यविधाता है

मुँह चिढ़ा रही है लाचारी
फिर हिस्से में मिल गई रात।

झींगुर

खा गए झींगुर पता चलने न पाया
मखमली था कोट पुरखों की निशानी

जतन से रखा हुआ था तह लगाकर
ट्रंक था मजबूत लोहे से बना था
झूलते ताले पे था विश्वास सबको
हर किसी का झाँकना छूना मना था

अब नई पीढ़ी को ये लगने लगा है
व्यर्थ हैं नुस्खे पुराने खानदानी

उग रहा था रोज सूरज बिना नागा
हवा भी बेखौफ अंदर आ रही थी
मगर हर बदलाव से निश्चिंत होकर
झींगुरों की फौज मखमल खा रही थी

धूप दिखलाने की बातें चल रही हैं
फैसला ताकत करेगी आसमानी

उड़ रहे हैं पंख फैलाकर मजे से
किसी के भी मन में कोई डर नहीं है
है उन्हें विश्वास अपनी खासियत पर
रोक पाए कहीं ऐसा घर नहीं है

बहुत देखे जागरण इनसानियत के
फुस्स हो जाती है फिर सारी कहानी।

खर-पतवार

फूल रहा है काँस
खेती की तकदीर में लिखी
तरह-तरह की घास
साँप घास फुफकार रही है
पत्ते तने हुए हैं
दूब और गेहूँ का मामा
अब भी बने हुए हैं

छेक रहा है धूप खेत की
कुनबा लेकर बाँस

हिरनखुरी लहलहा रही है
जड़ें बहुत हैं गहरी
फसलों का हक छीन रही है
छोटी घास सुनहरी

मोथे के चलते दूभर है
लेना गहरी साँस

व्यर्थ हुए सारे परिष्करण
भले नहीं आसार
सारा पानी खाद खेत का
पीते खर-पतवार

तोड़ रहे दम धीरे-धीरे
आशा औ विश्वास।

बी २३/४२ ए.के., बसंत कटरा
(गांधी चौक)
खोजवा, दुर्गाकुंड, वाराणसी-२२१००१
दूरभाष : ९८३९८८८७४३

संगीतकार के रूप में बूढ़े एंड्रे का अनुभव

मूल : **थॉमस हार्डी**

अनुवाद : **सुमन वाजपेयी**

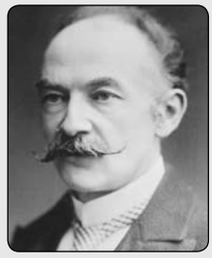

सुप्रसिद्ध अंग्रेजी लेखक थॉमस हार्डी का जन्म २ जून, १८४० को इंग्लैंड में हुआ था। उनके पिता एक राजमिस्त्री और बिल्डर थे; उनकी माँ ने पढ़ने और किताबों का शौक अपने बेटे को दिया। १८६२ तक, जब वह २२ वर्ष के थे, हार्डी आर्थर ब्लॉमफील्ड के कार्यालय में ड्राफ्ट्समैन के रूप में काम करने के लिए लंदन चले गए। हार्डी ने ७७ वर्ष की उम्र में लेखन में अपना हाथ आजमाया और एक अभ्यासशील वास्तुकार के रूप में वर्षों तक लिखते रहे। उनके पहले उपन्यास की पांडुलिपि 'द पुअर मैन एंड द लेडी' (१८६७-६८) को कई प्रकाशकों ने अस्वीकार कर दिया था, लेकिन एक संपादक जॉर्ज मेरेडिथ ने उन्हें प्रोत्साहित किया। उन्होंने 'कॉर्नहिल' मैगजीन में एक कहानी 'ए पेयर ऑफ ब्लू आइज' की ११ मासिक किस्तों का अनुबंध किया। इंग्लैंड के दो नए उपन्यासों, 'द रिटर्न ऑफ द नेटिव' (१८७८) और 'द मेयर ऑफ कैस्टरब्रिज' (१८८६) ने हार्डी को एक सशक्त लेखक के रूप में स्थापित किया। हार्डी ने अपने शेष जीवन में लघु कहानियाँ, कविताएँ और नाटक लिखे। 'द डायनेस्ट्स : ए ड्रामा ऑफ द नेपोलियन वॉर्स' (१९०३-०८) और 'विंटर वर्ड्स' (१९२८), जो कि एक कविता खंड है। उन्होंने विभिन्न विषयों पर लगभग ९०० कविताएँ लिखीं। यहाँ उनकी एक रोचक कहानी का हिंदी रूपांतरण दे रहे हैं।

मैं उस समय गायक मंडली के लड़कों के दस्ते में था और हमें व वादकों को उस क्रिसमस हफ्ते में जमींदार के घर (मैनर हाउस) पर जमींदार के लोगों और आगंतुकों (जिनमें पादरी, लॉर्ड और लेडी बेक्सबाई—और मैं नहीं जानता कौन-कौन थे) के लिए गाने व बजाने के लिए उपस्थित होना था। और उसके बाद, जैसा कि हम हमेशा करते थे, खाना खाने के लिए नौकरोंवाले हॉल में जाना था।

ऐंड्रयू जानता था कि यह प्रथा थी और जब हम निकलने लगे थे, हमसे मिलने पर वह हमसे बोला, ''ओह! मैं गाय के मांस, टर्की (पीरू), आलूबुखारे की पुडिंग और बीयर पीने के लिए कितना लालायित हूँ, जिसे खाने तुम खुशकिस्मत लोग अभी जा रहे हो! एक व्यक्ति कम या ज्यादा होने से जमींदार को फर्क नहीं पड़ेगा। मेरी उम्र ज्यादा है, जिसकी वजह से मैं गानेवाले लड़कों की श्रेणी में नहीं आ सकता हूँ और चूँकि इतनी ज्यादा दाढ़ी है कि लड़कियों की मंडली में भी शामिल नहीं हो सकता हूँ। क्या तुम मुझे एक बेला दे सकते हो, ताकि मैं तुम लोगों के साथ बैंड बजानेवाले की तरह आ सकूँ?''

हम उसके प्रति कठोर नहीं होना चाहते थे, इसलिए उसे एक पुराना बेला दे दिया; हालाँकि एंड्रयू को 'जाएंट ओ' केरनेल के अलावा संगीत के बारे में कुछ भी नहीं पता था और पुराने वाद्य से सज्जित वह हम सबके साथ निर्धारित समय पर जमींदार के घर के लिए चल पड़ा और अपने बेला को बगल में दबाए हुए निर्भीकता से चलने लगा। संगीत की पुस्तकों को खोलने और स्वरों पर सही जगह पर रोशनी डालने के लिए मोमबत्तियों को खिसकाने का काम करते हुए वह बहुत स्वाभाविकता दिखा रहा था। और जब तक हमने 'वाइल शेपार्ड्स वॉच', 'स्टार एराइज' और 'हार्क द ग्लैड साउंड' गाया और बजाया, सबकुछ सुचारु रूप से चल रहा था।

फिर जमींदार की माँ—एक लंबी व रूपवती बूढ़ी महिला, जिसे चर्च से संगीत में ज्यादा दिलचस्पी थी—ने अचानक एंड्रयू से कहा, ''मैं देख रही हूँ कि तुम बाकी लोगों के साथ वाद्य नहीं बजा रहे हो। ऐसा क्यों?''

एंड्रयू जिस दुविधा में था, उसे देखकर मंडली के सारे लोग जमीन में धँसने को तैयार थे। हम देख सकते थे कि वह पसीने में भीग गया और वह उस स्थिति से कैसे बाहर निकला, हमें नहीं पता।

''मेरे साथ एक दुर्घटना घटी, मैडम।'' एक बच्चे की तरह निरीह-सा झुकते हुए उसने कहा, ''रास्ते में आते हुए मैं गिर गया और मेरी गज टूट गई।''

''ओह, यह सुनकर बहुत दु:ख हुआ। क्या वह ठीक नहीं हो सकती?'' उन्होंने कहा।

''अरे नहीं, मैडम, वह बिल्कुल किरच-किरच हो गया है।''

''देखती हूँ कि मैं तुम्हारे लिए क्या कर सकती हूँ।'' उन्होंने कहा।

और फिर लगा कि अब सबकुछ खत्म हो गया है और फिर हमने बजाया

''रिजॉयस, ये ड्राउसी मॉर्टल्स ऑल!'' और जैसे ही वह खत्म हुआ, उन्होंने एंड्रयू से कहा, ''मैंने अटारी में किसी को भेजा था, जहाँ हमारे कुछ पुराने वाद्य रखे हैं। वहाँ मुझे एक गज मिल गया।'' उन्होंने उस बेचारे एंड्रयू को वह गज सौंप दी, जिसे यह तक नहीं पता था कि उसे किस सिरे से पकड़ना चाहिए।

''अब हमारे पास पूरी संगत है।'' उन्होंने कहा।

अपनी किताब के सामने जब एंड्रयू गायकों के वृत्त में खड़ा हुआ तो उसका चेहरा किसी सड़े हुए सेब जैसा लग रहा था; क्योंकि यजमानी में केवल एक ही व्यक्ति था, जिससे सब डरते थे और वह थी यह शुक नासिकावाली महिला। हालाँकि अगले व्यक्ति के थोड़े पीछे खड़े होकर बिना तारों को छुए अपने गज को आगे-पीछे करते हुए उसने बजाना शुरू करने का दिखावा किया, ताकि ऐसा लगे कि वह धुन के साथ पूरे दिल से झूम रहा है। यह सवाल था कि अगर वह ऐसा ठीक से नहीं कर पाया, अगर जमींदार के घर आया कोई आगंतुक (पादरी के अलावा और कोई नहीं) यह न देखे कि उसने बेला उलटा पकड़ा हुआ है और ढिबरी उसकी ठोड़ी के नीचे है और पीछे का सारा भाग उसके हाथ में है और वे ये सोचकर कि बजाने का यह कोई नया तरीका है, उसके चारों ओर एकत्र न होने लगे।

इससे हर चीज प्रकट हो गई। जमींदार की माँ ने एंड्रयू को नीच व धोखेबाज कहकर घर से बाहर निकाल दिया। संगीत के तालमेल में बहुत ज्यादा बाधा आ गई। जमींदार ने घोषणा की कि वह उसी दिन अपना कॉलेज छोड़ दे। हालाँकि, जब हम नौकरों के हॉल में पहुँचे तो वहाँ एंड्रयू बैठा हुआ था, जिसे जमींदार के आदेश से आगे से प्रवेश न करने देने पर जमींदार की पत्नी के आदेश से पीछे के दरवाजे से वहाँ लाया गया था। और उसके कॉलेज छोड़ने के बारे में कुछ सुनने को नहीं मिला—पर उस रात के बाद एक संगीतकार के रूप में सार्वजनिक रूप से एंड्रयू ने फिर कभी नहीं बजाया; और अब उसकी मृत्यु हो चुकी है। बेचारा आदमी, जैसा कि हम सबके साथ भी होगा!

इस अंक की चित्रकार

आस्था चौहान

नवोदित चित्रकार-रचनाकार। कविता, कहानी लेखन और चित्रकारी का विशेष शौक। रेखाचित्र व रचनाएँ चकमक, बाल किलकारी, प्लूटो, बाल भास्कर, बच्चों का देश, अभिनव बालमन, हिमप्रस्थ, सोमसी, गिरिराज आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। मुखचित्र 'नन्हे सम्राट' और 'अभिनव बालमन' पत्रिका के कवर पृष्ठ पर भी स्थान पा चुके हैं। किलकारी पुस्तकालय, बिहार की कविता प्रतियोगिता 'चक धूम-धूम समर कैंप २०२१' में प्रथम स्थान प्राप्त कर पुरस्कृत। संप्रति महावीर पब्लिक स्कूल, सुंदरनगर (हि.प्र.) में दसवीं कक्षा की छात्रा।

संपर्क : सुपुत्री श्री पवन चौहान
गाँव-डाक-महादेव, तहसील-सुंदरनगर,
जिला-मंडी-१७५०१८ (हि.प्र.)
दूरभाष : ९८०५१४०२२४२

''मैं पुरानी गायन-मंडली को उनके बेलों और बड़े वायलिनों को भूल चुका हूँ।'' घर आनेवाले ने ध्यानमग्न होते हुए कहा, ''क्या वे अभी भी पुराने की तरह आज भी गा-बजा रहे हैं?''

''उसका भला हो!'' छप्पर डालनेवाले क्रिस्टोफर ट्विंक ने कहा, ''इन बीस वर्षों में उन लोगों ने क्या किया? अब चर्च में एक युवा मद्य त्यागी ऑर्गन बजाता है और बहुत अच्छा बजाता है; हालाँकि वह उतना अच्छा संगीत नहीं है, जो पुराने समय में होता था; क्योंकि ऑर्गन ऐसा है, बिंच के साथ चलता है और युवा मद्य त्यागी कहता है कि वह अपनी बाँहों को बिल्कुल अपने से दूर न रखे।''

''फिर उन्होंने यह परिवर्तन किया क्यों?''

''कुछ जो चलन की वजह से और कुछ इसलिए, क्योंकि पुराने संगीतकार किसी तरह की मुसीबत में फँस गए थे। वह भी एक बड़ी मुसीबत में—है न जॉन? मैं उस बात को कभी नहीं भूल सकता, कभी नहीं! उन्होंने पूर्णतया चर्च के अफसरों की भूमिका ऐसे गँवा दी, जैसे कि वे कभी उस भूमिका में थे ही नहीं।''

''यह उनके साथ बहुत ही बुरा हुआ।''

''हाँ।'' छप्पर डालनेवाले ने बीते समय पर ऐसे एकाग्रता से ध्यान देते हुए कहा जैसे कि वह अभी गुजरा हो और अपनी बात जारी रखी।

आदिवासी भील जनजाति के लोगों की आस्था एवं विश्वास

● छत्रसिंग काल्या तडवी

शोधार्थी। शिक्षा एम.ए. (हिंदी), बी.एड., एम.फिल.सेट, पी-एच.डी. (कार्यरत)। सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, श्री आसारामजी भांडवलदार कला, वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालय, औरंगाबाद (महा.)।

हमारा देश विविधताओं से सजा हुआ देश है। उसकी यह विविधता जाति, धर्म, भाषा एवं प्रांतों के आधार पर स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। देश में हर स्तर पर भले ही विविधता दिखाई देती हो, लेकिन उसी विविधता में देश की एकता छुपी हुई है। यही एकता भारतीय संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता है। भारतीय संस्कृति में अनेक जाति एवं धर्म दिखाई देते हैं। जिसमें एक आदिवासी भील जनजाति है, जो अपना अलग एवं विशिष्ट अस्तित्व रखती है। भीलों की अपनी संस्कृति, परंपरा, पर्व-त्योहार एवं मान्यताएँ हैं। भील जनजाति भारत की आदिवासी जनजातियों में से एक है। देश के अनेक प्रांतों में आदिवासी भील समाज बसा हुआ है। भील जनजाति मुख्य रूप से चार राज्यों में निवास करती है। जिसमें महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान और मध्य प्रदेश आदि राज्यों में पाई जाती है। यदि समग्र रूप से देखा जाए तो यह चार राज्य ही भीलों का घर है। इनका बाहुल्य इन राज्यों की सीमा पर है, जैसे राजस्थान, गुजरात एवं मध्य प्रदेश की सीमा पर एवं दूसरा जमाव गुजरात और महाराष्ट्र की सीमा पर है। वैसे भील जनजाति अन्य राज्यों कर्नाटक, त्रिपुरा एवं आंध्र प्रदेश जैसे अनेक राज्यों में भी पाई जाती है। लेकिन दूसरे राज्यों में यह समुदाय अल्पसंख्यक है। पूरे भारत देश में आदिवासी प्रांत अपनी विशिष्ट पहचान रखता है। भील जनजाति अनादिकाल से प्राकृतिक पर्यावरण में पल्लवित एवं पुष्पित होती रही है। प्रकृति ही मानो इस जनजाति का जीवनाधार है। प्राकृतिक एवं पर्वत-पहाड़ियों पर निवासित होने के कारण इनके रीति-रिवाज, देवी-देवता, मेले एवं पर्व-त्योहार आदि। सभी में प्रकृति का प्रभाव स्पष्टत: परिलक्षित होता है। किसी भी बोली भाषा के साहित्य को देखना है, तो उस बोली भाषा के लोक साहित्य को देखना अनिवार्य है। बिना लोक साहित्य का साहित्य निष्प्राण लगता है। लोक साहित्य को देखना है तो उस समाज के लोकगीत, लोककथा, रूढ़ि, परंपरा, पर्व-त्योहार, रीति-रिवाजों एवं संस्कृति को समझना बहुत जरूरी है।

पर्व-त्योहार : मनुष्य की विविध भावनाओं की पूर्ति त्योहार करते हैं। गरीब से गरीब मनुष्य भी पर्व-उत्सव एवं त्योहार के दिन आनंदित होता है। क्योंकि व्यक्ति के मन से अभाव नष्ट करके सामूहिक संगठन बनाने में यह त्योहार क्रियाशील होते हैं। इस दृष्टि से पर्व-उत्सव एवं त्योहार के द्वारा लोक परंपराएँ बनी रहती हैं। खानदेश के आदिवासी भील समाज के त्योहार अपनी विशिष्ट पहचान रखते हैं। उसका सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक जीवन विविध कला कौशल के लिए प्रसिद्ध रहा है। खानदेश के सातपुड़ा में मनाए जाने वाले त्योहार तो सभी दृष्टि से अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। त्योहार के बारे में डॉ. श्रीराम शर्मा लिखते हैं—"किसी भी समाज की धार्मिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक स्थिति का परिचय हमें क्षेत्र विशेष में मनाए जाने वाले त्योहार एवं मेलों से प्राप्त होता है। यह त्योहार समाज में मेल-जोल बढ़ाने वाली कड़ियाँ हैं। पारिवारिक झगड़ों एवं अन्य घरेलू कारणों से हमारे अंदर चाहे कितना ही वैमनस्य क्यों न हो, लेकिन ऐसे अवसरों पर सारी बातें भूलकर लोग एक हो जाते हैं और प्रेमभाव से परस्पर उठने-बैठने एवं खाने-पीने के लिए स्वयमेव तैयार हो जाते हैं।" इससे यह स्पष्ट होता है कि पर्व एवं त्योहार व्यक्तिगत, जातिगत, सामाजिक एवं सांस्कृतिक एकता के प्रतीक हैं।

जब से सृष्टि की उत्पत्ति हुई होगी और मानव जाति का जन्म हुआ होगा, तब से आदिवासी लोग प्रकृति पूजा करते आए हैं। आदिवासी भीलों का जीवन प्राकृतिक जीवन है। इसलिए उनके पर्व-उत्सव एवं त्योहार में प्राकृतिक उपादनों से प्रगाढ़ आस्था जुड़ी हुई है। यहाँ धरती, जल, जंगल, पहाड़, आकाश, सूरज, चाँद, अग्नि, वायु, पशु-पक्षी, नाग, प्राणी, जीव-जंतु, अनाज, पेड़-पौधे आदि की पूजा श्रद्धापूर्वक होती है। आदिवासी

भील समाज में पर्व एवं त्योहार का आयोजन वर्षा के विशेष दिनों में होता है। ऋतु परिवर्तन, फसल बुआई तथा कटाई के बाद प्रकृति परिवर्तन या किसी देवी-देवताओं की स्मृति के अवसर पर आदिवासी भील लोग पूरी श्रद्धा के साथ पूजा-अर्चना करते हैं। भील जनजाति की संस्कृति अनेक विशेषताओं से भरी हुई है। उनके रीति-रिवाज, रूढ़ि-परंपराएँ, पर्व एवं त्योहार आदि पर्यावरण के साथ जुड़े हुए हैं। आदिवासी भील समाज में मनाए जाने वाले अनेक पर्व-उत्सव एवं त्योहार निम्नानुसार हैं—

ओल पूजा (हल पूजा) : यह त्योहार बारिश शुरू होने से पहले जून माह में संपन्न होता है। जिस परिवार में यह पूजन रहता है, उस घर के पुरुष पाँच दिन पहले नदी पर जाकर दही से सिर को धोते हुए स्नान करते हैं और उसके कपड़े एवं चादर भी धोते हैं। वह पुरुष पाँच दिन तक यानी कि हल पूजा होने तक अलग रहते हैं। जिस व्यक्ति के घर हल पूजन रहता है, वह अपने रिश्तेदारों को आमंत्रित करता है। इस त्योहार के बारे में प्रो. डी.जी. पाटिल लिखते हैं, "जिन साधनों से अनाज का उत्पादन किया जाता है, उनका पूजन इस अवसर पर किया जाता है।" यह पूजा विधि करने से पहले एक जगह पर गोबर से लीपा जाता है। उसके बाद गाँव के पुजारी द्वारा विशिष्ट पूजा विधि अपने मंत्रों द्वारा की जाती है। सबसे पहले पुजारी अगरबत्तियाँ जलाता है और हल को सिंदूर लगाकर पूजा की शुरुआत करता है। पुजारी अपने मंत्रों द्वारा हल की पूजा करता है। इस पूजा विधि के लिए एक मुर्गा एवं एक मुर्गी, अगरबत्तियाँ, सिंदूर, एक नारियल, एक सुपारी, एक लोटा भर महुआ की शराब, एक अंडा, मोरधन का अनाज, बेल के पत्ते, पानी, पलाश के पत्ते आदि सामग्री जोड़ी जाती हैं।

इस पूजा विधि में मुर्गे की बलि दी जाती है और मुर्गी को छोड़ दिया जाता है। घर के स्त्री एवं पुरुष मिलकर पाँच या सात लोगों को बैठाकर पुजारी गोबर, सिंदूर और मोरधन का अनाज माथे पर लगाता है और आशीर्वाद देता है। यह पूजा करने का उद्देश्य है कि गाय-बैल अच्छे रहें, बारिश अच्छी हो, फसल अच्छी निकले और खेत में काम करते समय हमें और अपने बैल को कोई हानि न पहुँचे। इसलिए यह पूजा विधि हर साल की जाती है। यह पूजा समाप्त होने पर जो लोग शराब पीते हैं, उन्हें शराब दी जाती है और जो नहीं पीते, उन्हें चाय-पानी दिया जाता है। उसके बाद सभी उपस्थित लोगों को खाना खिलाया जाता है। जो लोग मांस सेवन करते हैं, उन्हें मुर्गे का मांस दिया जाता है और जो शाकाहारी हैं, उन्हें दाल-चावल खाने के लिए दिया जाता है। खाना खाने के बाद सभी लोग अपने-अपने घर चले जाते हैं। इस तरह से आदिवासी भील जनजाति में हल पूजन का त्योहार मनाया जाता है।

नीला नंदूरा की पूजा : वर्षा का आगमन होने पर जब प्रकृति माँ हरी साड़ी पहन लेती है और पर्वतराज भी हरा वस्त्र धारण कर लेता है। सभी ओर हरियाली ही हरियाली दिखाई देने लगती है और पूरा पर्यावरण प्रसन्न हो जाता है, ऐसे मोहक प्रसन्न माहौल में आदिवासी भील जनजाति के लोग हरी सब्जी खाने के लिए नीला नंदूरा की (हरी घास) की पूजा एवं अर्चना करते हैं। इस शुभ अवसर पर गाँव के सभी पुरुष इकट्ठा होते हैं और सभी पुरुष एवं पुजारी गाँव के 'बाघ देव' के स्थान पर जाते हैं। वहाँ एक जगहों पर गोबर से लीपा जाता है, उसके बाद एक मिट्टी का बाघ बनाया जाता है और उसकी पूजा की जाती है। गाँव के दो पुरुष को 'बाघ' बनाया जाता है और उसे पुजारी आशीर्वाद देते हुए पूजा करता है और बाद में उसे भगाया जाता है। इस पूजा विधि के लिए मुर्गे एवं बकरे की बलि दी जाती है। बाद में सभी पुरुष को महुआ की शराब देकर गाँव का पुलिस पाटील सबका स्वागत करता है। गाँव के सभी परिवार के सदस्यों को मुर्गे एवं बकरे का थोड़ा-थोड़ा मांस और भेंडी एवं माटले की हरी सब्जी के पत्ते दिए जाते हैं। उसे भीली बोली में 'पाती' कहा जाता है। वह पाती लेकर सभी लोग अपने-अपने घर चले जाते हैं। इस त्योहार के माध्यम से आदिवासी भील लोगों की यह धारणा है कि अपने गाँव में हमेशा प्रसन्नता रहे, पालतू जानवरों को हरी घास मिले, संकट समय ग्रामदेवता गाँव की रक्षा करें, इस हेतु यह पूजा विधि की जाती है। इस दिन से सभी लोगों को हरी सब्जी खाने की अनुमति मिलती है। इसलिए हर साल आदिवासी भील लोग नीला नंदूरा की पूजा करते हैं।

बाघदेव पूजन : आदिवासी भील समाज के प्रमुख त्योहारों में बाघदेव पूजन है, उसे भीली बोली में वागदेव पूजन कहते हैं। यह त्योहार अगस्त, सितंबर माह में संपन्न होता है। आदिवासी भील जनजाति के लोग 'बाघ' को अपना प्रमुख देवता मानते हैं। जंगल या पहाड़ी क्षेत्र में निवास करने के कारण बाघ जैसे हिंसक प्राणी भी आते हैं, परंतु शत्रु को मित्र मानना उनकी अपनी अनोखी रीत है। बाघ जंगल का राजा है और पूरे प्राणियों पर उसका अंकुश बना रहता है, वह पहाड़ी क्षेत्र का रक्षक है। क्योंकि हमारे पालतू जानवरों के साथ वह अपना भी संरक्षण करता है। अभी तक हमें और हमारे जानवरों को बाघ ने सुरक्षित रखा और आगे भी सुरक्षित रखेंगे, ऐसी भोली-भाली धारणा भील लोगों की है। इसलिए आदिवासी भील लोग उस पर आस्था एवं विश्वास रखते हुए बाघ देव की पूजा-अर्चना करते हैं।

बाघदेव पूजन का त्योहार मनाने से पहले सभी गाँववासियों की ग्राम सभा बुलाई जाती है। ग्राम सभा में पाटील एवं प्रतिष्ठित वृद्ध लोग विचार-विमर्श करते हैं। इस ग्राम सभा में कुछ महत्त्वपूर्ण निर्णय लिये जाते हैं, जिनमें सभी गाँववासियों से चंदा इकट्ठा करना और पूजा विधि की तिथि निश्चित करने का निर्णय प्रमुख होता है। बाद में चंदा इकट्ठा भी करते हैं, जिसके द्वारा मुर्गे एवं बकरे के साथ-साथ बाघदेव पूजन की आवश्यक चीजें खरीदते हैं। इस त्योहार के बारे में पुजारी बोंडा तडवी

कहता है, "बाघदेव के नाम पर एक बकरा, बेनी हेजा (राजा फांटा एवं गांडा ठाकुर) के नाम पर एक मुर्गी, ग्राम देवता के नाम पर एक मुर्गा, कुलदेवी याहा मोगी माँ के नाम पर एक मुर्गी एवं एक अंडा, अगरबत्तियाँ, सिंदूर, पलाश के पत्ते, बेल के पत्ते, पानी एवं अनाज आदि सामग्री इस पूजा के लिए जोड़ी जाती है।" गाँव में एक स्थान पर बाघदेव की स्थापना की हुई होती है, उसी स्थान पर पूजा की जाती है। बाघदेव पूजन के दिन सभी गाँववासी थोड़ा-थोड़ा अनाज लेकर जहाँ पर बाघदेव की पूजा होती है, वहाँ जाते हैं। पुजारी अपने मंत्रों द्वारा बाघदेव की पूजा करता है। इस पूजा विधि की शुरुआत से लेकर अंत तक देखभाल करने का काम पुलिस पाटील का होता है। पूजा विधि होने के बाद बकरे एवं मुर्गे की बलि दी जाती है। बाद में गाँव के सभी परिवार को मुर्गे एवं बकरे का मांस समान हिस्से में बाँटकर दिया जाता है। सभी लोग अपना-अपना मांस का हिस्सा लेकर घर लौटते हैं। इस प्रकार आदिवासी भीलों का प्रमुख त्योहार बाघदेव पूजन संपन्न होता है।

इस पूजा की शुरुआत करने से पहले पुजारी देवरूंगहाल (घास) से पूरे खलवाडी में पानी की बूँदें डालकर शुद्ध करता है और उसके बाद पूजा विधि की शुरुआत करता है। यह पूजा कोणी (अनाज) माता, अनहीर देव, बारामेघ (वर्षा), सूरज, चाँद, धरती माँ, कुलदेवता, ग्राम देवता जैसे कई देवी-देवताओं एवं प्रकृति के नाम पर की जाती है। यह पूजा संपन्न होने के बाद सभी उपस्थित लोगों को खाना खिलाया जाता है। खाना खाने के बाद सभी लोग अपने-अपने घर चले जाते हैं। इस तरह से आदिवासी भील लोग खेती एवं खलवाड़ी पूजन का त्योहार मनाते हैं।

गोवान पूजा (गो पूजा) : यह त्योहार सितंबर माह में संपन्न होता है। आदिवासी भील समाज 'गोवान पूजा' को अपनी रूढ़ि-परंपरा के अनुसार मनाता है। सबसे पहले यह पूजा विधि करने के लिए परिवार के सभी सदस्य बैठकर बातचीत करते हैं और तय करते हैं कि किस दिन यह पूजा करनी है। पाँच दिन के लिए परिवार के सभी पुरुष एवं पुजारी स्नान करने के लिए नदी पर जाते हैं। सभी पुरुष नदी में खड़े होकर पूजा करते हैं, उसके बाद दही से सिर को धोते हुए स्नान करते हैं और उनके कपड़े एवं चादर भी धोते हैं। वह पाँच दिन तक यानी की गोवान पूजा होने तक अलग रहते हैं। स्नान करने के बाद उसी दिन महुआ के फूल भिगोने के लिए मिट्टी के घड़े में रखे जाते हैं। उसकी पाँच दिन में शराब निकालकर उसी दिन यह पूजा विधि का त्योहार मनाया जाता है। इस त्योहार के दिन सभी रिश्तेदार एवं गाँववासियों को आमंत्रित किया जाता है। शाम को सबसे पहले दरवाजे पर पूजा की जाती है और उसके बाद बेल के पत्ते से कुएँ के पानी की बूँदें पूरे घर एवं गाय-बैल को बाँधने की जगहों पर पानी की बूँदें छिड़कते हैं। उसके बाद गाय के गोठे में एक जगह पर गोबर से लीपकर उसी जगह पर पूजा की सभी चीजें रखी जाती हैं और पूजा विधि की शुरुआत की जाती है।

यह पूजा कुनबी (किसान) राजा अपने पालतू जानवर गाय-बैल, बकरियाँ एवं भैंसें पलती-बढ़ती रहें, सुरक्षित रहें तथा हमेशा दूध, मक्खन एवं घी मिलता रहे। इस आस्था के साथ आदिवासी भील लोग पूरी श्रद्धा एवं विश्वास के साथ गो पूजन करते हैं। इस पूजा विधि के बारे में पुजारी धाणक्या तडवी कहता है, "यह पूजा विधि प्रत्येक गाँव में थोड़े-बहुत परिवर्तन के साथ की जाती है। क्योंकि जिसके-उसके नगरी के देवता अलग-अलग होते हैं, जिसमें कोई बाघदेव के नाम पर गोवान पूजन करते हैं तो कोई याह पांडोर, गवली राजा, बाहगोरया, बेनू हेजा, काटाला बाबा, कोडाजा बाबा, हिराजा बाबा, ताराहमाल, बाकुंबह्या आदि। अपनी-अपनी नगरी के देवता हैं, उसके नाम पर यह पूजा विधि करते हैं। अगर गवली राजा के नाम पर गोवान पूजा करना है तो इसके लिए दो मिट्टी के घड़े, एक तुंबड़ी, दस बोतलें, सभी में महुआ की शराब भर के और चौदह मुर्गे, एक नारियल, अगरबत्तियाँ, बेल के पत्ते, डोवी, जिससे शराब की बूँदें डालते हैं, पलाश के पत्ते, पानी, मोरधन का अनाज आदि सामग्री जोड़ी जाती है और अनेक देवी-देवताओं के नाम पर मुर्गे की बलि दी जाती है।" यह पूजा करने का उद्देश्य है कि पालतू जानवरों को जंगल में घास खाने के लिए छोड़ दिया जाता है। इसलिए जंगल के हिंसक प्राणी से अपने जानवर सुरक्षित रहने चाहिए और उसके साथ-साथ हमें भी कोई हानि न पहुँचे। इसलिए जंगल के राजा बाघदेव को उनकी रक्षा के लिए रखा जाता है। इसलिए साल में एक बार बाघदेव एवं अन्य देवी-देवताओं के नाम पर पूजा की जाती है। यह पूजा होने के बाद ही आदिवासी भील लोग जंगल या खेत में मिलने वाली हरी सब्जी और नया अनाज सेवन करते हैं। रात में यह पूजा विधि संपन्न होने के बाद जो पुरुष शराब पीते हैं, उन्हें शराब दी जाती है। उसके बाद सभी उपस्थित लोगों को प्रसाद के रूप में खाना खिलाया जाता है। खाना खाने के बाद सभी लोग घर के सदस्य की अनुमति लेकर अपने-अपने घर चले जाते हैं। इस तरह से गोवान पूजन का त्योहार आदिवासी भील लोग पूरी श्रद्धा एवं उत्साह के साथ मनाते हैं।

खेती एवं खलवाड़ी की पूजा : आदिवासी भील समाज के लोग खेती एवं खलवाड़ी की भी पूजा करते हैं। जून माह में जब अनाज बोया जाता है तब भी पूजा करके शुरुआत करते हैं और फसल कटाई के समय भी खेत की पूजा की जाती है। सभी फसल की कटाई होने के बाद जब खलवाडी में लाकर अनाज निकाला जाता है, तब भी पूजा विधि की जाती है। गाँव के पुजारी द्वारा यह पूजा की जाती है। जिस परिवार में खलवाड़ी की पूजा रहती है वह फल्या या गाँव के लोगों को आमंत्रित करते हैं। यह पूजा विधि शाम को संपन्न होती है, क्योंकि सभी पुरुष शाम को उपस्थित रहकर इस उत्सव का आनंद ले सकें। इस पूजा के बारे में पुजारी गोमा तड़वी कहता है, "इस पूजा के लिए नारियल, सिंदूर, गाय का गोबर, पाँच मुर्गे, एक अंडा, चावल, तामण पेड़ के पत्ते, अगरबत्तियाँ, पानी, एक लोटा भर महुआ की शराब, पलाश के पत्ते, बेल के पत्ते आदि सामग्री जोड़ी जाती है।" इस पूजा की शुरुआत करने से पहले पुजारी देवरूंगहाल (घास) से पूरे खलवाडी में पानी की बूँदें डालकर शुद्ध करता है और उसके बाद पूजा विधि की शुरुआत करता है। यह पूजा कोणी (अनाज)

माता, अनहीर देव, बारामेघ (वर्षा), सूरज, चाँद, धरती माँ, कुलदेवता, ग्राम देवता जैसे कई देवी-देवताओं एवं प्रकृति के नाम पर की जाती है। यह पूजा संपन्न होने के बाद सभी उपस्थित लोगों को खाना खिलाया जाता है। खाना खाने के बाद सभी लोग अपने-अपने घर चले जाते हैं। इस तरह से आदिवासी भील लोग खेती एवं खलवाड़ी पूजन का त्योहार मनाते हैं।

आठीवटी (नए अनाज की पूजा) : आदिवासी भील जनजाति में नए अनाज की पूजा गाँव के हर परिवार में की जाती है। यह पूजा विधि प्रकृति परिवर्तन के साथ नए अनाज की निर्मिती होती है और नया अनाज घर में आता है। लेकिन नया अनाज सेवन करने से पहले गाँव के पुजारी द्वारा विशिष्ट पूजा विधि की जाती है। इस पूजा विधि को भीली भाषा में 'आठीवटी' कहा जाता है। यह पूजा करने से पूर्व पाँच दिन पहले परिवार के सभी पुरुष स्नान करने के लिए नदी पर जाते हैं। स्नान करने के बाद घर आकर उसी दिन महुआ के फूल भिगोने के लिए रख दिए जाते हैं। उसकी पाँच दिन में शराब निकालकर उसी दिन रात में यह पूजा की जाती है। यह पूजा घर में ऊखल पर की जाती है। सबसे पहले ऊखल की जगह को गोबर से लीपा जाता है। उसके बाद चावल का धान ऊखल में भर दिया जाता है और उसी जगह पर बाँस की कोठी एवं अनाज पीसकर खाने की सभी चीजें रखी जाती हैं, जिसमें मूसल, झाड़ू, सूपा, टोकरी आदि। उसके साथ-साथ सभी प्रकार का अनाज मक्का, ज्वार, मोरधन आदि भी रखा जाता है। साथ ही साथ महुआ की शराब एवं आरती की थाली में दीया जलाकर रखा जाता है। उसके बाद इन सभी वस्तुओं और नए अनाज की पूजा की जाती है।

इस पूजा की शुरुआत करते समय पुजारी रायसिंग वसावे कहता है—"कुलदेवी याहा मोगी माता का नाम लेते हुए कोणी-कांगड़ी, जोहन-बरकत, उरवत-पूरवत, निसबेन-कसबे, वासडी-फूसडी या आमुह आपती चालजी या आज आमु ताआ गाराह आपताहा।" अर्थात् कुलदेवी माँ हम आपकी पूजा करते रहेंगे, लेकिन हमारे घर में आप अनाज की कमी मत होने देना। उसके साथ-साथ गाय-बैल एवं सभी पालतू जानवर और अनाज बढ़ता रहे, हमें बरकत मिलती रहे तथा सभी परिवार पलता-बढ़ता रहे। इसलिए प्रकृति और सभी देवी-देवताओं की पूजा अर्चना करते हैं। पूजा समाप्त होने के बाद सभी लोगों को खाना खिलाया जाता है, जो मांस सेवन करते हैं, उसे मांस खाने को दिया जाता है और जो नहीं खाते शाकाहारी है, उन्हें दाल-चावल खाने के लिए दिया जाता है। खाना खाने के बाद सभी लोग अपने-अपने घर चले जाते हैं। इस तरह से आदिवासी भील जनजाति के लोग नए अनाज का स्वागत करते हुए पूजा अर्चना करते हैं।

कहा जा सकता है कि आदिवासी भील समाज की अपनी संस्कृति है। इसी संस्कृति के आधार पर इस समाज के नीति नियम बनाए गए हैं। जिसके आधार पर वह अपना जीवन जीता है। आदिवासी भील समाज की जीवन पद्धति उनकी अपनी संस्कृति के अनुसार ही दिखाई देती है। इन जनजाति की सामाजिक रूढ़ियाँ इनकी परंपराओं के आधार पर बनी हुई हैं। परंपरा से चलते आए अपने सामाजिक नियमों का पालन आज भी यह जनजाति पूरी श्रद्धा से करती दिखाई देती है। आदिवासी भील समाज अपने पर्व-उत्सव एवं त्योहार अपनी रूढ़ि-परंपराओं के अनुसार ही मनाते हैं।

श्री आसारामजी भांडवलदार कला,
वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालय, देवगाँव (रंगारी),
तहसील-कन्नड, जिला-औरंगाबाद-४३११९५ (महा.)
दूरभाष : ८२७५१०११७२, ९८३४३६३७३७

दोहे

● सुबोध श्रीवास्तव

मन के दरवाजे पड़े, जानें कब से बंद।
दुनिया भर में घूमकर, ढूँढ़ रहे आनंद॥

ज्यों-ज्यों बढ़ती जा रही, जीवन की रफ्तार।
कदम-कदम पर हो रही, मानवता की हार॥

बापू तेरे देश का, हुआ अजब सा हाल।
खुशहाली सब मिट रही, जनता है बेहाल॥

धीरे-धीरे खुल रही, घोटालों की पोल।
वो अब भी बतला रहे, अपने को अनमोल॥

सुख-सुविधाएँ बाँटते, दुनिया के बाजार।
फिर भी मन के चैन को, मानव है लाचार॥

नेता सब होते गए, दुनिया में मशहूर।
वैसे ही बेबस रहे, बेचारे मजदूर॥

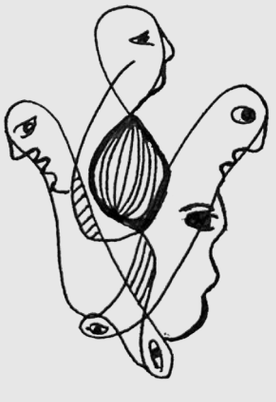

ईश्वर ने मानव रचा, करने को कुछ काम।
मानव ही करने लगा, मानवता बदनाम॥

आजादी तो मिल गई, मिला नहीं अधिकार।
पहले हम लाचार थे, अब भी हैं लाचार॥

महलों वाले चल पड़े, हैं सूरज की ओर।
बस्ती में छाया हुआ, अँधियारा घनघोर॥

महँगाई सर पर चढ़ी, जीना हुआ मुहाल।
आखिर निर्धन की चले, कैसे रोटी-दाल॥

१०/५१८, खलासी लाइंस,
कानपुर-२०८००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९१४०६३८४७४

लेह-लद्दाख : बौद्ध संस्कृति का सुरम्य देस

● अंजूषा सिंह

पर्यटन हमारे शारीरिक और मानसिक विकास के लिए आवश्यक माना गया है। यात्राएँ जीवन के अनुभवों के विस्तार के साथ मानव के बौद्धिक विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। स्वयं जीवन भी एक यात्रा है। प्राचीन समय से ही कवि और मनीषी यात्राओं को महत्त्व देते रहे हैं। पंचतंत्र में अभिव्यक्त है—*'पर्यटन् पृथिवीं सर्वां, गुणान्वेषणतत्परः'* अर्थात् जो गुणों की खोज में अग्रसर हैं, वे संपूर्ण पृथ्वी का भ्रमण करते हैं। अधिकांश लोग इस दृष्टिकोण से देश-विदेश के विभिन्न स्थानों पर भ्रमण के लिए जाते हैं। समूचा भारतवर्ष पर्यटन की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण, रोमांचक, ऐतिहासिक और मनोहारी स्थलों से भरा हुआ है, परंतु कुछ स्थल ऐसे हैं, जो भौगोलिक स्थिति और मौसम की विषमताओं के कारण साल के कुछ ही महीने यात्रा व पर्यटन हेतु खुले रहते हैं, उन्हीं में से एक है 'लेह-लद्दाख', जो कि बौद्ध संस्कृति के विकास के लिए विश्व प्रसिद्ध है।

स्कूल की छुट्टियों में बच्चों का उत्साह घूमने जाने के लिए विवश कर ही देता है। अत: हमने परिवार के साथ इस अनोखे पर्वतीय क्षेत्र को देखने के लिए जून की छुट्टियों में घूमने का कार्यक्रम बनाया। भारत के सर्वाधिक ऊँचाई पर स्थित शहरों में शुमार लेह-लद्दाख की यात्रा का कार्यक्रम पूर्व निर्धारित नहीं था, मात्र १०-१५ दिन पहले बने यात्रा के कार्यक्रम को लेकर मन में अपार उत्साह एवं अनेक जिज्ञासाएँ थीं। लेह पहुँचने के लिए २-३ विकल्प हैं, जैसे कि दिल्ली से सीधा लेह वायुयान द्वारा या जम्मूतवी तक रेल से, फिर जम्मू से लेह वाया श्रीनगर बस द्वारा या फिर हिमाचल राज्य सड़क परिवहन निगम की सीधी बस सेवा दिल्ली से लेह वाया मनाली/केलांग (मई से जुलाई तक) उपलब्ध होती है।

१४ जून, २०१६ को यात्रा आरंभ करते हुए हम वायुमार्ग से लेह शहर के हवाई अड्डे पहुँचे, जो कि मुख्य नगर से ४ किमी. दूर श्रीनगर रोड पर है। घाटी में स्थित छोटे से सुंदर हवाई अड्डे पर उतरते ही कई प्रकार की स्वास्थ्य जागरूकता संबंधी घोषणाएँ की जा रही थीं, यथा—"आप अत्यधिक ऊँचाई पर हैं, अत: कम-से-कम २४ से ३६ घंटे पूर्ण रूप से आराम करें, तत्पश्चात् ही पर्यटन स्थलों का भ्रमण करें। हवाई अड्डे से टैक्सी द्वारा हम अपने पूर्व तय ठहराव स्थल बीआरओ गेस्ट हाउस पहुँच गए, वहाँ भी हमें पूर्ण आराम की सलाह दी गई। वजह पूछने पर बताया गया कि यहाँ की हवा में ऑक्सीजन की मात्रा काफी कम है, अत: यहाँ आने वाले पर्यटकों को सिरदर्द, चक्कर आना, साँस फूलना जैसे लक्षण दिखाई देना आम है। अत: हमने उस दिन आराम करना उचित समझा।

सुपरिचित लेखिका। हिंदी में स्नातक ऑनर्स, एम.ए., एम.फिल., पी-एच.डी., यूजीसी-नेट, बी.एड., एम.एड.। संप्रति शिक्षिका, परिषदीय विद्यालय, उत्तर प्रदेश राज्य सरकार। विभिन्न शोध आलेख, १० से अधिक पुस्तक समीक्षाएँ प्रकाशित और अनेक साहित्य सम्मेलनों में प्रतिभाग।

१५ जून को हमने बौद्ध संस्कृति के प्रतीक 'हेमिस मठ' (Hemis monastery) तथा 'थिकसे मठ' (Thiksay monastery) का भ्रमण किया और भगवान् बुद्ध एवं बौद्ध धर्म के बारे में कई अनसुनी जानकारी प्राप्त की। ये दोनों मठ लेह-मनाली मार्ग पर लेह से क्रमश: ५५ एवं ३० किलोमीटर दूर स्थित हैं। यहाँ जाने के लिए निजी वाहन और टैक्सियों का प्रयोग किया जाता है। द्रुक्पा वंश से संबंधित हेमिस मठ की स्थापना ११वीं सदी में स्टैगसंग रास्पा नवांग ग्यात्सो द्वारा की गई थी और बाद में १७वीं सदी में राजा सेंगगे नामग्याल ने इसका पुनर्निर्माण कराया। इसमें भगवान् बुद्ध की ताँबे की धातु से बनी प्रतिमा स्थापित है। यह मठ तिब्बती स्थापत्य शैली में बना धार्मिक विद्यालय है, जिसको धर्म की शिक्षा देने के उद्देश्य से बनाया गया था। इसमें एक पुस्तकालय भी है, जहाँ तिब्बती पुस्तकों का संग्रह है, साथ ही एक संग्रहालय है, जो पर्यटकों के आकर्षण को बढ़ाता है। यह तिब्बती मठों में सबसे धनी मठों में से एक है। समुद्र तल से लगभग ११८०० फीट की ऊँचाई पर स्थित थिकसे मठ का निर्माण १५वीं शताब्दी के मध्य प्लाडन सांगो ने करवाया था। मठ में मैत्रेय बुद्ध की काँसे की बहुत बड़ी मूर्ति है। यहाँ होने वाला थिकसे महोत्सव पर्यटकों के आकर्षण का केंद्र होता है। इस मठ में एक बड़ा सा स्तंभ है, जिसमें भगवान् बुद्ध द्वारा दिए गए उपदेश व संदेश अंकित

हैं। इसी मार्ग पर लेह शहर के नजदीक पर्यटन स्थल शे पैलेश (Shey palace) भी स्थित है।

हेमिस मठ

अगले दिन १६ जून को हमारी योजना श्रीनगर मार्ग पर स्थित दो-तीन दर्शनीय स्थलों के भ्रमण की थी। पहले हम दूरस्थ, दो नदियों सिंधु (Indus) एवं जांस्कर (Zanskar) के संगम स्थल पर गए, यहाँ दोनों नदियों के संगम का बड़ा ही विहंगम दृश्य दिखाई देता है। संगम स्थल पर सैलानी राफ्टिंग का भी आनंद ले सकते हैं। यहाँ पर काफी समय बिताने के बाद हम लौटने लगे और उन स्थलों पर रुके, जिनको वापसी में देखने का प्लान था। पहले हम 'चुंबकीय पहाड़ी' (मैग्नेटिक हिल) पर रुके और पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण के विरुद्ध चुंबकीय बल के कारण वाहनों को गतिशील होते देखा, जो कि अपने आप में आश्चर्यजनक लगा। इसके बाद हम ३०० वर्ष पुराने गुरु नानक देव के साधना स्थल 'गुरुद्वारा पत्थर साहिब' पहुँचे। नाम के अनुरूप इस गुरुद्वारे में रखे पत्थर में एक मानव आकार की छाप स्पष्ट नजर आती है, जिसके पीछे यह कथा है कि 'वर्षों पूर्व एक राक्षस ने गुरु नानक देव की साधना भंग करने के लिए ऊँची पहाड़ी की चोटी से एक बड़ा पत्थर गिराया। वह पत्थर गुरु नानक देव के ऊपर गिरा, लेकिन उस पत्थर से नानक साहिब को कोई क्षति नहीं पहुँची, बल्कि पत्थर में स्वत: ही एक मानव आकृति जैसा गड्ढा बन गया, जिससे गुरु नानक देव सुरक्षित रहे।' मैंने सपरिवार गुरुद्वारे में माथा टेक अरदास की और लंगर प्रसाद ग्रहण किया।

फिर हम अगले पर्यटन स्थल 'हॉल ऑफ फेम' तथा 'सैनिक एडवेंचर पार्क' पहुँचे। 'हॉल ऑफ फेम' भारतीय सैनिकों की याद में बनाया गया बड़ा ही खूबसूरत संग्रहालय है, जो कारगिल मार्ग पर लेह शहर से लगभग ४ किलोमीटर दूर स्थित है। इसमें अलग-अलग समय पर हुए कई युद्धों में भारत की विजय और वीरों की शौर्यगाथा को दरशाया गया है। संग्रहालय में 'चाइना बॉर्डर', 'पाक बॉर्डर', 'जोजिला युद्ध', 'कारगिल युद्ध' एवं अन्य लड़ाइयों में हमारे परमवीर सैनिकों के हौसले एवं युद्ध-कौशलों की याद ताजा होती है। एडवेंचर पार्क में सैनिकों के मार्गदर्शन में विभिन्न प्रतिकूल परिस्थितियों में आगे बढ़ने, कूदने, रेंगकर चलने आदि के कई एडवेंचर्स का सैलानी, विशेष रूप से युवा और बच्चे आनंद लेते हैं। शाम होने में कुछ समय शेष था तो हम अब लेह शहर में स्थित 'शांति स्तूप' की ओर चल दिए। लेह शहर के सर्वोच्च स्थान पर २५ अगस्त, १९८५ को १४वें दलाई लामा तेनजिन ग्यात्सो के द्वारा इसकी नींव रखी गई थी। कुछ वर्षों पूर्व निर्मित यह भव्य स्तूप बौद्ध धर्म का सुंदर प्रतीक है। यहाँ से लेह शहर तथा लेह से दूरस्थ विभिन्न दर्रों (passes) को दूरबीन की मदद से देखा जा सकता है।

यात्रा के चौथे दिन १७ जून को हमने अधिक दूरस्थ पर्यटन स्थलों को घूमने की योजना बनाई और प्रात: ७:०० बजे ही निकल पड़े। हमारा पहला पड़ाव 'चांगला पास' था। बोलेरो गाड़ी में हिलते डुलते हम ४ घंटे बाद 'चांगला पास' पहुँचे, यहाँ सर्द हवाएँ चल रही थीं व तापमान शून्य से भी कम था। सड़क के दोनों ओर फैली बर्फ की मोटी चादर के बीच सभी सैलानी नैसर्गिक सौंदर्य का आनंद ले रहे थे। 'चांगला पास' समुद्र तल से १७६८८ फीट की ऊँचाई पर स्थित है। यहाँ हवा में ऑक्सीजन की बेहद कमी है, इसलिए सैलानियों को २० से ३० मिनट ही रुकने की सलाह दी जाती है। हम भी यहाँ कुछ मिनट रुके, तसवीरें खीचीं और आगे चल पड़े। रास्ते में आने वाले मनोहारी दृश्यों का आनंद लेते हुए, पर्वतीय जानवरों याक, भेड़ आदि की तसवीरें लेते हुए आगे बढ़ रहे थे कि तभी कुछ आगे हमें बहुत बड़े मरुस्थल का अद्‌भुत नजारा हुआ। तत्पश्चात् हमने एक नया जंतु 'पर्वतीय चूहा' (Marmot) देखा।

मटमैले रंग का खरगोश जैसे आकार वाला यह चूहा इनसानों से दूर ही रहता है, किंतु खाने की चीजें करीब आकर ग्रहण कर लेता है। लगभग ६ घंटे की यात्रा के बाद हम बहु प्रतीक्षित विश्व प्रसिद्ध पर्यटन लक्ष्य 'पेंगोंग झील' (Pangong lake) पहुँचे।

लेह से ३१० किलोमीटर दूर पेंगोंग त्सो नाम से देश-विदेश में प्रसिद्ध विशाल झील मानव जाति के लिए प्रकृति का नायाब तोहफा है। यह प्रसिद्ध झील १३४ किलोमीटर लंबे क्षेत्र में फैली है, इसका ४० प्रतिशत भाग (लगभग ४५ किलोमीटर) भारत में और बाकी चीन के अधिकार क्षेत्र में है। नैसर्गिक रूप से सुंदर झीलों में शुमार इस झील के चारों ओर अलग-अलग रंगों के पहाड़ हैं, जिनका पानी में दिखाई पड़ने वाला प्रतिबिंब झील की सुंदरता में चार चाँद लगाता है। यहाँ की मिट्‌टी में पाए जाने वाले विभिन्न खनिज तत्त्वों के कारण झील के पानी का रंग सामान्य पानी के रंग से अलग है। यहाँ का निर्मल जल कई रंगों में

गुरुद्वारा पत्थर साहिब

नजर आता है, जैसा कि हमने थ्री ईडिएट फिल्म में देखा था। खारे पानी की यह झील शीत में जम जाती है। झील के किनारे सैलानियों के रात्रि विश्राम अस्थायी तंबुओं के अलावा पास में बसे एक छोटे से गाँव में भी ठहरने की व्यवस्था हो सकती है। अद्वितीय सुंदर और मनोरम स्थल से मन तो नहीं भरा था, परंतु हमें लौटना था, सो कुछ घंटे बिताने के बाद हमने वापसी का रुख किया। प्राकृतिक दृश्यों का आनंद लेते हुए, रुकते-चलते हम अद्‌भुत झील की यादों के साथ रात्रि ८:०० बजे के करीब गेस्ट हाउस पहुँचे।

ऊँट प्रजनन केंद्र

१८ जून को पूर्वाह्न में बच्चों की पसंद, लेह शहर के नजदीक 'ऊँट प्रजनन केंद्र (Camel Breeding Centre)' और आस-पास की सैर पर जाने का प्लान था। हालाँकि वर्तमान में लेह-लद्‌दाख में ऊँटों का उपयोग कम ही रह गया है, ऐसे में ऊँटों की इस लुप्त होती प्रजाति को बचाने हेतु सरकार का यह केंद्र सराहनीय कार्य कर रहा है। इस संरक्षण केंद्र पर दो कूबड़ (double hump) वाले और बर्फीले वातावरण में भी स्वस्थ रहने वाले कई ऊँट दिखाई पड़े। विलुप्त होती प्रजाति के ऊँटों के लिए लद्‌दाख क्षेत्र में बनाए गए इस छोटे से केंद्र में लगभग २०-३० ऊँटों का पालन-पोषण किया जा रहा था।

बच्चों ने यहाँ ऊँट-सवारी का भी थोड़ा सा आनंद लिया, उसके बाद हम स्टोक गोंपा मठ पहुँचे। यहाँ महात्मा बुद्ध की विशालकाय मूर्ति दर्शनीय है, जो कि एक भव्य मंदिर के ऊपर बनी है। इसी के पास बौद्ध धर्म से संबंधित एक संग्रहालय है, जो कि बच्चों को अच्छा लगता है। फिर हम गेस्ट हाउस पहुँचे और लंच के बाद कुछ देर विश्राम किया। दोपहर बाद हम लेह नगर में स्थित स्टेटस गोंपा मठ व काली मंदिर देखने निकले। यह मठ व मंदिर एयरफोर्स कैंप के नजदीक है। ५०-६० सीढ़ियाँ चढ़ने के बाद बौद्ध धर्म व हिंदू धर्म की साझा संस्कृति से बने इस अद्‌भुत मंदिर में माँ दुर्गा के कई रूपों के दर्शन होते हैं, जिसमें काली रूप प्रमुख है। संभवत: लेह शहर में हिंदू संस्कृति से संबंधित यह एकमात्र प्राचीन पूजा स्थल है। इस मंदिर में दर्शन-पूजन के पश्चात् हमें एक अद्‌भुत शांति की अनुभूति हुई। पहाड़ की चोटी पर स्थित इस मंदिर से, पास की घाटी के काफी अच्छे सुंदर नजारे दिखते हैं। मंदिर पर लोगों से बातचीत में पता चला कि नजदीक ही एक शिव मंदिर है, जिसके चारों ओर नैसर्गिक सुंदरता व नदी का अनुपम नजारा है। फिर हम शीघ्र ही शिव मंदिर की ओर निकल पड़े, मात्र ५-७ मिनट की वाहन यात्रा से हम मंदिर के पास पहुँच गए। वहाँ पहुँचते ही सूखे-पथरीले शहर का एक नया हरा-भरा रूप दिखाई दिया। यहाँ भरपूर हरियाली है, हरे-भरे पेड़-पौधे हैं, स्थानीय फसलें भी हैं। हरी-हरी घास से भरा मैदान और पत्थरों के बीच से कल-कल करती नदी के किनारे स्थित शिव मंदिर में आने वाले पर्यटक श्रद्धा भाव से पूजा-अर्चना करते हैं। मंदिर के आसपास के क्षेत्र में हवा में ताजगी लगी और ऑक्सीजन की कमी अनुभव नहीं हुई। मैंने बच्चों के संग नदी में घुसकर फोटो खिंचवाए, प्राकृतिक दृश्यों का आनंद लिया। यहाँ और अधिक वक्त बिताने का मन था, पर शाम होने के कारण हमें जल्दी ही निकलना पड़ा और गेस्ट हाउस आ गए।

अगला दिन १९ जून, हमारा लेह से प्रस्थान का दिन था। अत: हमने सुबह ही सामान आदि की पैकिंग की और गेस्ट हाउस के मैस में पसंदीदा अल्पाहार व फल आदि का ब्रंच कर गेस्ट हाउस के स्टाफ को अलविदा कहा और श्रीनगर जाने के लिए लेह के सरकारी बस स्टैंड की राह पकड़ी। लेह से श्रीनगर जाने वाली दिन की एकमात्र बस दोपहर को छूटती है। दिन के लगभग २:०० बजे जम्मू कश्मीर राज्य सड़क परिवहन निगम (JKSRTC) की बस (२X२) द्वारा हमारी लेह-कारगिल-श्रीनगर यात्रा शुरू हो गई। पर्वतीय मार्ग से गुजरते हुए हमने पहाड़ों को कई रंग-रूपों में देखा। सड़क के दोनों ओर सुंदर दृश्यों का आनंद लेते हुए, कई छोटे-बड़े शहरों व कस्बों से होते हुए हम देर शाम कारगिल शहर पहुँचे। यहाँ पहुँचते ही करगिल वॉर की यादें ताजा हो उठीं। १९९९ का करगिल युद्ध करीब-करीब दो महीने चला था। इस युद्ध में अपने शौर्य और पराक्रम से भारतीय सेना ने पाकिस्तानी फौजियों को खदेड़ दिया था और युद्ध जीतकर २६ जुलाई, १९९९ को दुर्गम चोटियों पर तिरंगा फहराया था। २६ जुलाई का दिन हर साल 'करगिल विजय दिवस' (Kargil Vijay Diwas) के रूप में मनाया जाता है। लेह के बाद लद्‌दाख का दूसरा बड़ा शहर कारगिल है। कारगिल के निकट ड्रास कस्बे में हमने रात्रि विश्राम किया। अगली भोर यात्रा पुन: आरंभ हुई और ५:०० बजे के करीब बड़े-बड़े सुंदर बर्फीले पहाड़ों के बीच 'जोजीला-पास' पर बस रुकी। यहाँ पर अंतरजनपदीय सीमा पर चेकिंग के कारण बस को कुछ देर रुकना था, क्योंकि हमारी बस में कुछ एक अंतरराष्ट्रीय पर्यटक भी सवार थे, जिनको अपने पासपोर्ट की जाँच व कुछ प्रविष्टि करवानी होती है। जोजीला पास के नजारे अद्‌भुत और खासे मनोरम थे, यहाँ के बर्फीले क्षेत्र के बाद आगे चलते-चलते कश्मीर के हरे-भरे पहाड़ दिखाई देने लगते हैं।

हरी-भरी वादियों से गुजरते हुए, लगभग ४२५ किमी. की यात्रा कर २० जून को प्रात: ९:०० बजे हम श्रीनगर/कश्मीर पहुँचे। बस से उतरकर हमने सीधे होटल का रुख किया, अल्प-विश्राम व लंच उपरांत हम श्रीनगर शहर में स्थित स्थानीय पर्यटन स्थलों की सैर पर निकले। यहाँ कई सुंदर बाग-बगीचे हैं, शालीमार, चश्मे शाही घूमते हुए हम श्रीनगर

की शान 'डल झील' पहुँचे। डल झील में वोटिंग का लुत्फ भला कौन नहीं लेना चाहेगा। यहाँ आने वाला लगभग हर पर्यटक शिकारा (small boat) में बैठकर डल झील में नौका विहार करते हुए अलौकिक आनंद का अनुभव करता है, सो हमने भी एक शिकारा सरकारी दर पर बुक किया और एक-डेढ़ घंटे की सैर की। झील के किनारों पर स्थित विभिन्न

डल झील

view-points से गुजरते हुए, नाव में बनी फ्लोटिंग-शॉप से कुछ खरीददारी भी की, जो अपने आप में अनूठा अनुभव था।

नौका विहार करते-करते शाम हो चली थी। फिर झील के किनारे-किनारे टहलते हुए हम समीप में स्थित जाने-माने शुद्ध शाकाहारी भोजनालय कृष्णा ढाबा पहुँचे, और स्वादिष्ट भोजन ग्रहण कर रात्रि विश्राम किया।

२१ जून यात्रा का आठवाँ और अंतिम दिन था। सुलभ आहार ग्रहण कर हम सरकारी बस स्टैंड की ओर रवाना हुए। वैसे तो ज्यादातर सैलानी एयरपोर्ट जाने के लिए टैक्सी का प्रयोग करते हैं, परंतु हमने JKSRTC की बस का उपयोग किया, जिसमें ३०-४० मिनट की यात्रा काफी अच्छी रही और किफायती भी। दोपहर की उड़ान में सवार हो हम एक यादगार यात्रा पूरी कर शाम तक घर आ पहुँचे।

यात्राएँ चाहे भ्रमण, धार्मिक या शैक्षिक उद्देश्य से की जाएँ, निश्चित ही हमारे जीवन में महत्त्व रखती हैं। यात्राओं से हमें ऐतिहासिक व भौगोलिक ज्ञान प्राप्त होता है, साथ ही विभिन्न संस्कृतियों, मानव सभ्यताओं से परिचय होता है और क्षेत्र या देश विशेष के लोगों के जीवन-यापन संबंधी जानकारी मिलती है। लेह-लद्दाख और कश्मीर के कुछ भाग की पर्यटन यात्रा मेरे लिए बहुत ज्ञानवर्धक, आनंदमयी, अनूठी और अविस्मणीय रही।

२२४ कमला नेहरू नगर,
गाजियाबाद-२०१००२ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९८३७२६३५४५

जिंदगी का कायदा

गजल

● **नवीन माथुर पंचोली**

: एक :

नजर को ये कभी लगता नहीं है।
जमीं से आसमाँ मिलता नहीं है।

जहाँ जाना, वहाँ से लौट आना,
कभी ये रास्ता रुकता नहीं है।

खड़े हो आईने के सामने पर,
छुपा चहरा कभी दिखता नहीं है।

परों का बोझ है जिस पर जियादा,
वो पंछी दूर तक उड़ता नहीं है।

चला है साथ जो लेकर इरादे,
मुसाफिर वो कभी थकता नहीं है।

सियासत कर रहे हो साथ सबके,
मुझे ये कायदा जँचता नहीं है।

: दो :

जिसे देखा कहीं, वो दूसरा है।
नजर को आपकी धोखा हुआ है।

नजारा पास इतना भी नहीं है,
कि जितना पास सबका सोचना है।

हिमायत कर रहे हैं आप उसकी,
यहाँ जो शख्श सबसे दोगला है।

सुने सबकी मगर करे मन की,
यही इस जिंदगी का कायदा है।

वहाँ मुश्किल सफर है कश्तियों का,
जहाँ उनका हवा से सामना है।

निभाता है वहाँ उतनी अकीदत,
जहाँ जितनी शराफत देखता है।

: तीन :

चलो इसमें पते की बात तो है।
सफर में इक सहारा साथ तो है।

जुबाँ ये पूछती है इन लबों से,
भला दिल में कहीं ईमान तो है।

तबीयत है बड़ी नासाज लेकिन,
चलो इसमें जरा आराम तो है।

हमारा है, हमेशा, ये जताकर,
कि हमसे शख्श वो नाराज तो है।

बनाता है सभी जो काम अपने,
किसी का सिर पे अपने हाथ तो है।

कही वैसी, रही है सोच जैसी,
हमारी शायरी बेबाक तो है।

अमझेरा, धार-४५४४४१ (म.प्र.)
दूरभाष : ९८९३११९७२४

एक अच्छा सबक

● दिनेश प्रताप सिंह 'चित्रेश'

संजय जैसे ही पार्क पहुँचा, क्षण भर के लिए दीपक, नीलू पप्पू और विनय की बातचीत बंद हो गई। इन लोगों ने उसे घूरकर देखा, फिर अगले पल आपस में एक-दूसरे को देखने लगे। दीपक ने सिर झटकते हुए रुकी बात फिर शुरू की, छोड़ो उस मनहूस को; आओ, हम अपना काम करें, वरना कलुआ भाग गया तो सारा मजा किरकिरा हो जाएगा।

दीपक की बात सुनकर विनय, पप्पू और नीलू अपनी कारगुजारी में व्यस्त हो गए। संजय खिसियाया-सा जाकर जामुन के पेड़ के नीचे वाली बेंच पर बैठ गया। दीपक का उसके प्रति ऐसा बुरा व्यवहार कोई नई बात न थी। असल में दीपक, पप्पू और नीलू का यह ग्रुप एकदम चांडाल चौकड़ी था। माँ-बाप के पैसे चुराकर फिल्में देखना, स्कूल में गैरहाजिर रहना और तरह-तरह की शरारतें करना इस चौकड़ी का मुख्य काम था। संजय अभी नया-नया इन लोगों के मुहल्ले में आया था, इसलिए इनकी आदतों से ठीक से परिचित भी नहीं हो पाया था। उसने दो-तीन बार इन लोगों को गलत कामों से रोका था, फलस्वरूप चौकसी के नेता दीपक की खरी-खोटी बातें उसे सुनने को मिली थीं।

मगर परसों तो हद हो गई थी। स्कूल में दीवाली की चार दिनों की छुट्टी हुई थी। चांडाल-चौकड़ी खुशी-खुशी घर लौट रही थी, संजय भी साथ ही था। कुछ दूर आने पर आम के पेड़ के नीचे एक भूरे कुत्ते को देखकर दीपक रुक गया। आँख नचाता हुआ बोला—"चलो, इसी समय हम मजेदार ढंग से दीवाली का उद्घाटन कर डालें।"

"कैसे, हमें भी बताओ?" पप्पू ने पूछा।

"इस भूरेलाल को देख रहे हो।" उसका संकेत कुत्ते की तरफ था—"इसकी पूँछ से छोटे पटाखों का एक गुच्छा बाँधकर आग हुआ देते हैं। बस, मजा आ जाएगा।"

"वाह भाई दीपक, मान गए तुम्हारी अकल को! वाकई सुप्पर आइडिया है।" विनय खुशी से उछल पड़ा। नीलू भी उत्साहित था। बोला, "आज दोपहर मैंने खाना भी नहीं खाया था। सारा कुछ टिफिन बाक्स में है। इसे खिलाकर मैं भूरेलाल से दोस्ती कर लेता हूँ, इससे पूँछ में पटाखे बाँधने में आसानी होगी।"

यह सब तय हुआ तो पप्पू पटाखे का गुच्छा और माचिस लाने के लिए चंदा एकत्र करने लगा। सबने दिया, लेकिन जब संजय की बारी आई तो वह साफ मना कर गया—"मुझे ऐसे बेकार के कामों में नहीं शामिल होना है।"

"इसमें तुम्हें मजा नहीं आएगा क्या?" पप्पू ने पूछा।

"बिल्कुल नहीं।" संजय ने जवाब दिया, "भला किसी कुत्ते को परेशान करके कौन सा मजा मिल सकता है?"

"अच्छा, तो तुम इस कुत्ते के लिए परेशान हो।" पप्पू ने एक क्षण बात रोककर अपने साथियों को देखा, फिर मुसकराते हुए कहा—"संजयजी! आपकी इस कुत्ते से कोई रिश्तेदारी है क्या?"

दीपक, विनय और नीलू खी···खी···करके हँस पड़े। संजय झेंप गया। बोला, "रिश्तेदारी नहीं तो कोई दुश्मनी भी नहीं है।

"छोड़ पप्पू उस मनहूस को। जितना पैसा कम हो, मुझसे ले लो और जल्दी से पटाखे और माचिस ले आओ।" दीपक ने तैश में आकर कहा। इसके बाद चांडाल-चौकड़ी अपनी कारगुजारियों में व्यस्त हो गई। संजय कुछ दूर पर खड़ा देखता रहा। नीलू ने टिफिन बॉक्स से एक पराँठा निकाला और कुत्ते के सामने बैठकर एक-एक टुकड़ा उसके आगे फेंकने लगा। कुत्ता खुशी से पूँछ हिला-हिलाकर खाने लगा, बीच-बीच में वह प्यार से टुकड़े फेंकते नीलू को भी देख लेता था।

एक पराँठा खत्म हुआ तो नीतू ने दूसरा निकाल लिया। अब विनय आकर कुत्ते के पास बैठ गया और उसकी पीठ सहलाने लगा। स्वादिष्ट भोजन व बच्चों का प्यार पाकर वह खुशी से कूँ···कूँ···करने लगा। उसके कान चिपटे से होकर पीठ की तरफ झुक गए और वह शरीर ढीला करके लेट सा गया। इसी बीच पप्पू पटाखे लेकर आ गया। दीपक पटाखे लेकर कुत्ते के पास पहुँचा और आहिस्ते से उसने पटाखे का गुच्छा उसकी

सुपरिचित लेखक। अब तक 'अँधेरे के बीच' (कहानी), 'भय का भूत' (बालकथा-संग्रह) तथा पत्र-पत्रिकाओं में अनेक रचनाएँ प्रकाशित एवं उन्नीस विभिन्न संकलन संपादित। साहित्य मंडल श्रीनाथद्वारा (राजस्थान) से 'श्री भगवती प्रसाद देवपुरा बालसाहित्य भूषण सम्मान' सहित छोटे-बड़े दो दर्जन पुरस्कार प्राप्त।

पूँछ से बाँधा और माचिस निकाल ली। नीलू ने कुत्ते के सामने पूरा पराँठा रख दिया और विनय के साथ थोड़ी दूर जाकर खड़ा हो गया। दीपक ने झट माचिस जलाकर पटाखे की बत्ती से छुआ दी, फिर अगले क्षण दोस्तों के पास आ गया। कुत्ता अभी पराँठे से नोचकर एक ही टुकड़ा खा पाया था कि पूँछ से बँधे पटाखे दगने लगे। वह चौंककर उठ खड़ा हुआ। वह फटाक···फटाक···की आवाज से डरकर बेतहाशा भागा, कुछ दूर जाकर एक बिजली के खंभे से टकराया और चोट खाकर गिर पड़ा। पटाखे अब तक दग चुके थे, लेकिन पटाखों की सुलगती खोल से पूँछ जलने लगी थी। कुत्ते ने मुँह से पटाखों की खोल नोच डाली और जली पूँछ चाटता लँगड़ाता हुआ चला गया।

चांढाल-चौकड़ी को इस खेल में बड़ा मजा आया। वे रास्ते भर संजय को चिढ़ाते हुए घर पहुँचे थे। आज जब संजय पार्क में आया तो देखा वे एक दूसरे कुत्ते की पूँछ से पटाखे बाँधने की तैयारी कर रहे थे। आज उन्हें काले रंग का एक बड़ा-सा कुत्ता मिला था, जिसे उन लोगों ने कलुआ नाम दिया था।

बेंच पर बैठे संजय ने देखा, दीपक ने अपने दोस्तों के साथ झटपट सारी व्यवस्था पूरी कर ली। नीलू कुत्ते के सामने आया, कलुआ-कलुआ कहकर बिस्कुट फेंका। कुत्ता उसे चबा गया, लकिन न उसने पूँछ हिलाई और नहीं उसके चेहरे पर प्रसन्नता के भाव आए। नीलू ने दूसरा बिस्कुट फेंका, इसे भी गटककर वह अकड़ खाँ बना बैठा रहा।

"यार, यह तो बड़ा अड़ियल है।" नीलू ने कहा।

दीपक ने समझाया, "बिस्कुट फेंकते जाओ। अभी सारी अकड़ घू-घूमंतर हो जाएगी।"

नीलू ने एक-एक करके तीन-चार बिस्कुट फेंके। पप्पू कुत्ते के पास पहुँचा और डरते-डरते पीठ पर हाथ रखा। कुत्त ने चौंककर मुँह में बिस्कुट दबाए लाल-लाल आँखों से पप्पू को घूरकर देखा, फिर करर-करर की आवाज के साथ बिस्कुट चबाने लगा। दीपक पटाखों का गुच्छा लेकर उसकी पूँछ के पास पहुँचा, लेकिन पूँछ पर हाथ लगाते ही कलुआ गुर्रा उठा। उसी समय नीलू ने उसके सामने कई बिस्कुट फेंके। वह गाफिल हो बिस्कुटों पर मुँह मारने लगा। दीपक के लिए इतना मौका काफी था। उसने जल्दी से पटाखों का गुच्छा पूँछ से बाँध दिया। उसके इशारे पर बाकी बिस्कुट कलुआ के सामने फेंक नीलू सामने से हट गया। पप्पू भी दूर जा खड़ा हुआ। दीपक ने माचिस जलाकर पटाखों की बत्ती से छुआ दिया। अभी वह मुढ़कर मित्रों के पास पहुँचने के लिए दौड़ लगाना ही चाहता था कि पटाखे दगने लगे। गुस्से से खौंखियाकर कलुआ पलटा, सामने दीपक को पाकर उसके पैरों में काट लिया। इसी बीच पूँछ में बँधे पटाखे फटाक···पड़ाक···फट की आवाजों के साथ दगे जा रहे थे, जिससे कलुआ गुस्से से पागल सा होकर दीपक पर पिल पड़ा। वह भयानक गुर्राहट के साथ उसे दाँतों और पंजों से नोच-खसोट रहा था।

नीलू ने एक-एक करके तीन-चार बिस्कुट फेंके। पप्पू कुत्ते के पास पहुँचा और डरते-डरते पीठ पर हाथ रखा। कुत्त ने चौंककर मुँह में बिस्कुट दबाए लाल-लाल आँखों से पप्पू को घूरकर देखा, फिर करर-करर की आवाज के साथ बिस्कुट चबाने लगा। दीपक पटाखों का गुच्छा लेकर उसकी पूँछ के पास पहुँचा, लेकिन पूँछ पर हाथ लगाते ही कलुआ गुर्रा उठा। उसी समय नीलू ने उसके सामने कई बिस्कुट फेंके। वह गाफिल हो बिस्कुटों पर मुँह मारने लगा। दीपक के लिए इतना मौका काफी था। उसने जल्दी से पटाखों का गुच्छा पूँछ से बाँध दिया। उसके इशारे पर बाकी बिस्कुट कलुआ के सामने फेंक नीलू सामने से हट गया। पप्पू भी दूर जा खड़ा हुआ। दीपक ने माचिस जलाकर पटाखों की बत्ती से छुआ दिया। अभी वह मुढ़कर मित्रों के पास पहुँचने के लिए दौड़ लगाना ही चाहता था कि पटाखे दगने लगे।

दीपक सहायता के लिए चिल्लाया। संजय ने आस-पास देखा, जल्दी में उसे एक-डेढ़ मीटर लंबा लकड़ी का टुकड़ा मिला। यह उसी को लेकर दौड़ पड़ा। लेकिन भगाते-भगाते कुत्ता दीपक को तीन-चार जगह काट चुका था। पेट, छाती और जाँघ पर पंजों के गहरे खरोंच भी मार दिए थे। वह जमीन पर पड़ा कराह रहा था और स्वयं घर पहुँचने की हालत में नहीं था।

संजय ने उसे घर पहुँचाने के लिए पार्क में नीलू विनय और पप्पू की तलाश में निगाह दौड़ाई। वहाँ कोई न था। सभी डर के मारे नौ-दो ग्यारह हो चुके थे। वह दौड़कर इ-रिक्शा ले आया और रिक्शे वाले की सहायता से उसे सीट पर बैठाकर घर पहुँचाया। दीपक के पापा उसी रिक्शे से उसे अस्पताल ले गए।

अगले दिन सवेरे संजय हाल-चाल लेने दीपक के घर पहुँचा। उसे देखते ही दीपक की नजरें झुक गईं। आँखों से टप-टप आँसू टपकने लगे। संजय ने देखा तो कहा, "दीपक भाई! तुम रो रहे हो, कोई तकलीफ है क्या?"

संजय की अपनत्व भरी बात सुनकर वह हिचक-हिचककर रोने लगा। बड़ी मुश्किल से संजय ने उसे चुप कराया और पूछा, "आखिर बात क्या है, क्यों रो रहे हो?"

दीपक ने आँखें पोंछी और भर्राए गले से बोला, संजय भाई! बड़े दुःख की बात है कि मैं सदैव तुम्हारे नेक सलाह की खिल्ली उड़ाया करता था, पता नहीं कितनी बार बुरा-भला कह चुका हूँ, जबकि तुम मेरे सच्चे मित्र थे। क्या इतनी बड़ी भूल दुःख की बात नहीं है?"

"दीपक भाई, यह भी कोई बात हुई।" संजय ने प्यार से समझाया, सच कहा जाए तो यह खुशी की बात है कि तुम्हें अपनी भूल समझ में आ गई। पिछली बातों पर पछताना बेकार है। बस इतना याद रखो, अब कोई भूल न होने पाए।

"इतनी बड़ी दुर्घटना झेलने और ऐंटीरैबीज की सुइयाँ लगवाते-लगवाते फिर कोई भूल न करने का सबक तो मिल ही जाएगा।" दीपक ने फीकी मुसकान के साथ जवाब दिया।

उसके कष्ट का अनुमान करके संजय की आँखें भर आईं। मगर मन-ही-मन वह यह सोचकर खुश हो रहा था कि दीपक अब गलतियाँ नहीं करेगा।

सा.अ.

पो.आ. जासापारा,
गोसाईंगंज
दूरभाष : ९४५०१४३५४४, ७३७९१००२६१

धार्मिकता की शिकार

● रामेश्वर महादेव वाढेकर

सुबह-सुबह मैं घूमने निकली। हर दिन निकलती हूँ, शरीर और मन अच्छा रहे इसलिए। आज का मौसम प्रसन्न था बहुत। वैसे देखा जाए तो यहाँ का माहौल हर समय प्रसन्न ही रहता है, क्योंकि यह मणिपुर है प्राकृतिक सौंदर्य का महासागर। जीवित प्रकृति का स्वर्ग। प्राकृतिक सौंदर्य जैसी सुंदर स्त्री है यहाँ की, चेहरे और मन से। साथ ही प्राचीन सांस्कृतिक वारिस भी है यहाँ के प्रदेश को। मैं सोच में डूबी अवस्था में चल रही थी। उतने में सामने दिखाई दी—'एके जानकी लीमा'। जो 'मीरा पैबी संगठन' की प्रमुख नेता है वर्तमान की। वह मूल रूप से स्त्री शोषण करने वाले के खिलाफ संघर्ष करती रही है। मैंने उनसे कहा, "मणिपुर का समृद्ध एवं प्राचीन इतिहास है, इसे कोई भूल नहीं सकता।"

"हाँ, मैंने पढ़ा है थोड़ा। और विस्तार से बता सकती हैं आप?" एके जानकी लीमा ने जिज्ञासा भाव से पूछा।

'जानने की जिज्ञासा है आपकी।' मन ही मन मुसकराते हुए इरोम चानू शर्मिला ने कहा।

"जी, हाँ।"

"बोधचंद्र नाम सुना है आपने?"

"नहीं।"

"वे मणिपुर रियासत के महत्त्वपूर्ण राजा के रूप में ख्यात रहे हैं। उनके कार्य की पहचान थी मणिपुर रियासत। स्वतंत्रता पूर्व अनेक राजा अंग्रेज सरकार के खिलाफ लड़ते रहे, जिनमें बोधचंद्र महाराज भी एक थे। कालांतर में भारत स्वतंत्र हुआ, परंतु मणिपुर स्वतंत्र रियासत के रूप में अलग रहा। रियासत होने के बावजूद अस्तित्व में लोकतंत्र था यहाँ।"

"मणिपुर भारत में विलीन कब हुआ?"

"विलीन नहीं हुआ, जबरन करवाया गया सितंबर १९४९ में। साथ ही मणिपुर को राज्य का दर्जा नहीं दिया तत्कालीन समय। परिणामस्वरूप मणिपुर में पीपल्स लिबरेशन आर्मी, पीपल्स रिवोल्यूशनरी पार्टी ऑफ कांगलीपाक, कम्युनिस्ट पार्टी आदि उग्रवादी संगठन तैयार हुए।"

"उग्रवादी मतलब?"

"न्याय, हक के लिए सरकार के प्रति विद्रोह करने वाले।"

"वे विद्रोह क्यों करते हैं?"

"इसके अनेक कारण हैं, जिनमें प्रमुख है सशस्त्र बल विशेषाधिकार कानून। इसके माध्यम से अनेक निष्पाप व्यक्तियों का शोषण होता है, अधिकार का हनन भी! इसी कारणवश मैंने ५ नवंबर, २००० को यह कानून मणिपुर राज्य से हटाने हेतु भूख हड़ताल की थी। यह विश्व जानता है। यह संघर्ष भारतवासियों ने देखा है आँखों से"

सुपरिचित लेखक। अब तक चरित्रहीन, दलाल, सी.एच.बी. इंटरव्यू, लड़का ही क्यों?, अकेलापन, षड्यंत्र, शहीद, अग्निदाह, चौखट आदि कहानियाँ विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित। राष्ट्रीय युवा कहानी पुरस्कार-महाराष्ट्र, ज्ञानविविधा साहित्यिक पुरस्कार-बिहार। संप्रति सहायक प्राध्यापक।

"इतना संघर्ष होने के बाद भी बदलाव क्यों नहीं हुआ?"

"गंदी राजनीति के कारण। लेकिन उन कानून का गलत इस्तेमाल करके सरकार चाहे वह किसी भी पक्ष की हो, आम लोगों को त्रस्त करती है। यह भारतवासियों को ही नहीं, बल्कि विश्व को पता चला है।"

"मुझे याद है १९५८ का वर्ष। मणिपुर के कुछ हिस्सों में सशस्त्र बल विशेषाधिकार कानून लागू किया था। बहुत से निष्पाप लोगों को सजा हुई थी, शक के कारण। इतना ही नहीं, १९८० का दशक अशांत क्षेत्र घोषित किया था केंद्र सरकार ने मणिपुर में। साथ ही 'ऑपरेशन ऑल क्लियर' नाम से मुहिम शुरू की थी उग्रवादी संगठन खत्म करने हेतु।"

"किसी को खत्म करना समस्या का उपाय नहीं। उनके विचार में परिवर्तन लाना जरूरी है।"

"२००८ में उग्रवादी संगठन के साथ त्रिपक्षीय समझौता हुआ था न।"

"सिर्फ नाम के लिए।"

"मैं नहीं समझी।"

"समझौता में जिन मुद्दों पर चर्चा हुई, उनपर अमल नहीं हुआ। परिणामस्वरूप संघर्ष बढ़ता गया। वर्तमान में भीषण रूप झलक रहा है। किसी भी पार्टी की सरकार विशिष्ट समुदाय को अधिकार से वंचित रखेगी तो उग्रवादी संगठन निर्माण होते रहेंगे।"

"हाँ, बिल्कुल सही। आपसे वार्त्तालाप करने से बहुत सी जानकारी मिली। अब मैं चलती हूँ इरोम चानू शर्मिला। मिलते रहेंगे बीच-बीच में इसी तरह।"

"हाँ, जरूर।"

□

कुछ वर्ष पुरानी बात है। मैं अकेली थी रास्ते पर। सड़क पर सन्नाटा था। सभी तरफ अंधकार भी। मैं अकेली जा रही थी। घर पहुँची तो खबर मिली कि दो स्त्री को निर्वस्त्र करके रास्ते पर घुमाया। उसके साथ दुष्कर्म किया। यह प्रसंग सुनकर मैं बेचैन हुई। जैसेकि जीवित होकर भी मैं मर गई। इतने में जोर से आवाज सुनाई दी कि हमारे गाँव 'मीरा पैबी संगठन' की कुछ महिलाएँ प्रबोधन करने हेतु आई हैं। यह सुनकर मैं घर से बाहर निकली तो मुझे दिखाई पड़ी 'एके जानकी लीमा'। देखते ही मैंने खुश होकर कहा, "आप यहाँ, मुझे कुछ भी बताया नहीं।"

"आप इस गाँव में रहती हैं, मुझे सच में पता नहीं था। आपसे बहुत वर्ष हुए, मुलाकात नहीं हुई। आपसे संपर्क करने की बहुत कोशिश की इसके पहले अनेक बार। किंतु संपर्क नहीं हो पाया।" उत्साह में एके जानकी लीमा कहने लगी।

"आइए घर में, चाय लेते हैं।" इरोम चानू शर्मिला ने कहा।

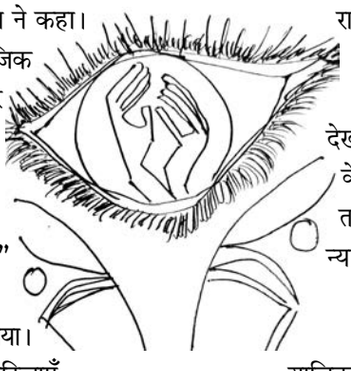

चाय लेते समय वार्त्तालाप शुरू हुआ दोनों में। सामाजिक कार्य पर बहुत चर्चा हुई। किंतु इरोम चानू शर्मिला के चेहरे पर गंभीर भाव दिखाई दे रहे थे। वह चिंता में दिख रही थी। इतने में अचानक एके जानकी लीमा ने पूछा, "आप ठीक तो हैं न। कुछ दिक्कत तो नहीं।"

"अच्छी हूँ शरीर से। मन से कब की टूट गई हूँ।"

"क्या हुआ? मुझे बताइए जल्द।"

"दो महिलाओं को निर्वस्त्र करके भीड़ ने घुमाया। उनके साथ दुष्कर्म भी किए दरिंदों ने। सिर्फ ये दो महिलाएँ निर्वस्त्र नहीं हुईं, ऐसी अनेक महिलाएँ निर्वस्त्र हुई हैं। कहीं स्त्री ने अत्याचार सहे हैं। लेकिन वह सब चित्र अभी तक सामने नहीं आया। वास्तव में वर्तमान की न्यायपालिका, संसद्, पत्रकारिता ही निर्वस्त्र हुई है। वह कुछ भी कर नहीं पा रही।"

"यह घटना कहाँ हुई और कब?"

"मणिपुर के थोबल जिला में ४ मई, २०२३ को घटित हुई। वातावरण हिंसाग्रस्त होने के कारण १५० लोग मारे गए। ४०० लोग गंभीर रूप से घायल अवस्था में हैं। ६०००० से अधिक लोग बेघर हुए। यह मीडिया ने बताया; असल में क्या परिस्थिति है, वह मणिपुर के लोगों को पता है। पीड़ित महिलाओं में से एक के पति इंडियन आर्मी में थे। यह खबर सुनकर वे हैरान हुए। उन्होंने अफसोस जताते हुए कहा कि मैंने कारगिल युद्ध में देश के लिए लड़ाई लड़ी और भारतीय शांति सेना के हिस्से के रूप में श्रीलंका में था। मैंने देश की रक्षा की, लेकिन मुझे दु:ख है कि मैं अपनी पत्नी और ग्रामीणों की रक्षा नहीं कर सका।"

"यह घटना घटित होने के पीछे क्या कारण थे, पता चले?"

"घटना घटित होने के पीछे अनेक कारण हैं। परंतु मूल कारण है मैतेई समाज को पहाड़ी क्षेत्र में जमीन खरीदने का अधिकार न होना। साथ ही गौण कारण है नीच धार्मिक विचार और गंदी राजनीति। कोई भी समस्या निर्माण होती है तो शिकार महिला ही बनती है। यहाँ भी वही हुआ।"

"मैं नहीं समझी।"

"आपको जल्द समझ में भी नहीं आएगा, इसीलिए आपको मणिपुर के शैक्षिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक आदि परिस्थितियों का अध्ययन करना होगा।"

"हाँ, वह तो है। मैं करूँगी अध्ययन।"

"वैसे देखा जाए तो मणिपुर की आबादी लगभग पैंतीस लाख मानी जाती है, जिनमें मैतेई, नागा, कुकी आदि प्रमुख समुदाय हैं। मैतेई ज्यादा संख्या में हिंदू हैं। नागा, कुकी ईसाई। नागा, कुकी समुदाय मणिपुर में अनुसूचित जनजाति में शामिल हैं। मणिपुर भूमि सुधार के तहत मैतेई समाज को पहाड़ी इलाकों में जमीन खरीदने का अधिकार नहीं है। इसीलिए मैतेई समुदाय भूमि सुधार कानून का विरोध करता आया है।"

"भूमि सुधार कानून हटाना आसान नहीं है।"

"अप्रत्यक्ष रूप से हटाने की कोशिश की है मैतेई समाज के राजनीतिक नेताओं ने।"

"कैसे? मैं नहीं समझी।"

"मणिपुर की राजनीतिक पृष्ठभूमि का इतिहास देखने से समझ आता है मैतेई समाज का वर्चस्व। मणिपुर के तकरीबन मुख्यमंत्री मैतेई समाज से ही हुए हैं अभी तक। वर्तमान में भी मैतेई समाज के मुख्यमंत्री हैं। वे उच्च न्यायालय के मत पर खरे उतरने वाले थे।"

"उच्च न्यायालय का क्या रुख था?"

"मैतेई समाज के एक व्यक्ति ने उच्च न्यायालय में याचिका दायर की थी कि हम मूल मणिपुर के रहने वाले हैं। प्राचीन समय में हम अनुसूचित जनजाति में शामिल थे। वर्तमान में नहीं हैं। कई वर्ष उस विषय पर विचार विनिमय हुआ। हाल ही में उच्च न्यायालय के न्यायाधीश ने कहा कि मैतेई समाज को अनुसूचित जनजाति में विलीन करने पर सरकार विचार जल्द करे।"

"न्यायाधीश ऐसा कैसे कह सकते हैं। यह तो आदिवासी समाज पर अन्याय होगा।"

"न्यायाधीश सिर्फ नामधारी है। कठपुतली के रूप में वे बैठे हैं पद पर। निर्णय सत्ताधारी सरकार ही देती हैं। मैतई समुदाय का सामावेश अनुसूचित जनजाति में न हो, इसलिए मणिपुर के 'ऑल ट्राइबल स्टूडेंट यूनियन' ने ३ मई, २०२३ को पर्वतीय क्षेत्रों में रैली का आयोजन किया, सरकार पर दबाव डालने हेतु। रैली का समापन होने से पहले इंफाल घाटी से सटे हुए चूड़ाचाँदपुर जिला में मैतेई और कुकी समुदाय में झड़प हुई। दोनों समुदाय ने एक-दूसरे के मंदिर, चर्च जलाए। सत्ताधारी सरकार ने मैतेई समुदाय में धर्म के नाम पर विष फैलाने का कार्य किया। इसी का परिणाम ४ मई, २०२३ को दो महिलाओं को निर्वस्त्र करके घुमाया गया, यह पीड़ादायक घटना घटी, जो देश के लिए कलंक थी।"

"जब यह घटना घटित हुई, तब वहाँ का पुलिस प्रशासन क्या कर रहा था। सिर्फ तमाशा देख रहा था क्या?"

"कुछ लोग कह रहे हैं कि पुलिस ने ही भीड़ को महिलाओं के पास जाने दिया।"

"ऐसा क्यों किया उन्होंने?"

"डर के कारण या राजनीतिक दबाव के कारण। पीड़ित स्त्री की जान बचाने हेतु पिता और भाई ने खुद की जान गँवाई, किंतु सफलता नहीं मिली उन्हें। स्त्री बहुत चिल्लाई, किंतु उसकी वेदना किसे ने नहीं समझी। जानवरों जैसा शरीर नोचा हैवानों ने। आज वह जी तो रही है, परंतु मर-मर कर। वह सिर्फ शरीर से जिंदा है, मन तो कबका मर गया। इतना ही नहीं, यह घटना सभी भारतवासियों को सतहत्तर दिन के पश्चात् एक वीडिओ के माध्यम से पता चली।"

"डर के कारण या राजनीतिक दबाव के कारण। पीड़ित स्त्री की जान बचाने हेतु पिता और भाई ने खुद की जान गँवाई, किंतु सफलता नहीं मिली उन्हें। स्त्री बहुत चिल्लाई, किंतु उसकी वेदना किसे ने नहीं समझी। जानवरों जैसा शरीर नोचा हैवानों ने। आज वह जी तो रही है, परंतु मर-मर कर। वह सिर्फ शरीर से जिंदा है, मन तो कबका मर गया। इतना ही नहीं, यह घटना सभी भारतवासियों को सतहत्तर दिन के पश्चात् एक वीडिओ के माध्यम से पता चली।"

"इतने दिन क्यों लगे?"

"शायद मणिपुर सरकार साझा नहीं करना चाहती थी। किंतु आप यह मत समझो कि मैं विपक्ष की बाजू ले रही हूँ। या उससे मेरा राजनीतिक कोई संबंध है। मैंने जो आँखों से देखा, उसके आधार पर बात कर रही हूँ।"

"दोषी व्यक्तियों पर काररवाई हुई क्या?"

"दोषी व्यक्तियों के नाम का अभी तक पता नहीं। काररवाई तो बहुत दूर की बात।"

"वीडिओ में मूल दोषी दिखते होंगे न।"

"दिखते हैं, किंतु दोषी आदमी मैतेई समाज से है न। सरकार भी तो उनकी है। अभी तक छह आदमी को मूल दोषी ठहराया, जिनमें से हुहिरेम हेरोदास मैतेई नाम सिर्फ सामने आया। काररवाई कुछ नहीं हुई। वह खुलेआम घूम रहा है समाज में।"

"यानी सरकार भेदभाव कर रही है कुकी समुदाय के साथ। यह मामला केंद्र सरकार को सौंपना चाहिए।"

"तब भी कुछ नहीं होनेवाला। क्योंकि वहाँ उनके विचार की सरकार है। उनकी जगह विपक्ष की सरकार होती तो वे भी वही करते, जो सत्ताधारी कर रहे हैं। सत्ता के लिए कुछ भी करती हैं भारत की सभी राजनीतिक पार्टियाँ। उन्हें जनता के प्रगति से कुछ मतलब नहीं है। सौंप दिया है मामला, देखते हैं क्या होता है।"

"मणिपुर में इतनी दर्दनाक घटना हुई, यह भारत के इतिहास में पहली बार हुआ। यानी मणिपुर सरकार नाकाम हुई शांति रखने में।"

"इतना सबकुछ होने के बावजूद उन्हें कुछ नहीं लग रहा। वे मीडिया में कह रहे हैं कि ज्यादा कुछ नहीं हुआ, सिर्फ दो समाज में मतभेद है, बाकी कुछ नहीं।"

"और क्या होना अपेक्षित है उन्हें। सब मणिपुर जल रहा है हिंसा की आग में। विपक्ष क्यों कुछ बोल नहीं रहा?"

"विपक्ष कहाँ अस्तित्व में रहा है वर्तमान में।"

"लोकसभा में हिंसा पर बहुत बहस हुई। हिंसा के पीछे कौन है? इसपर दोनों यानी सत्ताधारी और विपक्ष में आरोप-प्रत्यारोप हुए।"

"स्त्री हिंसा पर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर चर्चा हुई। दोषियों का निषेध किया गया। लेकिन भारत में दोषियों की बाजू लेने की कोशिश अप्रत्यक्ष रूप से की गई सरकार की ओर से।"

"गुनहगार के विरुद्ध केस दायर किया पीड़ित महिलाओं ने।" एके जानकी लीमा ने चिंता के रूप में पूछा।

"इतना कुछ होने के बावजूद गुनहगार के विरुद्ध केस दायर करने हेतु डर रही हैं पीड़ित महिलाएँ।" इरोम चानू शर्मिला ने गंभीर स्वर में कहा।

"आखिर क्यों?"

"परिवार सुरक्षित रहे, इसलिए।"

"लेकिन कुछ दिनों के पश्चात् पीड़ित महिलाओं में से एक स्त्री ने शिकायत दर्ज की। सबकुछ साझा किया।"

"न्याय मिला उसे?"

"नहीं। वह जीकर भी मरी हुई है। सिर्फ परिवार की खातिर जिंदा है बस! लेकिन उसने हार नहीं मानी। न्याय के लिए लड़ रही है वह व्यवस्था के विरुद्ध।"

"लड़ना ही होगा। उसने हार मानी तो हिंसाचार बढ़ता ही जाएगा स्त्री पर।"

"उसने मन में तय किया है कि मैं गुनहगार को फाँसी की सजा दिलाकर रहूँगी।"

"हाँ, सही में मिलनी भी चाहिए। ऐसा नहीं हुआ तो उसका न्याय व्यवस्था से विश्वास उठ जाएगा।"

"वह न्याय माँगने हेतु दिन-रात भटक रही है। इतने माह हुए, लेकिन कुछ नहीं हुआ। न्याय व्यवस्था से विश्वास उठा है उसका।"

इरोम चानू शर्मिला, उनको न्याय दिलाने हेतु कार्य करते रहेंगे हम निरंतर। उसके साथ खड़े रहेंगे डटकर। जब तक उन्हें न्याय नहीं मिलता, संघर्ष करते रहेंगे। जिस दिन उन दरिंदों को फाँसी की सजा मिलेगी, तभी हम समझ लेंगे भारत में लोकतंत्र है।

बहुत समय हुआ, अब में चलती हूँ। गाँव की महिलाओं से चर्चा करनी है समस्या के संदर्भ में। खुद का खयाल रखना इरोम चानू शर्मिला, क्योंकि वर्तमान समय बहुत खराब है स्त्री के लिए।

साअ

हिंदी विभाग, श्री आसारामजी भांडवलदार कला,
वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालय,
देवगाँव रंगारी, तहसील-कन्नड,
छत्रपति संभाजी नगर-४३१११५ (महा.)
दूरभाष : ९०२२५६१८२४

वर्ग पहेली (२१७)

अगस्त २००५ अंक से हमने '**वर्ग पहेली**' प्रारंभ की, जिसे ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे थे; उनके देहावसान के उपरांत अब **श्री ब्रह्मानंद खिच्ची** इसे तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३१ मई, २०२४ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें तीन सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते जुलाई २०२४ के अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर '**वर्ग पहेली**', **साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (२१५) का शुद्ध हल

हो	ली	■	फा	■	क	र्म	भू	मि
स्ट	■	म	हा	भो	ज	■	ख	ल
ल	हू	■	■	■	न	■	■	न
■	र	वि	दा	स	■	चा	ली	सा
रं	■	वा	द	वि	वा	द	■	र
ग	वा	ह	■	ता	म	र	स	■
गु	■	■	ठि	■	■	■	ब्र	ज
ला	र	■	ग	ड़	ब	ड़	■	ले
ल	ट्ठु	हो	ना	■	स	■	बाँ	बी

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **डॉ. सुनीता सिंह मरकाम**
शास. इंदिरा गांधी गृहविज्ञान कन्या विश्वविद्यालय, शहडोल (म.प्र.)
दूरभाष : ९५७५१५५६१०

२. **श्री तपन शर्मा**
४३-५२-०३, सुभाष लेन
वरुण पथ, मानसरोवर
जयपुर-३०२०२० (राज.)
दूरभाष : ९७९९०६६६४५

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई।

वर्ग-पहेली २१५ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री अक्षत कुमार (पलवल), पूजा शर्मा (रायपुर), फकीरचंद ढुल (कैथल), संतलाल रोहिल्ला (कनीना), पवन कुमार, अंकिता, बाल कुमार मास्टर (महेंद्रगढ़), विजयपाल सेहलंगिया (सेहलंग), प्रभात कुमार गुप्ता (गोवा), हरदेव सिंह धीमान् (शिमला), नीरजा शर्मा, सुधांशु शेखर बक्शी (अहमदाबाद), मंजू सिंह पटेल (सिंगरौली), विनीता सहल (मुंबई), वाई.के. श्रीवास्तव (जबलपुर), बद्रीलाल व्यास (राजगढ़), रेणु मिश्र (जयपुर), प्रमीला पाडिया (फरीदाबाद), रुक्मणी संगल (पटियाला), माला श्रीवास्तव (नोएडा), दिनकर सहल, सुभाष शर्मा, प्रदीप कुमार, राजेंद्र कुमार (दिल्ली)।

बाएँ से दाएँ—

१. जो किसी का अदब न करता हो (४)
४. कामयाबी, सिद्धि (४)
८. घासयुक्त समतल मैदान (२)
१०. राजा विराट का साला (३)
११. हलकी फूली हुई रोटी (३)
१३. मान, प्रतिष्ठा, इज्जत (३)
१६. परमेश्वर, ईश्वर, जगतपति (४)
१७. छंद के अंतिम अक्षर का मेल, सामंजस्य (२)
१८. एक सफेद घटिया धातु (३)
१९. रुक-रुककर बोलने वाला (३)
२१. स्त्रियों की चोटी (२)
२२. नजर बचाकर निकल जाना (४)
२५. हाशिया, तट, तीर (३)
२६. यमुना (३)
२८. कार्य का अधिकार क्षेत्र, घेरा (३)
३०. मनुष्य-संबंधी, गरदन (२)
३२. पारा (४)
३३. प्रधानता, तरजीह (४)

ऊपर से नीचे—

२. वायु, हवा, पवन (३)
३. आपत्ति, आफत, भूतप्रेत की बाधा (२)
५. निर्धन व्यक्ति, भिक्षुक (३)
६. लचकने की क्रिया या भाव (२)
७. छिपकर देखने की क्रिया, निगरानी (४)
९. धन, रोकड़ (३)
११. पाँव, लंबाई की एक माप (२)
१२. कालिख, सुरमा (३)
१४. एक प्रसिद्ध हिंदू त्योहार (४)
१७. निगलना, हड़पना (४)
१८. तराजू, काँटा, एक राशि (२)
१९. सोने का अंग्रेजी सिक्का (२)
२०. घोड़े का जुकाम (३)
२१. फावड़ा चलाने वाला मजदूर (४)
२३. नगमा, गीत (३)
२४. दिमाग, मगज (२)
२५. पंसारी की दुकान पर बिकने वाली चीजें, परचून (३)
२७. जीत, फतह (३)
२८. पत्नी, भार्या (२)
२९. हाँ की अंग्रेजी (२)
३१. ध्वनि, शब्द, शोर (२)

वर्ग पहेली (२१६) का हल अगले अंक में।

वर्ग पहेली (२१७)

१	२		३	■	४	५	६	७
■		■	८	९	■	१०		
११		१२	■	१३	१४		■	
	■	१५	१६			■	१७	
■	१८			■	१९	२०		■
२१		■	२२	२३			■	२४
	■	२५			■	२६	२७	
२८	२९		■	३०	३१	■		■
३२				■	३३			

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

दूरभाष : .....

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का अप्रैल अंक अपनी नवीनता के साथ विभिन्न आलेख, संस्मरण, काव्य ज्ञानवर्धक एवं रोचक जानकारियों तथा कहानियों से परिपूर्ण है। महेश चंद्र द्विवेदीजी की 'एक और मनु-शतरूपा' कहानी बहुत ही सुंदर एवं रोचक शिल्प में है। प्रशांत उपाध्याय की गजलें एक से बढ़कर एक सुंदर, परंतु ये गजलें नहीं, हिंदी में गजल की विधा पर लिखी गई रचना 'गीतिका छंद' कहलाती है। गजल के विधान में उर्दू शब्दों का ही रचना में प्रयोग होता है। 'घायल बसंत' पूरन सरमाजी द्वारा बहुत ही यथार्थ, सार्थक एवं रोचक व्यंग्य लिखा गया है।

—कुलभूषण सोनी, दिल्ली

'साहित्य अमृत' का मार्च अंक हाथ में आते ही आकर्षक मुखपृष्ठ मन को गुलाल सा सराबोर कर गया। 'साहित्य अमृत' अपने नाम के अनुरूप साहित्य की विभिन्न विधाओं का भरपूर अमृतपान कराता है। इस अंक में प्रकाशित हर एक रचना उम्दा है, जिसे पढ़कर जानकारी मिलती है और लेखन की बारीकियाँ सीखने को मिलती हैं। संपादकीय में फिल्मी भक्ति गीतों, प्रार्थना, दर्शन-अध्यात्म, मानवीय रिश्तों एवं प्रेम गीत के जो उदाहरण दिए हैं, वास्तव में ये गीत आज भी हमारे दिल को छूते हैं। गीतकार गुलजार को ज्ञानपीठ मिलने को खुले मन से स्वीकार करने की जरूरत है। भक्ति की शक्ति को बताता और वाल्मीकि रामायण के अनुसार भद्राचलम, जिसे 'दक्षिणी अयोध्या' कहा गया है, के बारे में जानकारी देने के लिए लेखिका पद्मावतीजी का बहुत आभार। रत्नावली पर प्रकाश डालता लेख 'तुलसी पद की प्रवर्तक रत्नावली' से बहुत जानकारी मिलती है। राजशेखर व्यासजी का आलेख 'तब समझ पाता हूँ मेरी माँ के राम' को पढ़कर लगा कि अधूरे ज्ञान से जो लोग श्रीराम पर आक्षेप लगाते हैं, उन्हें समझने की जरूरत है। गोपाल चतुर्वेदीजी का 'पेड़ की पीड़ा' मौजूदा शहरीकरण प्रवृत्ति, भू-माफिया, राजनीति को जोड़ता एक प्रभावशाली लेखन है, जो आत्म विश्लेषण को मजबूर करता है। बाल स्वरूप राहीजी के गीत-गजल बहुत अच्छे लगे। सच कहूँ तो इस अंक में प्रकाशित सभी आलेख, कविताएँ, कहानियाँ, व्यंग्य एवं लघुकथाएँ प्रभावशाली और सुंदर हैं; कुछ ने आह्लादित किया, कुछ ने सोचने को मजबूर किया और कुछ ने ज्ञानवर्द्धन किया। वास्तव में पत्रिका में छपना बड़ी बात है। महीनों इंतजार के बाद यात्रा-वृत्तांत प्रकाशित रूप में देख बहुत प्रसन्नता हुई, संपादक मंडल का बहुत-बहुत आभार।

—शेफालिका सिन्हा, बेंगलुरु (कर्नाटक)

'साहित्य अमृत' भक्ति और शक्ति के प्रतीक मुखपृष्ठ वाला अप्रैल का अंक मिला। प्रतिस्मृति में कथाकार मन्नू भंडारी की कहानी 'मैं हार गई' मन को छू गई। कहानियों में मीना अग्रवाल की 'नैनी भाई', महेश चंद्र द्विवेदी की 'एक और मनु-शतरूपा', ओम उपाध्याय की 'वह बूढ़ा आदमी' पठनीयता और रोचकता से भरपूर लगीं; ये पाठक को अपने साथ बाँधे रखती हैं। अरुण कुमार जैन की लघुकथाएँ मारक और प्रेरक लगीं। दुर्गादत्त ओझाजी हमेशा शोधपरक और जनोपयोगी लेख लिखते हैं। आज जल प्रदूषण की समस्या विकट है, ऐसे में उनका आलेख जल शोधन की कई युक्तियाँ सुझाता है। उत्कर्ष अग्निहोत्री का 'चंदन वन के यात्री : विष्णुकांत शास्त्री' उनके व्यक्तित्व के अनेक आयाम उजागर करता है। माणक तुलसीराम गौड़ का 'कस्तूरी कुंडल बसे' बहुत जानकारीपरक लेख है। प्रशांत उपाध्याय की गजलें आला दर्जे की हैं। डॉ. श्रीधर द्विवेदी का गीत 'रामजी आए अवध के द्वार' भावपरक और गौरवान्वित करनेवाला है। राम साहित्य के पर्याय डॉ. रमानाथ त्रिपाठी के जाने के साथ एक युग का अवसान हो गया; डॉ. शकुंतला कालरा ने उन्हें बड़े सम्मान और श्रद्धा के साथ स्मरण किया है। हरीश नवल का संस्मरण बहुत छोटा, परंतु बेहद मजेदार लगा। पूरन सरमा के व्यंग्य हमेशा मारक होते हैं। सोनल मंजू श्री ओमर ने हमें भी वीरांगना लक्ष्मीबाई के पावन तीर्थ की यात्रा घर बैठे ही करवा दी। कुल मिलाकर पूरा अंक ही पठनीय और रोचक सामग्री से भरपूर है।

—रामप्रकाश राय, गोरखपुर (उ.प्र.)

मनोरम आवरण पृष्ठ के साथ 'साहित्य अमृत' का अप्रैल अंक प्राप्त हुआ। संपादकीय 'लोकतंत्र का विराट् उत्सव' लोकतंत्र के सबसे बड़े पर्व लोकसभा चुनाव को ध्यान में रखकर हम पाठकों को परोसा गया है, जो अच्छे जनप्रतिनिधि के चुनाव में एक मार्गदर्शक का कार्य करेगा। मन्नू भंडारी की कहानी 'मैं हार गई' मन की गहराई में उतर गई। अरुण कुमार जैन की लघुकथा 'धुँधली चमक' लघु होने के बावजूद बहुत बड़ा संदेश दे रही है। रवींद्र कुमार उपाध्याय की 'रामावली' पढ़ आनंदित हुआ। दुर्गादत्त ओझा का आलेख ज्ञानवर्धक तो है ही, साथ ही यह हमें अपनी प्राचीन पद्धतियों पर गौरवान्वित भी करता है कि हमारे पूर्वज कितने ज्ञानी थे। राजेंद्र शर्मा रामायणी का आलेख 'भगवान् श्रीराम मानवपात्र के आदर्श' शीर्षक को चरितार्थ करता है। प्रमोद कुमार अग्रवाल का आलेख 'राम का प्रबंधन' श्रीराम से प्रबंधन का गुण सिखाता है। श्रीधर द्विवेदी की कविता 'रामजी आए अवध के द्वार' राम नवमी पर श्रीराम को समर्पित स्वागत गान है। नर्मदा प्रसाद सिसोदिया का ललित-निबंध भावपूर्ण है। पंजाबी कहानी 'इश्क मलंगी' प्रेम, करुणा, दया, भाव आदि से पूर्ण है, जो दिल को छू गई।

—प्रमोद कुमार, मेरठ (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' का शानदार अप्रैल अंक मिला। संपादकीय लोकतंत्र के महापर्व पर अपना कर्तव्य निभाने के लिए प्रेरित करने वाला है। इस अंक की कविताएँ रससिक्त करने वाली हैं, खासकर गौरीशंकर वैश्य विनम्र के दोहे पढ़कर मन आनंदविभोर हो गया। आलेख 'भगवान् श्रीराम मानवमात्र के आदर्श' मानव जीवन के विभिन्न पहलुओं पर अनमोल अंतर्दृष्टि और व्यावहारिक पथ-प्रदर्शन प्रदान करनेवाला है। अन्य सभी आलेख भी सारगर्भित और स्तरीय हैं। इस अंक की कहानियाँ भी उत्तम हैं, जिसमें से महेशचंद्र द्विवेदी की कहानी विशेष लगी। पूरन सरमा का व्यंग्य 'घायल वसंत' आनंददायक है। कुल मिलाकर यह अंक भी ज्ञानवर्धक, पठनीय व संग्रहणीय बन पड़ा है।

—रमेश सिंह, सोनीपत (हरि.)

हिंदू कॉलेज में वार्षिकोत्सव 'अभिधा' का आयोजन

सुप्रसिद्ध कथाकार श्री शिवमूर्ति ने दिल्ली के हिंदू कॉलेज की हिंदी साहित्य सभा के वार्षिकोत्सव 'अभिधा' का उद्घाटन करते हुए 'समय, समाज और साहित्य' विषय पर व्याख्यान दिया। उन्होंने कहा कि सच्चा साहित्य वही है, जो अपने समय के भय और दर्द को लिखे। इससे पहले शिवमूर्तिजी का स्वागत विभाग प्रभारी प्रो. रचना सिंह, डॉ. पल्लव व डॉ. विमलेंदु तीर्थंकर ने अंगवस्त्र भेंट करके किया। मंच संचालन सुश्री श्रुति और श्री ओमवीर ने किया, धन्यवाद ज्ञापन श्री शिवम मिश्रा ने किया। दूसरा सत्र 'अनुवाद की चुनौतियाँ और उसका वर्तमान परिदृश्य' पर केंद्रित रहा। इस विषय पर इटली के तोरिनो विश्वविद्यालय में हिंदी व साहित्य की प्रोफेसर श्रीमती अलेसांद्रा कॉसलारो ने व्याख्यान दिया। प्रो. अलेसांद्रा का स्वागत विभाग प्रभारी प्रो. रचना सिंह और डॉ. नीलम सिंह ने किया। संचालन श्री मोहित और सुश्री शालू ने किया, धन्यवाद ज्ञापन श्री जसविंदर ने किया। वार्षिक प्रतिवेदन पत्रिका 'निरंतर' का विमोचन भी हुआ। अंतिम सत्र सांस्कृतिक कार्यक्रमों का रहा। इसमें विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को सम्मान राशि व प्रमाण-पत्र से सम्मानित किया गया। मंच संचालन सुश्री कृतिका और श्री अनुराग ने किया। धन्यवाद ज्ञापन संयोजक डॉ. नौशाद अली ने किया।

□

श्री निशांत को 'देवीशंकर अवस्थी सम्मान'

५ अप्रैल को दिल्ली के साहित्य अकादेमी सभागार में युवा कवि-आलोचक श्री निशांत को उनकी आलोचना पुस्तक 'कविता पाठ आलोचना' वर्ष २०२३ का 'डॉ. देवीशंकर अवस्थी सम्मान' दिया गया। सम्मान चयन समिति में सर्वश्री मृदुला गर्ग, सुधीर चंद्र, पुरुषोत्तम अग्रवाल, अशोक वाजपेयी और कमलेश अवस्थी थे।

□

संगोष्ठी संपन्न

विगत दिनों फिरोजाबाद में उ.प्र. भाषा संस्थान, लखनऊ द्वारा पंडित श्रीधर पाठक स्मृति समिति के सहयोग से पंडित श्रीधर पाठक की जन्मस्थली जौंधरी में डॉ. रामसनेही लाल यायावर की अध्यक्षता में 'पंडित श्रीधर पाठक की रचनाधर्मिता : खड़ी बोली में ब्रजभाषा का माधुर्य' विषय पर एक संगोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें श्री प्रशांत उपाध्याय ने भूमिका एवं विषय प्रवर्तन किया; श्री बलराम सरस ने अपने विचार रखे। डॉ. मुकेश मणिकांचन ने संचालन किया। श्री अरविंद पथिक ने उनकी रचनाधर्मिता पर प्रकाश डाला। डॉ. रामसनेही लाल शर्मा 'यायावर' ने अध्यक्षीय उद्बोधन में पाठकजी के साहित्यिक योगदान पर चर्चा की।

□

पुस्तक का विमोचन संपन्न

७ अप्रैल को नई दिल्ली के इंडिया इंटरनेशनल सेंटर में सर्वश्री रघु हरि डालमिया और विवेक मिश्र द्वारा संपादित पुस्तक 'मेवाड़ एवं मराठाओं की सहस्र वर्षों की शौर्यगाथा' का विमोचन हुआ। इस कार्यक्रम में पद्मश्री डॉ. मीनाक्षी जैन मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थीं। डॉ. ओमेंद्र रत्नू व श्री श्रीकांत जोशी ने मेवाड़ी व मराठा शूरवीरों के शौर्य, पराक्रम और साहस का जयघोष किया। लेखकद्वय ने कहा कि हमें इतिहास से सीख लेनी चाहिए। पहले इतिहास को प्रामाणिकता से नहीं लिखा गया है। इतिहास में आए गौरव और वीरता-पराक्रम के पलों को विस्मृत करके आक्रांताओं को बहादुर और अच्छे शासक के रूप में दिखाया गया, जबकि मेवाड़ के राजपूत राजाओं ने उन आक्रांताओं को अपने यहाँ कई-कई महीने बंदी बनाकर रखा था। मराठों ने मुगल साम्राज्य को छिन्न-भिन्न कर मरणासन्न कर दिया।

□

डॉ. प्रेम जनमेजय अमृत महोत्सव संपन्न

३१ मार्च को प्रसिद्ध व्यंग्यकार डॉ. प्रेम जनमेजय के यशस्वी ७५ वर्ष पूरे होने के अवसर पर नई दिल्ली स्थित इंडिया हैबिटेट सेंटर में उनके परिवार, हीरक जयंती आयोजन समिति और इंडिया नेटबुक्स ने भव्य आयोजन किया। हीरक जयंती समारोह में डॉ. प्रेम जनमेजय केंद्रित चार पुस्तकों एवं दो पत्रिकाओं का लोकार्पण किया गया। पूरबी पवार द्वारा अनूदित, प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित प्रेम जनमेजय की व्यंग्य रचनाओं के अंग्रेजी अनुवाद 'Have A Laugh My Friend', आचार्य राजेश कुमार, डॉ. लालित्य ललित एवं श्री रणविजय राव द्वारा संपादित 'प्रेम जनमेजय—चरैवेति चरैवेति', 'डॉ. प्रेम जनमेजय के चुनिंदा व्यंग्य', 'मेरी कहानियाँ—प्रेम जनमेजय', प्रेम जनमेजय व्यक्तित्व-कृतित्व पर केंद्रित श्री कृष्ण कुमार आशु द्वारा संपादित 'सृजन कुंज' एवं श्री गिरीश पंकज के आतिथ्य संपादन में 'अनुस्वार' के ताजा अंक 'व्यंग्य यात्रा' आदि का लोकार्पण हुआ। कृतियों के लोकार्पण सर्वश्री ममता कालिया, ज्ञान चतुर्वेदी, पुरषोत्तम अग्रवाल, बलराम, रामशरण जोशी, पूर्व न्यायाधीश शंभूनाथ श्रीवास्तव, पूरबी पवार, प्रभात कुमार, अनिल जोशी, सुभाष चंदर, महेश दर्पण, हरीश नवल, कृष्ण कुमार आशु, अरुण माहेश्वरी, सुरेश ऋतुपर्ण, आशा कुंद्रा, बलदेव त्रिपाठी, पवन माथुर, प्रज्ञा रोहिणी, लालित्य ललित, राकेश पांडेय, सुमन केशरी, शशि सहगल, राजेंद्र सहगल, बलराम अग्रवाल, उपेंद्रनाथ रैना, अलका सिन्हा, रणविजय राव, राकेश कुमार, स्वाति चौधरी, सोनीलक्ष्मी राव, सीमा अग्निहोत्री चड्ढा, तन्वी कुंद्रा, रुचिर, हिमांक आदि ने किए। लगभग ४० से भी अधिक वरिष्ठ साहित्यकारों ने वीडियो के माध्यम से बधाई एवं शुभकामना संदेश भी भेजे।

□

'हँसता बचपन' कृति का विमोचन संपन्न

९ अप्रैल की सृजनाभिनंदनम् द्वारा नई दिल्ली के हिंदी भवन में आयोजित साहित्यिक कार्यक्रम में अभिनेता, कवि, लेखक और चार्ली चैपलिन द्वितीय के रूप में विख्यात डॉ. राजन कुमार की पुस्तक 'हँसता बचपन' का विमोचन किया गया; 'सृजन विभूति सम्मान' और परिचर्चा का आयोजन भी हुआ। डॉ. राजन कुमार ने बताया कि यह कार्यक्रम

प्रसिद्ध साहित्यकार श्री मदन लाल मनचंदा को उनकी जन्म शताब्दी पर समर्पित किया गया। संचालन डॉ. अल्पना सुहासिनी और श्रीमती विभा राज वैभवी ने किया।

□

लोकार्पण एवं चर्चा समारोह संपन्न

विगत दिनों क्षितिज संस्था द्वारा आयोजित श्री अश्विनी कुमार दुबे के कहानी-संग्रह 'आखिरी ख्वाहिश' के लोकार्पण एवं 'समकालीन कथा साहित्य' पर चर्चा के कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए वरिष्ठ साहित्यकार, रवींद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय भोपाल के कुलाधिपति तथा 'विश्व रंग' के निदेशक श्री संतोष चौबे ने कहा कि वामपंथ का पतन १९९० में हो गया था। इसने पूरे कथा परिदृश्य पर बहुत गहरा प्रभाव डाला है। प्रमुख अतिथि के रूप में 'वनमाली कथा' पत्रिका के संपादक श्री मुकेश वर्मा ने अपने इंदौर में निवास के संस्मरणों को याद करते हुए कथा साहित्य पर बातचीत की। कहानीकार श्री प्रकाश कांत ने कहा कि इस कहानी-संग्रह की विशेषता है कि 'आखिरी ख्वाहिश' कहानी के माध्यम से दो राष्ट्रों की स्थिति को लेखक ने प्रस्तुत किया है। कहानीकार श्री किसलय पंचोली ने कहा कि लगातार परिवर्तन और विकास का नाम ही जीवन है। सर्वश्री सतीश राठी, कोषाध्यक्ष सुरेश रायकवार, दीपक गिरकर, बृजेश कानूनगो एवं रश्मि स्थापक के द्वारा अतिथियों का स्वागत किया गया। संचालन श्रीमती रश्मि चौधरी ने किया एवं आभार श्री दीपक गिरकर ने व्यक्त किया।

□

'डॉ. साहित्येंदु' को एकेडेमी सम्मान

२९ मार्च को कादीपुर सुलतानपुर भाषा विभाग उत्तर प्रदेश नियंत्रणाधीन १९२७ ई. में स्थापित हिंदुस्तानी एकेडेमी उत्तर प्रदेश प्रयागराज ने अपने ९७वें स्थापना दिवस पर हिंदी साहित्य-संवर्धन में उत्कृष्ट अवदान के लिए डॉ. सुशीलकुमार पांडेय व डॉ. साहित्येंदु को न्यायमूर्ति विनोद कुमार ओझा तथा एकेडेमी के सचिव डॉ. देवेंद्र प्रताप सिंह ने 'एकेडेमी सम्मान २०२४' से विभूषित किया।

□

तीन पुस्तकों का लोकार्पण संपन्न

१४ अप्रैल को गाजियाबाद में टू मीडिया समूह के कार्यालय में टू मीडिया समूह व महाराज पंडित रामदयाल धाम धर्मार्थ ट्रस्ट, कासगंज के तत्त्वावधान में साहित्यकार डॉ. चंद्रपाल मिश्र 'गगन' की तीन पुस्तकों 'हिंदी काव्य-धारा', 'उद्घाटन के फीते हैं हम' व 'Way To Conversational Ease In English' का विमोचन संपन्न हुआ। अध्यक्षता शीर्ष व्यंग्यकार व आलोचक श्री सुभाष चंदर ने की। मुख्य अतिथि वरिष्ठ व्यंग्यकार श्री प्रशांत उपाध्याय व विशिष्ट अतिथि लेखक-संपादक श्री प्रेमपाल शर्मा रहे। संचालन श्रीमती कीर्ति रत्न ने किया। डॉ. चंद्रपाल मिश्र 'गगन' ने अपनी पुस्तकों की सर्जनात्मक यात्रा को साझा किया। टू मीडिया चैनल व पत्रिका के संपादक श्री ओमप्रकाश प्रजापति ने सभी अतिथियों को शॉल, प्रतीक चिह्न, गंगाजल देकर सम्मानित किया। सर्वश्री अशोक कुमार, बहार हैदर, सचिन चौधरी, ज्ञानेंद्र प्रयागी, सचिन परवाना, रितु रस्तोगी, रुचिका राणा, स्मिता सिंह चौहान, बृजेश गौड़, अंकुर मिश्रा, ललित मोहन जोशी, आशीष गुप्ता, देवेंद्र शर्मा, नयन नीरज, संगीता वर्मा, अर्चना झा, पुनीता सिंह, बबली सिन्हा वान्या, अजीत अनुराग, कुलदीप कौर दीप, शोभित गौड़, प्रिया दीक्षित, भूमिका गौड़, सचिन चौधरी, कामिनी मिश्र को भी प्रतीक चिह्न देकर सम्मानित किया गया। श्री ओमप्रकाश प्रजापति ने आभार व्यक्त किया।

□

पुस्तक लोकार्पण संपन्न

७ अप्रैल को लखनऊ में राजेश्वरी वेलफेयर फाउंडेशन के तत्त्वावधान में गोमती नगर स्थित प्रदेश उर्दू अकादमी में आयोजित विमोचन कार्यक्रम के विशिष्ट आगंतुकों में डॉ. शंभुनाथ (पूर्व मुख्य सचिव), श्री अच्युतानंद मिश्र (पूर्व कुलपति, माखनलाल चतुर्वेदी विवि) एवं प्रो. हरि शंकर मिश्र सम्मिलित हुए। समारोह की अध्यक्षता प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित ने की। अतिथियों का स्वागत प्रो. अभिषेक मिश्र (पूर्व मंत्री उ.प्र. सरकार) द्वारा किया गया। श्री जय शंकर मिश्र की प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित काव्य कृति 'युग गीत उसी के गाएगा··· व डॉ. रश्मशील की कृति 'कुछ चित्र रचें, कुछ रंग भरें : जय शंकर मिश्र की काव्य-यात्रा' का लोकार्पण किया गया। पुस्तकों के रचनाकारों का परिचय डॉ. दिनेश चंद्र अवस्थी द्वारा दिया गया। प्रो. योगेंद्र प्रताप सिंह एवं डॉ. गोपाल कृष्ण शर्मा 'मृदुल' द्वारा श्री जय शंकर मिश्र की रचनाधर्मिता एवं काव्यगत विशेषताओं पर विस्तार से प्रकाश डाला गया।

□

'स्वास्थ्य सुभाषित' कृति का लोकार्पण संपन्न

१५ अप्रैल को लेडी हार्डिंग मेडिकल कॉलेज के मेडिसिन विभाग के तत्त्वावधान में सुप्रसिद्ध हृदय रोग विशेषज्ञ डॉ. श्रीधर द्विवेदी द्वारा रचित-संकलित 'स्वास्थ्य सुभाषित' कृति का लोकार्पण मुख्य अतिथि प्रो. अतुल गोयल (स्वास्थ्य महानिदेशक, भारत सरकार), श्री आलोक कुमार (अध्यक्ष विश्व हिंदू परिषद्) तथा प्रो. धीरज शाह (निदेशक, राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान) के कर-कमलों से संपन्न हुआ। आयोजन का संयोजन तथा सहसंयोजन डॉ. फोटेकर एवं डॉ. अनुपम प्रकाश ने किया। डॉ. श्रीधर द्विवेदी ने बताया कि यद्यपि संस्कृत और अंग्रेजी भाषा में चिकित्सा सुभाषितों के अच्छे संग्रह देश-विदेश में उपलब्ध हैं, परंतु राष्ट्रभाषा हिंदी में ऐसा कोई भी संग्रह उपलब्ध नहीं है। 'स्वास्थ्य सुभाषित' में कुल २३२ स्वास्थ्य सुभाषित हैं और प्रत्येक सुभाषित की वैज्ञानिक व्याख्या तथा उससे संबंधित महत्त्वपूर्ण उदाहरण दिया गया है।

श्री आलोक कुमार ने विगत तीस वर्षों से डॉ. द्विवेदी के स्वास्थ्य सद्प्रयासों की चर्चा करते हुए उनके मानवीय और चिकित्सकीय पक्षों का उल्लेख करते हुए बताया कि हिंदी में 'चिकित्सा सुभाषितों' के अभाव की पूर्ति हुई है और यह अत्यंत उपयोगी अभिनंदनीय प्रयास है। इस अवसर पर बड़ी संख्या में शिक्षक, चिकित्सक, जूनियर डॉक्टर्स, छात्रगण और सामान्य जन उपस्थित थे। डॉ. पुष्पेंद्र वर्मा ने धन्यवाद ज्ञापित किया।

□